मालाणी गौरव ग्रन्थ माला - पुष्प २

प्रधान-सम्पादक — ठा नाहरसिंह

राजस्थान सन्त शिरोमणि
राणी रूपांदे और मल्लीनाथ

लेखक

डॉ डी बी क्षीरसागर

राणी भटियाणी ट्रस्ट, जसोल (बाडमेर)

• *एकमात्र वितरक*
राजस्थानी ग्रन्थागार
प्रकाशक व पुस्तक विक्रेता
सोजती गेट जोधपुर
फोन कार्यालय 623933
निवास 32567

• *प्रकाशक*
राणी भटियाणी ट्रस्ट
जसोल (जिला बाडमेर)

• प्रथम सस्करण जुलाई, 1997

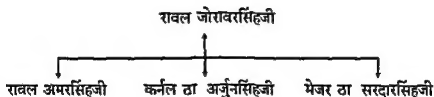
• मूल्य एक सौ पिच्यानवे रुपये मात्र

• *लेजर टाईपसेटिंग*
सूर्या कम्प्यूटर्स, जोधपुर

• *मुद्रक*
आदित्य आफसेट प्रेस 2330 कूचा चालान दरियागंज नई दिल्ली-110002

समर्पण

इस शती के परिवार के महान् सपूत



को

श्रद्धापूर्वक

समर्पित

–कृतज्ञ

सभी जोरावरसिंघोत

विषय-सूची

प्रकाशकीय i iii

भूमिका iv xvi

राणी रूपादे और मल्लीनाथ जीवनगाथा १ ५३

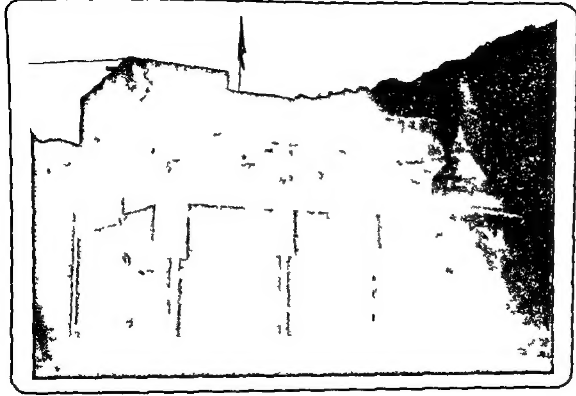
रूपादे की अमृतवाणी ५४ १०६

परिशिष्ट १ रूपादे की रचनाए १०७ १३६

परिशिष्ट २ रूपादे मल्लीनाथ विषयक अन्य कवियों की रचनाए १३७ २३४

परिशिष्ट ३ गुजरात में रूपादे और मल्लीनाथ २३५ २३[illegible]





धारू मेघ की समाधि मेहवा नगर

प्रकाशकीय

राजस्थान के पश्चिमी भूभाग में राठौड़ों की सत्ता के सूर्योदय का साक्षी मालानी प्रदेश इतिहासकारों की दृष्टि में समुचित स्थान नहीं पा सका। राठौड़ सत्ता को दृढ़मूल बनाने के लिये इस वंश के पूर्व पुरुषों ने मरण को मंगल मानते हुए जिन अनवरत युद्धों का स्वागत किया उनकी वीर गाथाएं चारणों की बहियों में ही छिपी रहीं। सम्भवतः इसीलिये राव चूण्डा की सत्ता प्राप्ति से पूर्व का इतिहास धूमिल होता गया।

मालानी के इतिहास और संस्कृति को जानने और जानकर उसे जनता-जनार्दन के सामने रखने का संकल्प मैंने कब किया यह अब ठीक से याद नहीं है। रानी भटियाणी माँ की कृपा और न्यास के सदस्यों के सहयोग से बहियों में छिपी वीर गाथाओं को ढूंढने उन्हें संकलित करने तथा अन्ततोगत्वा उन्हें मुद्रित करने का दायित्व मैंने मेरे अनन्य मित्र राजस्थानी के मूर्धन्य विद्वान् और राजस्थानी साहित्य संगम बीकानेर के अध्यक्ष श्री सौभाग्यसिंहजी शेखावत को सौंपा। श्री शेखावत के सहयोग से हमारा यह प्रयास मालानी गौरव ग्रन्थमाला के रूप में प्रकाशित हुआ। इस प्रकाशन के साथ ही मालानी का क्रमबद्ध राजनीतिक इतिहास तैयार कराने की मेरी इच्छा और भी अधिक बलवती होती गयी।

राजनैतिक इतिहास के लेखन का कार्य मेरे आग्रह पर डॉ हुकमसिंह भाटी ने स्वीकार किया और इस प्रकार के इतिहास की एक रूपरेखा भी तैयार हुई। परन्तु मुझे सदा लगता रहा कि उसमें अब भी कुछ जोड़ने की आवश्यकता है खास कर मालानी के समस्त उपलब्ध अभिलेखों का उपयोग मालानी की समय समय पर बदलती रही भौगोलिक और सांस्कृतिक सीमाओं को तय किये बिना नहीं किया जा सकता। मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि अलीगढ़ विश्वविद्यालय के इतिहास विभाग के प्राध्यापक डॉ भंवर भादानी इस कार्य में विगत वर्ष से लगे हुए हैं यथाशीघ्र वे अवश्य ही इसे पूरा कर लेंगे।

सांस्कृतिक इतिहास को जाने बिना किसी प्रदेश का राजनैतिक इतिहास समग्र दृष्टि से स्पष्ट नहीं हो पाता। मालानी के यशस्वी शासक मल्लीनाथ शासक के रूप में कम और एक पीर या औलिया के रूप में अधिक माने जाते हैं। स्वयं मल्लीनाथ [illegible]

रानी रूपादे ने जनता के उपेक्षित वर्ग को अपने गले से लगाते हुए कैसे भक्तिमार्ग की ओर उन्मुख किया यह जान बिना और भरतवंशीय शासकों की तरह समस्त अर्जित राज्य राव चूडा को देकर क्षत्रिय का आदर्श कैसे उपस्थित किया इसे समझे बिना यहाँ के इतिहास के अध्ययन का दरअसल प्रारंभ ही नहीं होता।

मारवाड की जनता राणी रूपादे को तारा दे सज्या दे और द्रौपदी के समान त्यागी और भक्त मानती है। रूपादे ने केवल अपने पति मल्लीनाथ को ही अपने पथ में दीक्षित नहीं किया अपितु उनके साथ जन कल्याण के लिये समर्पित हुई। सच मानिये तो उसने राठौड कुल का आध्यात्मिक उद्धार किया। इसलिये मालानी के क्षेत्र में यह गीत जन जन द्वारा गाया जाता है—

असी न कोई चीतोड सीसोदिया आगणे
जिका कोरम परे न को जाणी।
आ हुई माल रे पर अरधगा
रूपादे राणिया सिरे राणी॥

उसने स्वय को और मल्लीनाथ को कलियुग में अचल स्थान पर प्रतिष्ठित किया—

इण कटू बिचाले माल रूपा अचल
जोन सह देव होवे परस जाय।

रूपादे ने समाज के नियम से ही निम्नस्तर के व्यक्तियों को साथ लेकर ज्ञान का जम्मा जगाया भक्ति का आजीवन जागरण किया। उसके पद और वाणियाँ मेघवालों और अन्य लोगों के द्वारा आज भी गायी जा रही हैं। रूपादे के कुछ पद और बेल प्रकाशित हैं कुछ मौखिक परम्परा में ही सुरक्षित हैं इनके सकलन का इससे पूर्व कभी प्रयास नहीं किया गया। रूपादे के समस्त साहित्य का अध्ययन उसके जीवन और भक्ति के इस रूप का निरूपण अब तक नहीं हुआ था।

रूपादे और मल्लीनाथ की भक्ति का प्रभाव आज भी सुदूर कच्छ भुज में दिखायी देता है। रूपादे के अध्ययन में इस प्रभाव को और वहाँ की जन आस्था को बिना चर्चा किये छोड देना उचित नहीं था। अत इस पुस्तक के लेखक को कच्छ यात्रा करना भी अनिवार्य था।

मेरे आग्रह पर डॉ क्षीरसागरजी ने रूपादे मल्लीनाथ विषयक इतिहास–उनकी भक्ति और दर्शन–का प्रारम्भ किया अध्ययन अब पूरा हो रहा है। दरअसल दादू और कबीर से भी पूर्व नाथ सम्प्रदाय की लीक से हटकर रूपादे ने निर्गुण भक्ति की जो अविरल धारा प्रवाहित की है उसमें पाठक को आकठ अवगाहन कराना ही इन पृष्ठों का अभीष्ट है।

पुस्तक में सगृहीत राजस्थानी पदों की शुद्धता को बर करार रखने में डॉ शक्तिदानजी कविया ने हमें सहयोग दिया। सर्वे कार्य में श्री रामनिवासजी शर्मा एव श्री बैरीसालसिहजी खडप ने काफी कष्ट उठाया है। ट्रस्ट के सदस्यों के सहयोग के बिना एक कदम भी चल पाना असभव होता। इन सभी के प्रति मैं कृतज्ञ हूँ। रावल किशनसिंहजी लेज हणूतसिंहजी मेजर ठा जसवन्तसिंहजी ठा डूगरसिंहजी ठा फतेहसिंहजी ठा आनन्दसिंहजी ठा गणपतसिंहजी ठा होरसिंहजी ठा चैनसिंहजी एव मेरे भतीजे प्रवीण व नरेन्द्र व सभी परिवार के सदस्यों के सहयोग एव प्रोत्साहन एव सद्भावना हेतु आभारी हूँ। इसी तरह डॉ नवलकृष्णजी तथा श्री सुखसिंहजी भाटी का भी उनसे प्राप्त सहयोग के लिये मैं आभारी हूँ।

"मालानी गौरव ग्रन्थ माला" के द्वितीय पुष्प के रूप में रूपादे और मल्लीनाथ की जीवन कथा और भक्ति की गाथा आपके हाथों सौंपते हुए मुझे होने वाली प्रसन्नता को अभिव्यक्त करने की मेरी शब्द सामर्थ्य नहीं है। यह रूपादे गाथा आपके स्वरों में गुजायमान होकर दिगन्त को पवित्र कर सकेगी यह मेरा विश्वास है।

—ठा. नाहरसिंह

भूमिका

गीर्वाण भारती का कवित्व यह कहते थकता भी कैसे न हि मानुषात् श्रेष्ठतर किंचित्। मनुष्य होने से बढकर कोई भी श्रेष्ठ नहीं है। आत्मकल्याण के साथ विश्वकल्याण का चिन्तन इसी मनुष्यत्व की देन है। यह कल्याण कैसे प्राप्त करें यह चिन्तन हर सस्कृति में हर भू भाग में प्रस्तावित होता रहा। मनुष्य जीवन का लक्ष्य क्या होना चाहिये और समाज सुसस्कृत कैसे रह सकता है इस पर भारतीय मनीषियों ने गहरा चिन्तन किया और मनुष्य जीवन के धर्म अर्थ काम और मोक्ष इन चार लक्ष्यो की प्राप्ति के लिये कर्मानुसार समाज को विभाजित किया। मनुष्य की शारीरिक और बौद्धिक क्षमता के क्रमिक विकास और ह्रास के आधार पर जीवन को चार भागों में ढालकर जीवन का प्रत्येक क्षण श्रमयुक्त बनाने का सकल्प किया ये ही वे चार आश्रम हुए। प्रत्येक क्षण अपने साथ समाज और राष्ट्र के अभ्युदय और निश्रेयस के लिये समर्पित हुआ। हर पल व्यक्ति को यह आभास कराता रहा कि उसका अन्तिम लक्ष्य अभ्युदय नही नि श्रेयस है। वह मानव है किन्तु देवयु देवत्व की कामना और उसकी प्राप्ति के लिये ही उसे यह जन्म मिला है। देवयु बनने की धारणा ने ही भौतिकता का नकार दिया और समाज में दिव्यत्व की स्थापना की। परन्तु समाज को दिव्यत्व में परिवर्तित करने की मनीषियों की यह कथा अनेक व्यथाओं से घिर गयी।

अपनी क्षमता और इच्छा के अनुसार कार्य को स्वीकार कर सम्बधित वर्ण को स्वीकार करने की स्वतत्रता पर धीरे धीरे अकुश लगने लगे और वर्ण जन्म के आधार पर तय होने लगा। साथ ही धर्म के वितान में मनुष्य के देवयु स्वरूप का आभास क्षीण हुआ और ऐहिक जिज्ञासाओं मे सराबोर हुए समाज मे विकृतियां हावी होने लगी। समाज के नेता और उनकी व्यवस्थाओं के प्रति विरोध का स्वर गूजने लगा। ब्राह्मण धर्म वैदिक यज्ञ याग और उसके सैद्धान्तिक और प्रायोगिक स्वरूप पर प्रश्न चिह्न लगने लगे। सम्पूर्ण समाज को साथ ले चल सकने योग्य सामाजिक व्यवस्था अव्यवस्थित हुई उसके आधार खोखले हो गये उसका टूट जाना ही उचित था।

वर्णाश्रम व्यवस्था के यों टूट जाने से बिखरे समाज मे फिर अशान्ति के धुधल

के में हिसा घर करने लगी आत्मविश्वास डिगने लगा सारा ससार दुःख मूलक दिखाई देने लगा। वेद धर्म व्यवस्था को इस स्थिति में बुद्ध और महावीर ने ललकारा और नये सिद्धान्तों पर नये आदर्शों पर समाज को प्रतिष्ठापित करने का फिर से श्री गणेश हुआ। परन्तु इन मतों के विरक्ति मूलक स्वरूप का प्रवृति मूलक ससार में वैसा स्वागत न हो सका जैसा इनके आचार्यों को अभीष्ट था। दर असल ये लोग पारलौकिक कल्याण को लेकर चले ऐहिक ससार को कैसे सुखमय बनाया जा सकता है इस महत्वपूर्ण पहलु पर इन्होंने चिन्तन नही किया। निष्कामत्व ही अलौकिकता देवत्व की ओर प्रवृत हो सकता है सकामत्व नहीं और ऐहिक उपभोग का पर्याप्त अनुभव ही उसके उपशमन में व्यक्ति को प्रवृत कर सकने मे सक्षम हो सकता है इस तथ्य को उन्होंने स्वीकार नहीं किया। अकाल सन्यास इच्छाओं के दमन की घोषणा सिद्ध हुई। आचार के धरातल पर उसके थोथेपन का अनुभव समाज को होने लगा और समाज का एक बडा वर्ग फिर से पुनर्मूष को भव की तरह उसी मार्ग में प्रवृत होने का प्रयास करने लगा जिसे उसने सदियों पूर्व छोड दिया था।

किन्तु उस विस्मृत मार्ग के अनुयायियों के वर्ग में अपने लिये उन्हें कोई स्थान बना पाना अब दुष्कर था। ऊपर मैंने जिस ऐहिक लिप्सा का सकेत किया है उसने समाज को ब्राह्मणादि चार वर्णों तक सीमित नहीं रहने दिया। रजोगुण प्रधान मनुष्य की वासना कैसे किसी वर्ग तक किसी को सीमित रहने देती? भगवद्गीता में जिस वर्णसकर का सदर्भ है न जाने कब का सूत्रपात होकर वह विष वृक्ष की तरह सर्वत्र व्याप्त हो गया। जाने कितनी जातिया और उपजातिया हो गयी शास्त्रों मे वर्णित आठ प्रकार के विवाह उनके वर्गीकरण का एक हास्यास्पद प्रयास सिद्ध हुआ। समाज का अधिकाश वर्ग इसी विकास परम्परा के परिणाम के रूप मे सामने आया। न वह ब्राह्मण था न क्षत्रिय न वैश्य और न शूद्र ही पर था वह इन्हीं का समवाय रूप वह कहीं से ब्राह्मणत्व लिये हुआ था तो कही से शूद्रत्व। यह न किसी वर्ण के अन्तर्गत आ सकता था न ही किसी आश्रम व्यवस्था में स्वय को नियमित कर पाता। अत चार वर्णों से अलग थलग पडे इस वर्ग को अतिवर्णाश्रमी" सबोधित किया गया।

अपने साथ रह रहे इन अतिवर्णाश्रमियों और उनके कार्यकलापों को देखकर बाह्यत श्रुतिप्रणीत मार्ग का अनुसरण करने वाले भी अपने अन्तर में कही उसके प्रति अश्रद्धा और अनिष्ठा का भाव महसूस करने लगे। श्रुति परम्परा उपनिषद् तक विकसित होकर अपने चरम पर आकर रुकी। इतिहास और पुराणों की रचना हुई स्मार्त अनुष्ठान श्रौत कर्मों का स्थान लेंगे। श्रौत स्मार्त से भिन्न एक आराधना पद्धति की खोज जारी थी तब तंत्र उपासना का प्रारंभ हुआ। शक्ति के उपासक शाक्त शिव के शैव और विष्णु के उपासक वैष्णव उपासना मे समर्पित हुए इन्होने नये तांत्रिक मार्ग का अनुसरण करना शुरू किया। त्रैवर्णिक स्वय इस उपासना से अलग रहने का भरसक प्रयत्न करते रहे उतने ही अतिवर्णाश्रमी इस आर अधिक आकृष्ट हुए। त्रैवर्णिकों को यह मार्ग अनुकूल नहीं लगा उसमें उनकी

सदियों की प्रतिष्ठा गिरती थी इसलिये इस तत्र मार्ग को वाम मार्ग बताया गया। सर्वसाधारण के लिये उसका निषेध जितना प्रबल हुआ उतना ही साधारण से साधारण जन भी उस उपासना में स्वय को ढालने लगा। अतिवर्णाश्रमी का वह आलम्बन सिद्ध होने लगा।

तत्र की उपासना से मिलने वाली अतिमानवीय चमत्कारिक सिद्धियों से अपने जीवन को सुख से परिपूर्ण करने की होड सी लग गयी। विशेषकर बगाल नेपाल में इसका प्रचार भी बहुत हुआ। परन्तु तत्र की दुष्कर साधना और थोडी सी चूक होने पर होने वाली अत्यधिक हानि से लोग भयभीत हुए। दूसरे तत्रों ने यज्ञयाग और बलि के रूप को भी एक निश्चित सीमा तक स्वीकार किया यानी वे वेदधर्म से मूल रूप से कहीं न कहीं जुडे रहे और सभवत इसी कारण जन सामान्य से यह उपासना अलग थलग पड गयी। समाज की स्थिति ऐसी हो गई कि कोई श्रुति परम्परा को मानता कोई शाक्त तत्र को तो कोई शैव तत्र को। कुछ लोग ऐसे भी थे जो मूक दर्शक रह गये। व्यामोह की यह स्थिति तब तक बनी रही जब तक मत्स्येन्द्रनाथ के शिष्य गुरु गोरखनाथ प्रकट नहीं हुए। इस समय तक भारत मे पर्याप्त रूप में विदेशियों का आगमन हो चुका था और समाज मे व्याप्त व्यामोह को उन्होंने और उलझा दिया था।

श्रुति अथवा श्रौत धर्म था तो बद्धमूल पर उसके अनुयायी और उसे न मानने वाले भी दुविधा में पडे थे। स्मार्त परम्परा ने भी जिन्हें स्वीकार नहीं किया ऐसे अन्यान्य तात्रिक उपासनाओं में भटके लोगों को और खास कर उन लोगों को जो विदेशियों के धर्म को स्वीकार कर धर्मान्तरित होते जा रहे थे गोरखनाथ ने अपने झडे के नीचे इकट्ठा करना आरम्भ किया। नाथ मत में न किसी जाति का बधन था न किसी धर्म का चाहे पुरुष हो या स्त्री। इसलिये जिन्हें किसी वर्ण ने स्वीकार न किया जो अपनी कोई जाति नहीं बता सकते थे अपना इहलोक सुधारने के लिये जिनके पास कोई प्रशस्त मार्ग सुलभ नही था वे सब नाथानुयायी होते गये।

यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे के सिद्धान्त पर आधारित नाथ जीवन प्रणाली में योग हठयोग को बडा महत्व दिया गया और सुप्त कुण्डलिनी को जागृत कर सहस्रार का भेदन कर अपने मस्तक में प्रचण्ड प्रकाशमय ब्रह्म के दर्शन करना योगी का लक्ष्य होता है। नाथ सम्प्रदाय ने स्वीकार तो सब लोगों को किया परन्तु स्वय को उसके लिये योग्य सिद्ध करना हर एक के बस की बात नहीं थी। योग के लिये ब्रह्मचर्य और लौकिविषयक अनासक्ति पहली शर्त थी और कामिनी के क्रोड में पलने वाले विषय वासनाभिभूत सामान्य व्यक्ति के लिये वह असम्भव था।

समस्त उत्तर भारत में मानो नाथ सम्प्रदाय की एक लहर चली। वर्तमान राजस्थान का भूभाग उससे बच नहीं पाया। मेवाड के बाप्पा रावल और उनके गुरु हारीत ऋषि के द्वारा प्रचारित लकुलीश सम्प्रदाय व आबू के परमारों की शैव उपासना ने भाटी शासकों के गुरु के रूप में राजस्थान में आये नाथों को लोकप्रियता का सिरे दरवाजा ही खोल

दिया। नाथ सम्प्रदाय सबके लिये खुला था हिन्दू हो या मुसलमान इससे धर्मान्तरण पर कुछ रोक लगी और न हिन्दू न मुसलमान वाली जीवन पद्धति को प्रश्रय मिला। राजस्थान के प्रसिद्ध पाबूजी रामदेव आदि पाँच पीरों की लोकप्रियता को भी इसी के मूल में देखना चाहिये।

योग की महिमा जानते हुए भी उसकी कठिनता का अनुभव करने पर उसके अनुयायियों जिनमें अतिवर्णाश्रमी और विधर्मियों की बहुलता थी ने अपनी उपासना के लिये नये नये तरीके खोजने शुरू किये। इससे नाथ सम्प्रदाय में अनेक विकृतिया आ गई और धीरे धीरे नाथ पीठ भोग पीठों में परिवर्तित होते गये। विशेषकर मारवाड में जोगी जगम गुसाई सेवडा कालबेलिये आदि जातियों में नाथ के विकृत स्वरूप को हम आज भी देख सकते हैं। इन लोगों ने नाथों के बाह्य स्वरूप को बनाये रखा। परन्तु नाथ सम्प्रदाय के यों टूटते रहने से नाथों की उपासना पद्धति वैदिक कर्मकाण्ड और तात्रिक उपासना के सस्कारों ने समाज में अनेक प्रकार की साधना पद्धतियों को जन्म दिया क्यों की सनातन काल से चली आ रही मनुष्य की देवयु बनकर दिव्यत्व प्राप्त करने की कामना अभी मरी नहीं थी। इन साधनाओं को हम लोकसाधना कह सकते हैं। मारवाड में प्रच्छन्न रूप से चला कूण्डापथ भी इन्हीं लोकसाधनाओं का एक प्रकार कहा जा सकता है जिससे रूपादे और मल्लीनाथ किसी न किसी प्रकार से जुडे रहे हैं।

राष्ट्र रक्षा और जनकल्याण का कार्य करते हुए शरीर के क्षीण होने पर वानप्रस्थी होकर वृक्ष की शाखाओं का आश्रय लेने वाले भरतवशी क्षत्रियों की तरह मारवाड के राठौड वश के यशस्वी शासक के रूप में प्रसिद्ध मल्लीनाथ "मालो रावल पीर" नाम से जनश्रद्धा के प्रिय पात्र बने। राजस्थान का दक्षिण पश्चिमी भू भाग उन्ही के नाम पर मालाणी कहलाया। सुल्तान की सेना के तेरह मोंचों के साथ लडने वाले दिल्लीश्वर को अपनी चतुराई और बाहुबल से प्रसन्न कर गुजरात विजय कर इतिहास में अमर हुए दुर्धर्ष योद्धा मल्लीनाथ ने अपना राज्य अपने भतीजे चूँडा को देकर किस प्रकार राठौड शासन को मारवाड में स्थिर किया यह बात इतिहासविदों के लिये नयी नहीं है पर स्वार्जित प्रदेश को यों छोड देना आसान नहीं था। वि १३८५ १४५६ उनके जीवन सघर्ष और विरल जीवन की अवधि माना जाता है। प्रसिद्ध पीर बाबा रामदेव के ये न केवल समकालीन थे बल्कि उनके कृपा प्रसाद से अनुग्रहीत भी हुए थे और अपनी उपासना और तपस्या से अनेक चमत्कारिक सिद्धिया उन्हें प्राप्त हो गयी थी। उनका क्षात्र तेज विरक्ति से कैसे अभिभूत हुआ और उनका जीवन सर्वभूतहिते रत" कैसे हुआ यह चर्चा उनकी पत्नी रूपादे के त्याग भक्ति और अलौकिक विवेचन से प्रारभ करना अधिक उपयुक्त होगा।

मल्लीनाथ और रूपादे के आविर्भाव के बारे म इतिहास से इतर अनेक लोकमान्यताए प्रचलित रही हैं। सभव है कि उनम आसक्ति को देखकर इन्हें गढा गया हो और वे इतिहास की दृष्टि से कहीं न ठहरती हो। पर उनके कार्यों की लोकोत्तरता को देखकर

सदियों की प्रतिष्ठा गिरती थी इसलिये इस तंत्र मार्ग को वाम मार्ग बताया गया। सर्वसाधारण के लिये उसका निषेध जितना प्रबल हुआ उतना ही साधारण से साधारण जन भी उस उपासना में स्वयं को ढालने लगा। अतिवर्णाश्रमी का वह आलम्बन सिद्ध होने लगा।

तंत्र की उपासना से मिलने वाली अतिमानवीय चमत्कारिक सिद्धियों से अपने जीवन को सुख से परिपूर्ण करने की होड सी लग गयी। विशेषकर बंगाल नेपाल में इसका प्रचार भी बहुत हुआ। परन्तु तंत्र की दुष्कर साधना और थोडी सी चूक होने पर होने वाली अत्यधिक हानि से लोग भयभीत हुए। दूसरे तंत्रों ने यज्ञयाग और बलि के रूप को भी एक निश्चित सीमा तक स्वीकार किया यानी वे वेदधर्म से मूल रूप से कहीं न कहीं जुडे रहे और सभवत इसी कारण जन सामान्य से यह उपासना अलग थलग पड गयी। समाज की स्थिति ऐसी हो गई कि कोई श्रुति परम्परा को मानता कोई शाक्त तंत्र को तो कोई शैव तंत्र को। कुछ लोग ऐसे भी थे जो मूक दर्शक रह गये। व्यामोह की यह स्थिति तब तक बनी रही जब तक मत्स्येन्द्रनाथ के शिष्य गुरु गोरखनाथ प्रकट नहीं हुए। इस समय तक भारत मे पर्याप्त रूप में विदेशियों का आगमन हो चुका था और समाज मे व्याप्त व्यामोह को उन्होंने और उलझा दिया था।

श्रुति अथवा श्रौत धर्म था तो बद्धमूल पर उसके अनुयायी और उसे न मानने वाले भी दुविधा में पडे थे। स्मार्त परम्परा ने भी जिन्हें स्वीकार नहीं किया ऐसे अन्यान्य तांत्रिक उपासनाओं में भटके लोगों को और खास कर उन लोगों को जो विदेशियों के धर्म को स्वीकार कर धर्मान्तरित होते जा रहे थे गोरखनाथ ने अपने झडे के नीचे इकट्ठा करना आरंभ किया। नाथ मत में न किसी जाति का बंधन था न किसी धर्म का चाहे पुरुष हो या स्त्री। इसलिये जिन्हें किसी वर्ण ने स्वीकार न किया जो अपनी कोई जाति नहीं बता सकते थे अपना इहलोक सुधारने के लिये जिनके पास कोई प्रशस्त मार्ग सुलभ नही था वे सब नाथानुयायी होते गये।

यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे के सिद्धान्त पर आधारित नाथ जीवन प्रणाली में योग हठयोग को बडा महत्व दिया गया और सुप्त कुण्डलिनी को जागृत कर सहस्रार का भेदन कर अपने मस्तक में प्रचण्ड प्रकाशमय ब्रह्म के दर्शन करना योगी का लक्ष्य होता है। नाथ सम्प्रदाय ने स्वीकार तो सब लोगों व किया परन्तु स्वयं को उसके लिये योग्य सिद्ध करना हर एक के बस की बात नहीं थी। योग के लिये ब्रह्मचर्य और सर्वविषयक अनासक्ति पहली शर्त थी और कामिनी के क्रोड में पलने वाले विषय वासनाभिभूत सामान्य व्यक्ति के लिये वह असम्भव था।

समस्त उत्तर भारत में मानो नाथ सम्प्रदाय की एक लहर चली। वर्तमान राजस्थान का भूभाग उससे बच नहीं पाया। मेवाड के बाप्पा रावल और उनके गुरु हारीत ऋषि के द्वारा प्रवारित लकुलीश सम्प्रदाय व आबू के परमारों की शैव उपासना ने भाटी शासकों के गुरु के रूप में राजस्थान में आये नाथों की लोकप्रियता का सिरे दरवाजा ही खोल

दिया। नाथ सम्प्रदाय सबके लिये खुला था हिन्दू हो या मुसलमान इससे धर्मान्तरण पर कुछ रोक लगी और न हिन्दू न मुसलमान वाली जीवन पद्धति को प्रश्रय मिला। राजस्थान के प्रसिद्ध पाबूजी रामदेव आदि पाँच पीरों की लोकप्रियता को भी इसी के मूल में देखना चाहिये।

योग की महिमा जानते हुए भी उसकी कठिनता का अनुभव करने पर उसके अनुयायियों जिनमें अतिवर्णाश्रमी और विधर्मियों की बहुलता थी ने अपनी उपासना के लिये नये नये तरीके खोजने शुरू किये। इससे नाथ सम्प्रदाय में अनेक विकृतिया आ गईं और धीरे धीरे नाथ पीठ भोग पीठों में परिवर्तित होते गये। विशेषकर मारवाड में जोगी जगम गुसाई सेवडा कालबेलिये आदि जातियों में नाथ के विकृत स्वरूप को हम आज भी देख सकते हैं। इन लोगों ने नाथों के बाह्य स्वरूप को बनाये रखा। परन्तु नाथ सम्प्रदाय के यों टूटते रहने से नाथों की उपासना पद्धति वैदिक कर्मकाण्ड और तात्रिक उपासना के सस्कारों ने समाज में अनेक प्रकार की साधना पद्धतियों को जन्म दिया क्यों की सनातन काल से चली आ रही मनुष्य की देवयु बनकर दिव्यत्व प्राप्त करने की कामना अभी मरी नहीं थी। इन साधनाओं को हम लोकसाधना कह सकते हैं। मारवाड में प्रच्छन्न रूप से चला कूण्डापथ भी इन्हीं लोकसाधनाओं का एक प्रकार कहा जा सकता है जिससे रूपादे और मल्लीनाथ किसी न किसी प्रकार से जुडे रहे हैं।

राष्ट्र रक्षा और जनकल्याण का कार्य करते हुए शरीर के क्षीण होने पर वानप्रस्थी होकर वृक्ष की शाखाओं का आश्रय लेने वाले भरतवशी क्षत्रियों की तरह मारवाड के राठौड वश के यशस्वी शासक के रूप में प्रसिद्ध मल्लीनाथ "मालो रावल पीर" नाम से जनश्रद्धा के प्रिय पात्र बने। राजस्थान का दक्षिण परिचमी भू भाग उन्हीं के नाम पर मालाणी कहलाया। सुल्तान की सेना के तेरह मोंर्चो के साथ लडने वाले दिल्लीश्वर को अपनी चतुराई और बाहुबल से प्रसन्न कर गुजरात विजय कर इतिहास में अमर हुए दुर्धर्ष योद्धा मल्लीनाथ ने अपना राज्य अपने भतीजे चूंडा को देकर किस प्रकार राठौड शासन को मारवाड में स्थिर किया यह बात इतिहासविदों के लिये नयी नहीं है पर स्वार्जित प्रदेश को यों छोड देना आसान नहीं था। वि १३८५ १४५६ उनके जीवन सघर्ष और विरल जीवन की अवधि माना जाता है। प्रसिद्ध पीर बाबा रामदेव के ये न केवल समकालीन थे बल्कि उनके कृपा प्रसाद से अनुग्रहीत भी हुए थे और अपनी उपासना और तपस्या से अनेक चमत्कारिक सिद्धिया उन्हें प्राप्त हो गयी थी। उनका क्षात्र तेज विरक्ति से कैसे अभिभूत हुआ और उनका जीवन "सर्वभूतहिते रत" कैसे हुआ यह चर्चा उनकी पत्नी रूपादे के त्याग भक्ति और अलौकिक विवेचन से प्रारभ करना अधिक उपयुक्त होगा।

मल्लीनाथ और रूपादे के आविर्भाव [illegible] म इतिहास से इतर अनेक लोकमान्यताए प्रचलित रही हैं। सभव है कि उनमे [illegible] को देखकर इन्हें गढा गया हो और वे इतिहास की दृष्टि से कहीं न [illegible] पर उनके कार्यों की लोकोत्तरता को देखकर

ऐसा न होना ही कदाचित् अधिक आश्चर्यकारी होता। स्वय मल्लीनाथ का जन्म एक योगी की कृपा से हुआ। शिकार पर गये राव सलखा (कान्हडदे के भाई) को योगी ने एक फल दिया और उसके सेवन से उसकी पत्नियों ने चार पुत्रों को जन्म दिया। उनमें मल्लीनाथ सबसे बड़े बेटे हुए। इसी प्रकार एक अन्य जनश्रुति के अनुसार सलखा महेवा से कुछ सामान अपने गाव ले जा रहे थे कि बीच रास्ते में चार नाहर बैठे थे। सलखा असमंजस में पड गया। नाहर सामने आना शुभ शकुन था। ज्योतिषियों की सलाह पर ये वस्तुएँ सलखा की पत्नियों को खिलाई गई। सलखा के चार बेटे हुए सभी पराक्रमी और भूमि के स्वामी बने।

जोधपुर के बिलाड़ा जैतारण हिस्से में मालजी की जन्मपत्री नामक एक छन्दोबद्ध रचना आज भी गाई जाती है। उसे स्व शिवसिंह चोयल ने प्रकाशित किया था। उसके अनुसार कोई बुधजी नामक भक्त अपने गुरु के साथ तपस्या करने पाटण गये। गुरु ने समाधि लगायी। बुधजी भिक्षा माँगने शहर में घूमने लगे। किसी ने भिक्षा नहीं दी। पर एक कुम्हारिन को उन पर दया आयी। बुधजी ने अपनी चीपी लोहार के यहा गिरवी रखकर कुल्हाडी ली और जंगल में लकडी काटने गये। १२ वर्ष तक लकडी काटते रहे और समय बिताते रहे। समाधि से उठने पर अपने शिष्य के सिर पर बाल न देखकर गुरु ने पूछा यह कैसे हुआ? तब शिष्य की व्यथा से पीडित गुरु ने शाप दिया पाटन पत्थर हो। शिष्य की इच्छापर केवल कुम्हार का परिवार बच गया। कुम्हार और कुम्हारिन को महेवा का स्वामी मल्लीनाथ और रूपादे राणी उसका बेटा जगमाल गधी को पालतु गाय और बछडी को घोडी बनने का वरदान दिया गया।

धारू माल रूपादे की वेल के प्रारभ में किसी अग्रसेन राजा और उसके नौकर सालरिया को गुरु और बुधजी के स्थान पर पात्र बनाया गया है। ये भी विरक्त होकर पाटन गये। वहाँ कुम्हार के स्थान पर माली के परिवार को बचाया जिसकी स्वामिनी कोई रूपा थी। इसी प्रकार रूपादे की वेल के प्रारभ में लालर की भी एक कथा आती है। काठियावाड के किसी जागीरदार की बेटी थी लालर। पिता चारण और भाटों को काठियावाडी घोडे दान देना चहते थे परन्तु वृद्धावस्था के कारण वे लाचार हो गये थे। मरते समय लालर ने अपने पिता को उनकी यह इच्छा पूरी करने का वचन दिया था। उसने जब काठियावाड पर आक्रमण किया तब मल्लीनाथ भी लूट पाट के लिये उसी क्षेत्र में पहुँचे हुए थे। पुरुष वेष धारी लालसिंह को जब नहाते समय मल्लीनाथ ने देखा तो वे आसक्त हो गये और विवाह का प्रस्ताव रखा। तब लालर ने कहा मेरा यह जन्म तो पूरा हो गया। अब मैं वालाबदरा के घर जन्म लूगी वहा मेरा रूपा नाम होगा। आप चार प्रहर शिकार खोजने आना और विवाह कर लेना। रूपादे की वेल में वालाबदरा की बेटी रूपा से मल्लीनाथ के विवाह का बहुत रोचक वर्णन किया गया है। वालाबदरा प्रसिद्ध नाथ योगी उगमसी भाटी के शिष्य थे उगमसी का आशीर्वाद रूपादे को भी मिला।

मल्लीनाथ के नाथ पथमें दीक्षित होने की घटना का एक राजस्थानी बात में विवरण मिलता है—मल्लीनाथ पंथ में आयौ तै री बात।" इसे बीकानेर के डा मनोहर शर्मा ने प्रकाशित किया है। रूपादे अपने खेत की रखवाली कर रही थी तब प्यासे उगमसी घूमते घूमते वहा आये और पानी मागा। रूपादे ने कलश आगे किया उगमसी सारा पानी पी गये। रूपा को चिन्ता हुई। और लोगों को क्या पिलाउ? तब उगमसी ने घडे पर हाथ रखकर कहा साहब पूरो और घडा भर गया। उगमसी ने रूपा के हाथ में ताबे की वेल पहनायी और कहा कि द्वितीया के दिन सात घरों से अनाज मागो और कामडियों में बाट दो। उगमसी की अनन्य भक्त इसी रूपा के साथ मल्लीनाथ ने विवाह किया।

मल्लीनाथ की पहली पत्नी चद्रावळ थी। रूपादे से जब उनका विवाह हुआ वे निवृति मार्ग की ओर उन्मुख नही हुए थे। राजकीय ऐश्वर्य और विलास उपभोग की सामग्री उनके चरणों में थी। रूपादे की बालकाल्य से निरन्तर बहती भक्ति मदाकिनी का प्रवाह अब अवरुद्ध होने लगा।

मालानी की राजधानी महेवा में आये उगमसी भाटी द्वारा आयोजित जागरण में आने का एक दिन रूपादे को निमत्रण मिला। जावे कैसे? महलों के दरवाजे बन्द थे। रूपादे की तीव्र इच्छा और गुरु कृपा से ताले अपने आप खुल जाते हैं और रूपादे पहुँच ही जाती है। इधर मल्लीनाथ के गुस्से का पार नहीं। खबर मिलने पर वे तलवार ले कर चले। एक घाव में सोलह टुकडे करने वे चले थे। रूपादे के साथ थे रामा पीर। रूपादे की थाली में मास का प्रसाद था। तलवार की नोक से जब थाली का आवरण हटाया तो थाली में तरह तरह के फूल और फल देखकर मल्लीनाथ के आश्चर्य का कोई ठिकाना नहीं रहा। वह क्षण था जब मल्लीनाथ का घमण्ड और क्रोध ठडा पड गया वे रूपादे के पथ में शरण ढूढने लगे। उन्होने भी गुरु उगमसी की कृपा की भीख मागी। अतुलित बलशाली मल्लीनाथ उगमसी के सत्व और तेज के सामने झुक गये।

द्वितीया की रात्रि को किये गये इस जागरण और मल्लीनाथ को उगमसिंह द्वारा दी गयी दीक्षा के कुछ पहलुओं पर यहा विचार करना आवश्यक है। इस प्रकार के जागरण प्राय शुक्ल पक्ष की द्वितीया की रात को ही आयोजित होते हैं। चैत्र अथवा भाद्र पद की द्वितीया को अधिक पुण्यकारक माना जाता है। श्रौत और स्मार्त यज्ञों के लिये भी शुक्लपक्ष ही अधिक उपयुक्त माना गया है। जागरण के स्थान पाट पूजा जाता है और गगाजल से भरे कलश की स्थापना की जाती है इसके पीछे छिपी पवित्रता और राष्ट्रीय एकता की भावना का हर भारतीय के लिये कितना महत्व है यह अवश्य ही उजागर होता है। अलख निराकार ईश्वर के प्रतीक के रूप में हर सहभागी के नाम की ज्योति का लगाया जाना सहसा नाथों की यौगिक उपासना में अपने मस्तक में ब्रह्माण्ड पुरुष (प्रकाशमय) का दर्शन करने की लालसा का प्रतिनिधित्व करता सा प्रतीत होता है। जागरण की गोपनीयता और मध्यरात्रि से भोर तक के कायक्लाप और प्रसाद के रूप में मास

का सेवन सभ्य समाज द्वारा तिरस्कृत वाममार्गीय तंत्र साधनाका ही प्रभाव माना जा सकता है। मंगल कार्य में देवताओं को निमंत्रण देना श्रौत और स्मार्त परम्परा है।

रूपादे की बेल और मल्लीनाथ का बात दोनों ही मल्लीनाथ को उगमसी के द्वारा दी गयी दीक्षा का स्पष्ट संकेत करते हैं। पीत पट का पर्दा लटकाकर मल्लीनाथ को गुरु के सामने बैठाया गया उनकी आँखे बाध दी गयी कानों में कुण्डल पहनाये गये सेली सींगी धारण करायी गयी राणा रतनसी ने सिरपर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया। उगमसी ने गुरुमंत्र देकर मल्लीनाथ को अपना शिष्य बनाया। कानों में कुण्डल और सेली सींगी धारण कराने से निस्संशयत यह कहा जा सकता है कि मूलत नाथ पथ में दी जाने वाली दीक्षा से इस की बहुत समानता है। गुरु के प्रति अगाध निष्ठा और शिष्य के समर्पण भाव को भी नाथों की गुरुभक्ति के अथवा भक्ति मूल में देखना यहा अधिक समीचीन होगा।

इस प्रकार वैदिक और स्मार्त कर्मकाण्ड तांत्रिक उपासना योग और नाथ सम्प्रदाय के सिद्धान्तों को किसी न किसी रूप में अपनाकर लोक-उपासना के जो आयाम खुले उनमें कूण्डापथ के अलावा आई पथ गूदड पथ दसा पथ अलखिया पथ आदि साधनाओं का विकास हुआ। आराधना के लिये जातिगत अधिकारों की समाप्ति की घोषणा सिद्ध होने लगी। वेद के निराकार ईश्वर की कल्पना योग और नाथ मत में जीवित रही और उसने निराकार की उपासना का साकार रूप लिया। निराकार को अगम अगोचर अलख आदि रूपों में अभिव्यक्त किया गया। इसे निर्गुण भक्ति के मूल रूप में स्वीकार करने में कोई सकोच की स्थिति नही होनी चाहिये।

नारद पचरात्र आदि ग्रथों में भक्ति के स्वरूप का जो विवेचन किया गया है वह इस भक्ति से भिन्न है। नाथ पथ में दीक्षित हुए व्यक्ति को जिन सोपानों को पार करना पडता था उसमें एक सीमा तक गुरु उसका सहायक और मार्ग दर्शक हुआ करता था। यौगिक क्रियाओं में इंद्रियों के दमन के लिये आवश्यक ब्रह्मचर्य पर गुरु का नियंत्रण रहता। दूसरे शब्दों में बिना गुरु के शिष्य की कोई गति नहीं हो सकती थी। इससे गुरुभक्ति अगाध और नैष्ठिक होती गयी। ब्रह्मचारी को कुण्डलिनी जागृत करने पर चक्रों का भेदन कर जिस प्रकाश पुरुष के दर्शन करने होते थे उसका आभास वह अपने गुरु में देखने लगा। यों गोविन्द से गुरुतर हुए गुरु के प्रति धीरे धीरे शिष्य के मन में श्रद्धा और भक्ति का संचार हुआ। यह भक्तिभाव अलख की आराधना करने लगा। योग साधना की विषम सीढियों को चढने के बजाय यह मार्ग जन सामान्य को सुगम था। इससे अनीश्वरवादी चिन्तन में रुकावट सी आयी नास्तिकता को धक्का लगा। व्यक्ति फिर से स्वय को ईश्वर के निराकार स्वरूप का अंश समझकर पुन अंशी या पूर्ण ब्रह्म या विराट पुरुष में समहित होने के लिये आतुर हो उठा उसका देवयु स्वरूप फिर से आभासित होने लगा। नाथ सम्प्रदाय से किसी न किसी रूप में सम्बद्ध आचार्य या गुरुओं को ईश्वर स्वरूप माना जाने लगा। राजस्थान के रामदेव हरबू, पाबू, मेहा मागलिया और गोगा

को पीर की मान्यता मिली। उनका विशाल भक्त सम्प्रदाय आज भी भक्ति की उस अविकल धारा की तरंगों से आप्लावित है। इस भक्ति धारा को पृथ्वीनाथ ने १७ वीं शती में नहीं बल्कि रूपादे ने १५ वीं शती में प्रस्रवित किया। योग से भक्तियोग के विकास में रूपादे की भूमिका पर अब तक विचार नहीं हो पाया है उसका प्रारंभ हमें करना है।

ऊपरी विवेचन से स्पष्ट है रि ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य को छोड़कर जिन जिन जातियों का प्रादुर्भाव हुआ वे इन साधनाओं की ओर आकृष्ट हुईं। आभिजात्य वर्ग में चल रही गुह्य उपासना में प्रवेश के लिये इन व्यक्तियों में एक अलग संगठन की भावना का विकास हुआ। यह वर्ग समाज के निचले से निचले तबके को भी अपने साथ ले चला। इन में अशिक्षित अधिक थे शिक्षित कम। इनकी साधना की प्रक्रिया अत्यन्त गोपनीय रही पर गुरु के जीवन और उसकी भक्ति की अभिव्यक्तियों को मौखिक रूप से वाणी के माध्यम से जीवित रखा गया। प्रमुखतः मेघवालों तथा अन्य सभी अस्पृश्य कही गयी जातियों ने रूपादे की वाणियों पदों और अन्य रचनाओं को मौखिक रूप में सुरक्षित रखा। अन्यथा लोक साहित्य की यह थाती कब की लुप्त हो गयी होती।

रूपादे और मल्लीनाथ का पूर्व जन्म वृतान्त, उनका विवाह जागरण और अन्त में मल्लीनाथ जी का इस पथ में दीक्षित होने का विवरण रूपादे की बेल में ही उपलब्ध होता है। अनेक स्थानों पर गायी जाने वाली बेल में समय समय पर बढ़ोतरी होती रही। यों बेल के चार रूप मिले हैं। बेल के अतिरिक्त रूपादे की वाणिया जो प्रकाशित हैं और वे पद जो अब तक मौखिक रूप में सुरक्षित हैं उनका संकलन परिशिष्ट में दिया है। इसी प्रकार अन्य कवि अथवा कवयित्रियों की रचनाओं को जो किसी न किसी रूप में रूपादे की उपलब्धियों अथवा भक्ति के स्वरूप को प्रकट करती है परिशिष्ट में जोड़ी गयी हैं। इस समस्त साहित्य पर आधारित रूपादे की भक्ति की विवेचना से पूर्व यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि यह लोक-साहित्य है। अतः रूपादे की रचनाओं में उसके समय की भाषा को ढूंढना व्यर्थ है। कई लोगों ने स्वयं रचना कर छाप रूपादे की रखी है। तीसरे अनेक स्थानों पर कई व्यक्तियों द्वारा सदियों से गायी जाने के कारण तत्तत् स्थानीय शब्दों क्रियाओं के रूप भी प्रयुक्त हुए हैं। तात्पर्यतः इनके साधु सम्पादन की कोई गुंजाईश नहीं रह जाती है। वह लोक का प्रसाद है वह जैसे मिला है उसी रूप में उसे स्वीकार करना श्रेयस्कर है। वैसे भी भक्ति की अगाध प्रस्रवित धारा में भाव का महत्व अधिक है शब्दों का कम।

उगमसी भाटी के शिष्य और रूपादे के बालसखा धारू मेघवाल ने रूपादे के मन में भक्ति के बीजका अंकुरण किया। रूपादे के विवाह के बाद भी धारू उसके साथ मेहवा गये थे रूपा को भक्ति के इस पथ में दीक्षित करने का दायित्व गुरु ने उन्हें सौंपा था और उसी वचन के निर्वाह के लिये वे साथ गये थे। मल्लीनाथ को धारू ने व्यापक दृष्टिकोण का उपदेश दिया है "केवल अपना कल्याण मत सोचो नहाना

है तो समुद्र में नहाओ पर नारी से हेत मत रखो वास्ता रखना है तो पर्वत से रखो छोटी पहाड़ियो से नही। साधु का जीवन बड़ा कठिन होता है तुम्हें खाड से मिश्री बनना है अलख को जगाना है।

रूपादे जम्मा अथवा जागरण से लौटते निराकार जगदीश को पुकारती है क्योंकि राम भजन से ही वेदना का अन्त होना है—

भजो राम वेदन नहीं व्यापै।

राम ही सत् है इसलिये उगमसी कहते हैं सत् की खेती करो

सतडे री बाड सजोरी खेती
खरसण साच कमावो
काई यूला बपरावो म्हारा माइडा!

खेती करना है तो हीरों की खेती करो सच्चे साहेब का ध्यान करो तभी तुम अमीरस का पान कर सकोगे। तुम्हारी पाचों इन्द्रियों को वश में रखो उन पाच सुवटियों को मोती का चुग्गा डालो—

सुखमण सरवरिया पाच सुवटिया
मोतीडा रो चूण चुगावो।

मल्लीनाथ और रूपादे ने यही किया सत्कर्म में प्रवृत करना तभी जन्म का फेर समाप्त होगा फिर से भोग भ्रमण नहीं करना पड़ेगा। यह मुक्ति योगी की नहीं अपितु एक भक्त की है।

इसी मुक्ति के लिये रूपादे अलख को अपना सैंया मानती है कभी अल्ला कहती है और परम तत्व के साथ अपने भौतिक सम्बन्ध का अनुभव करती है। वह राम कहे या जगदीश है तो वह एक ही। न वह निर्गुण है न सगुण। वह उभयरूप है भी और नही भी है। वास्तव में कोई शब्दावली उसका पूरा बखान तो कर भी नहीं सकती उसका किंचित आभास कराती है। इसलिये रूपादे को भक्ति की किसी विशेष धारा से जोडने का अर्थ होगा कि हम उसकी मूल भावना को ही नहीं समझ रहे हैं।

वह जागरण में सबको ले जाना चाहती है क्यों कि आलम प्यार पावणा आनेवाला है। उसका गुरु हा आलम है रूपा उसे समर्पित है। सत् गुरु जब पावणा है तो विषय में आसक्त जीव को पार लगाना ही उसका काम है। यह गुरु उगमसी नहीं जूनी कला रा साई है। उसे सब जगह यह साई दिखाई देता है—

देवरा में देव मकाजी अल्ला जुवाला में साई
खडक सम्ब भाई आप बिराजे
राम जहा देखू साई।
जागो म्हारा जूनी कला रा साई।

उस पाने के लिये भक्तिभाव चाहिये ए जी सुरति बिन कैसा चेला? सुरति होने पर भक्त की नाव सत् गुरु ही पार लगाते हैं। पर वह मिलने तक होने वाली विरह व्यथा की पीडा बडी भारी है। इसीलिये रूपादे कहती है—

जी रे वीरा ज्यारे मन में विरह नही रे जी
ज्यारो थूड सो जीणो।

गेरुए कपडे भस्म और तिलक क्या काम के? जो अग्नि में जला नही वह मतिहीन व्यक्ति है। विरह से पीडित होकर गुरु के पास जाओ और तपस्या के संग्राम में अपना सिर दे दो जब तक कोई तडपेगा नहीं उसे कोई मोक्ष नहीं मिलगा। तडपता व्यक्ति ही निजपद पहचान सकता है वह मदहोश होकर रंग का प्याला पीता है—

मतवाला झूमे मद भरिया हो जी
रंग भर प्याला पीणा।

इस मदहोशी में रूपादे आलम को पूछता है अजी आप तो दो चार दिन की कह गये थे अब चौथा युग है आप के इन्तजार में मैं खडी खडी थक गयी हूँ मैं आपको पत्र लिखू तो उसे खाली पढ लेने से क्या?

लिखू म्हारा सायबा कागदिया दोय नै चार
भणिया हुवौ तो रे काई गुणियो हुवो तो राजा बाच जो॥

वह अपने प्रियतम को पाने के लिये कभी जोगण का वेष करती है तो कभी मालण का। उस के स्वागत के लिये फूल गूथती है सरोवर के दोनों ओर खडी खडी दिशाओं को ताकती रहती है।

कभी वह प्रियतम को हाड मास का शरीर धारी मानकर कहती है अरे हीरों के व्यापारी। घर तो आवो खीर बनाऊगी पतली रोटिया बनाऊगी मीठे चावल बनाऊगी लेकिन अब विलम्ब मत करो।

सैंया या आलम की प्रतीक्षा कई जन्मों की कई युगों की है। वह क्यों नही आता? वह कहती है सारा ब्रह्माण्ड खोजकर देख लो उसके सिवा दूसरा कोई नजर नहीं आयेगा—

सोई बिराजे सब रे बीच में हो जी
देखो अधर ठहराणो। हा रे वीरा
सगळो ब्रह्माण्ड फिर देख लो
दूजो कोई नीजर नहीं आणो।

वह है तो सब जगह पर मिलता किसी किसी को ही है। उसे देखने के लिये अन्तर्दृष्टि चाहिये वह इसी काया में है। यह काया एक नगरी है उसका वह राजा है—

सोने हदा महल रूपै हदा छाजा होजी

राज करे काया नगरी को राजा।

जब यह काया ढह जाती है तो आत्मस्वरूप को न पहचाने वाला यह राजा बिलखता फिरता है। यह दोष और किसी का नहीं स्वय का ही है। शरीरस्थ ब्रह्म का अश अपनी खुशी से दीन हीन हो जाता है और स्वय भ्रमर बना अटक जाता है—

■ रे वीरा अपणी खुशी से दीन भयो हो जी
नाना परपच रचाया
मन मायलो मान्यों नहीँ हो जी
फिर फिर गोता खाया

इससे मुक्त होने के लिये पर ब्रह्म या अलख के साथ एकत्व भाव स्थापित होना चाहिये द्विधा भाव किसी काम का नहीं—

एक होय जद चालसी
दोय रया अलुझावै।

एकत्व भावना के लिये चाहिये गीता की स्थितप्रज्ञता। उसके लिये सुख दुःखातीत होना पडता है—

दुख ने दुख समझै नहीं सुखसू हरख न होय
रूपा कहे ससय नहीं जीवत मुकति जोग।

यह असिधारा व्रत है इसे सुगरा ही पालन कर सकता है नुगरा नहीं। रूपादे सारे ससार को सुगरा बनाना चाहती है। सुगरा बनने की शर्त है सयम और इसीलिये नैतिक शुद्धता की वह पक्षपाती है भखर' नारी के साथ सग न करने की वह मल्लीनाथ को चेतावनी देती है। यदि त्रिविध तापों का हरण करना है तो जम्में में गुरु की शरण में जाओ। वह नर नारी में कोई फर्क नहीं करतीपरन्तु सात्विक दाम्पत्य प्रेम का ऐसा महत्व है कि—

दीन बधु परमेस सो था बिन राजी न होय
इण सू म्हैं अरजी करू थासू न्हू न कोय।

वह कबीर की तरह केवल निंदक को पास में ही नहीं रखना चाहती वह उसे सुधारना चाहती है—

निंदक नै ई लेसा सुधार
अपणा बणासा हे।
अपणो बैरी न दीसे कोय
सबरा सहणा है कुछ सुणणा ने करणा रे।

सन्त तुकाराम की तरह वह सारे ससार का कल्याण करना चाहती है—

हाथ में आयो हे
आयो जोव अब खाली न जाय
आये ने तिरावा हे
जगसू पार लगावा हे।

वह ससार को अपने से अलग मानती ही नहीं है—

साचो प्रेम म्हारो स्याम सू
जगसू किसडो हेव।
जग म्हासू अलगो नहीं
मैं हूँ जग रे माय॥

दर असल रूपादे नाथों के प्रभाव से पूर्णत मुक्त नहीं हो पाई थी। इसलिये कभी वह ब्रह्माण्ड पुरुष के गले में सोने के तार में लटकी सेली के रूप में स्वय को देखती है तो कभी निराकार परब्रह्म से अपना अद्वैत भाव स्थापन करती है। निराकार की उपासना में गुरु उसका मार्गदर्शक ही नहीं है वह उसमें परब्रह्म का दर्शन करती है। रूपादे का नाथों से एक महत्वपूर्ण अन्तर यह है कि उसका निराकार के प्रति समर्पण भाव है, वह स्वय को उसके अश के रूप में अनुभव करती है। वह योग को नहीं प्रेम को भक्ति का आधार मानती है। यह वह प्रेम ही था जिसने रूपादे को समाज के उन लाखों उपेक्षित और दलित लोगों से जोड़ दिया। रूपादे ने उन्हें गले लगाया। उसे अपनी मुक्ति की चिन्ता नहीं थी जनता जनार्दन का उद्धार ही उसके जीवन का लक्ष्य बना। तत्कालीन दलित समाज में उसने चेतना और आत्मविश्वास को जगाया मनुष्यों की समानता के सिद्धान्तों को उसने व्यावहारिक रूप दिया और वेदान्त के अद्वैत भाव को जन जन में व्याप्त कर समाज को आस्तिक बनाये रखने का अभूतपूर्व कार्य किया।

भक्ति तरंगिणी वो उसने कबीर साहब से १०० वर्ष पूर्व निर्झरित किया। उसके भक्ति स्वरूप को लेकर मीरा से तुलना करने के प्रयत्न किये गये हैं तथापि मेरी समझ में रूपादे ने विकट परिस्थितियों में नास्तिक और दिशाहीन होते समाज को दिग् भ्रमित नहीं होने दिया उसमें आस्तिकता को फिर से जागृत किया और प्रेम भक्ति का सूत्रपात किया। मीरा की परिस्थितिया भिन्न थीं कार्यक्षेत्र भिन्न था। दलितों के उद्धार में लगी रूपादे को वह प्रसिद्धि मिलती भी कैसे जो मीरा या दादू को मिली? अत तुलना के स्थान पर हम यदि यह कहें की मीरा और दादू की भक्ति स्रोतस्विनी के प्रारंभिक निर्झरण का कार्य रूपादे ने किया है तो कोई व्याजस्तुति नहीं होगी।

समाज के दलित वर्ग को भक्ति की ओर उन्मुख करने वाली रूपादे के कार्य की महत्ता का मूल्यांकन समाज का आभिजात्य वर्ग कर नहीं सका—कारण कुछ भी रहे होंगे। इसीलिये वह मीरां की तरह मरुप्रदेश की भक्तिधारा का विश्व में प्रतिनिधित्व न कर सकी। पर कच्छ भुज तथा गुजरात के क्षेत्र वह तोरल जेसल के साथ अब भी

पूजी जाती है। गुजरात में प्रसारित उसके भक्तिस्वरूप की समीक्षा इसी पुस्तक में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

विश्व रूप कमठाणे को उसके कारीगर से मानव मात्र को परब्रह्म से भक्त को ईश्वर से मिलाने की इच्छा रखने वाली रूपादे के जीवन और भक्ति स्वरूप के आख्यान के पुरोवाक् सदृश किया गया यह वाणी विलास हमें अपने स्वत्व की पहचान कराने में समाज में आस्तिकता की प्रतिष्ठापना में और अन्तत हमारे अगणित ज्ञात अज्ञात पापों के विनाश में यत्किंचित भी सहायक सिद्ध होगा तो मेरा यह प्रयास सार्थक माना जा सकेगा। मेरे इस प्रयत्न को स्वीकार कर उसे पूर्णत्व प्रदान करने में राणी भटियाणी ट्रस्ट जसोल के न्यासी ठा नाहरसिंह ने जो अपूर्व सहयोग दिया और लम्ब लम्बायमान कार्य होते हुए जिस धैर्यत्व का परिचय दिया उस उपकार के सेवास्वरूप यह पुस्तक आपके हाथों सौंपते हुए मुझे होने वाला समाधान शब्दातीत है।

मेरे अग्रज तुल्य नाथ साहित्य के तलस्पर्शी विद्वान् डा भगवतीलालजी शर्मा की निरन्तर प्रेरणा और उपयोगी सुझावों के लिये उनका आभार मानने की अपेक्षा इसी प्रकार उनके अनुग्रह की कामना करता हूँ।

इस काय में मुझे श्री दीनदयाल ओझा (जैसलमेर) श्री कान्तिलाल जोशी (भुज) सुश्री रेखा सानार्थी (उदयपुर) श्री चौथमल माखन (उदयपुर) श्री श्रीवल्लभ घोष (जोधपुर) श्री सुरजाराम पवार (जोधपुर) श्री वीरसिंह हीरसिंह चौहान (जामनगर) श्री सुरभा जीवनसिंह राठौड (जामनगर) ने रूपादे की व रचनाए सौंपी हैं जो अब तक केवल मौखिक परम्परा में ही सुरक्षित था। इनके अलावा डा मनोहर शर्मा स्व श्री अगरचदनाहटा स्वश्री गोकुलदासस्व श्री रामगोपाल मोहतास्व बदरीप्रसाद साकरिया डा महेन्द्र भानावत स्व श्री शिवसिंह चोयल भगत श्री रामजी हीरसागर श्री सौभाग्यसिंह शेखावत तथा डा सोनाराम विश्नोई द्वारा रूपादे स सम्बन्धित प्रकाशित रचनाओं का मैंने इस पुस्तक के लेखन में उपयोग किया है अत मैं उनका ऋणी हूँ।

आधिभौतिक समृद्धि की इन्द्रधनुषी छटाओं के रंगायन में स्वत्व को भूलती जा रही मानवता को उसके देवकाम स्वरूप का किंचित् भी आभास इस पुस्तक से मिल सकें तो मैं इस प्रयत्न को सार्थक समझूगा।

—डॉ डी बी क्षीरसागर

राणी रूपादे और मल्लीनाथ जीवनगाथा

राजस्थान का नाम लेते ही आपको स्मरण होगा राणी पद्मिनी के साथ जौहर की धधकती ज्वालाओं का आलिंगन करने वाली सैंकडों वीर राजपूत नारियों का स्वाभिमान और स्वधर्म की रक्षा के लिए मर मिटने वाले महाराणा प्रताप के अतुल पराक्रम का और हसते हसते विष का प्याला होठों से लगाकर अपने साथ राजस्थान को अमर कर देने वाली मीरा का। पराक्रम त्याग और तपस्या की त्रिवेणी बनी राजस्थान की धरती का इतिहास जिन अनुपम गाथाओं से अमर होता गया उसका उदाहरण अन्यत्र ढूढने से नही मिलेगा।

युद्ध के सहार से विरक्त होकर बुद्ध की शरण में जाने वाले मौर्यवशी सम्राट अशोक से भी पूर्व राजकुल में उत्पन्न हुए गौतम बुद्ध या महावीर ने सत्ता और भोग को तृणवत् मानते हुए किस प्रकार जनकल्याण के लिए अपना जीवन को दाव पर लगा दिया यह बात आपसे छिपी नही है। गौतम बुद्ध और महावीर से पूर्व कई हजारो वर्षों का इतिहास देखिये तो यह स्वीकारना पडेगा कि भारत के क्षत्रियों भरतवशियों का अपने जीवन का उद्देश्य भी कुछ इसी प्रकार का था। महाकवि कालिदास के शब्दों में—

भवनेषु रसाधिकेषु पूर्वं क्षितिरक्षार्थमुशन्ति ये निवासम्।
नियतैकपतिव्रतानि पश्चात् तरुमूलानि गृहीभवन्ति तेषाम्॥ अभिज्ञानशाकुन्तल

क्षत्रिय पृथ्वी की रक्षा के लिए ही राजप्रसादों में रहते हुए भोग करते हैं परन्तु सन्यस्त होकर वे तरु मूलों को ही अपना निवास मानते हैं।

राज्य या सत्ता को न्यास मानकर उनकी रक्षा करते हुए जनकल्याण करना और समय आने पर जनकल्याण के साथ आत्मकल्याण करने के लिए स्थितप्रज्ञ होकर साधना करना यही हमारे राष्ट्र के क्षत्रियों का आदर्श रहा है।

इन आदर्शों का पालन करते हुए भक्ति गगा में आकठ स्नान कर भगवल्लीन होकर जन सामान्य का मार्गदर्शन करने वाले हरिश्चन्द्र तारामती जैठल और द्रौपदी बलीचद और सजादे की कथाए अभी तक भक्तजनों द्वारा गायी जा रही हैं। उन्ही की कथा गाथा

हो जाती है जो अपने लिये नहीं दूसरों के लिये सामान्य जनों के कल्याण के लिये ही जीते हैं और परहित साधन में ही शरीर छोड मुक्त हो जाते हैं मुक्त होकर भी अनन्त काल तक जन मानस का मार्गदर्शन करते हैं।

राजसत्ता में चूर हुए अपने स्वामी मल्लीनाथ को अपनी अटूट भगवद्भक्ति और निष्ठा के बल पर भोग से त्याग में प्रवृत्त कराने वाली मालाणी की राणी रूपादे की कथा और समस्त मनुष्य मात्र को समभाव से देखने की उस दम्पती की दृष्टि उन्हें अनायास ही ऊपर कहे क्षत्रियों के आदर्शों का पालन करने वाली परम्परा से जोड देती है। जैसे—पुरुष प्रकृति के बिना या प्रकृति पुरुष के बिना अधूरी रह जाती है ठीक वैसे ही रूपादे की कथा भी मल्लीनाथ की चर्चा किए बिना दर असल प्रारम्भ ही नहीं होती है। सही रूप में कहा जाय तो वागर्थ की तरह उनकी कथा भी परस्पर सम्पृक्त ही है।

१ मल्लीनाथ के पूर्वजों का वृत्तान्त—

मल्लीनाथ का सबध मारवाड के राष्ट्रकूट या राठौड वश से है। राठौड जैसा ।क प्राय सभी इतिहासकारों द्वारा स्वीकार किया जाता है कन्नौज के जयचन्द के राठौड वश के उत्तराधिकारी हैं। जयचद का नाम प्रसिद्ध सयोगिता हरण से जुडा हुआ है। लगभग १२५० वि में सुल्तान के साथ युद्ध में जयचद की पराजय हुई। उसी युद्ध में जयचद वीरगति को प्राप्त हुए और इसी आधार पर राठौडों का मारवाड में आने का समय १२५० वि के बाद ही माना जाना चाहिए।[१]

जयचन्द के हरिश्चन्द्र और वरदायी सेन नामक पुत्र होने की जानकारी मिलती है। हरिश्चन्द्र या वरदायी सेन का पुत्र सेतराम था। इसी सेतराम का पुत्र था राव सीहा या जिसे मारवाड के राठौडों का आदिपुरुष माना जाता है। मारवाड पाली के पास बीठू गाव में मिले १३३० वि के शिलालेख से भी प्रतीत होता है कि सीहा सेतराम का पुत्र था।[२]

कन्नौज के आस पास महुई में जब मुसलमानों का अधिक उपद्रव होने लगा तब सेतराम मारवाड की ओर चले और पाली के पल्लीवाल व्यापारियों के सरक्षक के रूप में अपनी सेवाए देने लगे। इससे पूर्व उन्होंने भीनमाल के ब्राह्मणों की रक्षा के लिए सघर्ष किया। पाली के पास बीठू के पास मुसलमानी सेना के साथ लडते हुए राव सीहा की युद्ध में मृत्यु हो गयी।[३]

राव सीहा के दो पत्निया थीं। पहली पत्नी की सन्तान का अधिकार गोयन्दाणे किले पर रहा और उनकी सोलकी पत्नी से उत्पन्न हुए तीनों पुत्रों ने धीरे धीरे मारवाड में अपनी सत्ता को जमाना शुरू किया। उनकी सोलकी रानी का ख्यातों में "राजल्दे नाम मिलता है। उनके तीन पुत्र थे—आसथान सोनग और अज।[४]

सीहा के देहावसान के समय उनका पाली पर अधिकार था परन्तु आसथान पाली

के निकट गून्दोज नामक स्थान पर ही रहे। डामी राजपूतों को अपनी ओर मिलाकर गुहिलों से खेड छीन लेने का श्रेय आसथान को ही है। खिलजी सुलतान फिरोजशाह द्वितीय की सेना से मुकाबला करते हुए पाली के निकट वि १३४८ में आसथान की मृत्यु हुई थी।[५]

आसथान के उत्तराधिकारी के रूप में में उनके ज्येष्ठ पुत्र धूहड ने राज्य का अधिकार ग्रहण किया। अपने पराक्रम से पैतृक राज्य में इन्होंने १४० गाव जोड दिए। परिहारों को हराकर मडोर पर उन्होंने कब्जा भी किया था परन्तु वह कायम नहीं रह सका और थोभ और तरसींगडी के बीच परिहारों का सामना करते हुए वे धराशायी हो गये थे। यह युद्ध सभवत १३६६-७० वि के बीच कभी हुआ था।[६]

धूहड की असामयिक मृत्यु के पश्चात् उनके बडे लडके रायपाल न रुत्ता सभाली और बाडमेर की ओर पवारों को परास्त कर महेवा का प्रदेश उन्होंने अपने राज्य में मिलाया। प्रसिद्ध सत पाबूजी राठौड के हत्यारे भाटी फुरडा जो खींची जीदराव के व्यक्ति थे को मारकर उसके ८४ गावों पर भी रायपाल ने अधिकार कर लिया। रायपाल के राज्यारोहण की भाति उनके स्वर्गवास का समय भी निश्चित नहीं है—इतिहासकार १३०९ १३ वि के मध्य के किसी समय का अनुमान करते है।[७]

लगभग वि १३१३ में जब रायपाल के पुत्र कनपाल शासक हो गये थे उस समय महेवा का प्रदेश उनकी सीमा में था और इधर जैसलमेर के राज्य से भी इनकी सीमाए जुड गई थीं। कनपाल के पुत्र भीम ने भाटी शासकों से युद्ध कर काक नदी को खेड और जैसलमेर की सीमा माना जाना तय किया था। परन्तु भाटी शासक जब तब उपद्रव करते रहे और उनके साथ हो रहे युद्ध में कनपाल मारे गये। इनकी मृत्यु तिथि भी सदिग्ध है—वि १३२३ के लगभग।[८]

कनपाल के साथ ही उनके ज्येष्ठ पुत्र भीम मारे गये थे इसलिए कनपाल का उत्तराधिकार उनके द्वितीय पुत्र राव जालणसी ने सम्हाला। वे भाटी और सोलकी दानों से टक्कर लेते रहे और स्व प विश्वेश्वरनाथ रेउ के अनुसार दोनों की सयुक्त सेना का सामना करते हुए १३८५ वि में इन्होंने मृत्यु का आलिंगन कर लिया। जालणसी के बडे पुत्र राव छाडा ने अपने पिता का उत्तराधिकार सम्हाल लिया।[९]

छाडा के समय तक भाटी प्राय राठौडों को परेशान करते रहे। छाडा ने भाटी—शासकों से माग की कि वे किला खाली कर दें और खिराज देना स्वीकार करें। परन्तु भाटियों पर कोई असर न होता देख छाडा ने जैसलमेर पर आक्रमण कर दिया। भाटी डटे रहे परन्तु विजयश्री हाथ में न आते देख उन्होंने अपनी लडकी का विवाह छाडा से करना स्वीकार किया। पूगल का इतिहास के लेखक श्री हरिसिंह भाटी ने लडकी का नाम कमलादेवा होना लिखा है। इस विवाह के पश्चात् छाडा पाली सोजत भीनमाल और जालोर को लूटते हुए विजय यात्रा से लौट रहे थे तब सोनगरा और देवडा चौहान न

जालोर के निकट रामा नामक गाव में उन पर अचानक धावा बोल दिया। इसी हमले में १४०१ वि में छाडा की क्षत्रियोचित मृत्यु हो गई।[१०]

राव तीडा जो छाडा के ज्येष्ठ पुत्र थे अपने पिता की मृत्यु का बदला लेना चाहते थे इसलिए सोनगरा चौहानों पर आक्रमण कर उन्होंने भीनमाल जीत लिया। सीवाना के शासक चौहान सातल और सोम तीडा के भानजे लगते थे। मुसलमानों के द्वारा घिर जाने पर तीडा उनकी मदद के लिये पहुचे—उसी युद्ध में तीडा को वीरगति मिली।[११] राव तीडा के तीन लडके थे—कान्हड त्रिभुवणसी और सलखोजी। हमारे कथानायक मल्लीनाथ इन्हीं मलखोजी के ज्येष्ठ पुत्र थे।

तीडा की मृत्यु के पश्चात् मुसलमानों ने महेवा पर अधिकार कर लिया इधर कान्हडदे की स्थिति भी कमजोर होती गयी। परन्तु कुछ समय पश्चात् कान्हडदे ने फिर से धन जन का संग्रह कर खेड पर अधिकार कर लिया और शान्ति से शासन करने लगे।[१२] अपने छोटे भाई सलखा को इन्होंने एक गाव जागीर में दिया था। उसे सलखा वासणी नाम से आज भी जाना जाता है। सलखा के दो विवाह होने के उल्लेख मिलते हैं। मल्लीनाथ और जैतमाल पहली पत्नी की तथा वीरम और शोभित दूसरी पत्नी की सन्तान थे।[१३]

२ मल्लीनाथ का समय—

मल्लीनाथ का नाम माला मालजी मालोजी और मालदे आदि विभिन्न प्रकारों से हस्तलिखित ग्रथों अथवा मुद्रित पुस्तकों में पाया जाता है। वे माला से मल्लीनाथ कब बने यही दिलचस्प कथा इन पन्नों का विषय है। गुजराती साहित्य में मल्लीनाथ के स्थान पर उन्हें मालदे क नाम से जाना गया है—दूसरी ओर जोहिया राजपूतों के नगारची ढाढी बादर जो मल्लीनाथ और वीरम के द्वारा लडे गये कई युद्धों का वर्णन करते हैं वे भी मल्लीनाथ का उल्लेख मालदे के रूप में करते हैं—जैसे राव मालदे रो समो। गुजराती साहित्य में मालदे को मेवाड का शासक माना गया है। मालदे" नाम को लेकर प्राय एक भ्रम पैदा हाता है—चूडा के वशज राव मालदेव का जो शेरशाह सूरी के समसामयिक थे। अत हमें मल्लानाथ की चर्चा के प्रारम्भ में ही यह बात स्पष्ट कर देनी चाहिये कि मालोजी या मल्लीनाथ महेवा खेड के शासक रहे थे—उन्हें मेवाड या जोधपुर के राव मालदे मानने की भूल हम नही करेंगे।

पूर्व में की गई चर्चा से जैसा कि स्पष्ट है मल्लीनाथ एक इतिहास पुरुष हैं उनकी आध्यात्मिक उपलब्धियों या उनकी रानी रूपादे के भक्तिदर्शन की चर्चा से पहले एक इतिहास पुरुष क रूप म उनका चित्रण इसलिए भी आवश्यक है कि रानी रूपादे के दर्शन की भी किसी काल विशेष की आधारशिला पर ही समीचीन बात की जा सके।

मारवाड के इतिहासकार प्राय मल्लीनाथ का जन्म १४१५ वि तथा मृत्यु १४५६ वि में स्वीकार करत हैं।[१४] मल्लानाथ रूपादे सबधी प्रचलित वाणियों एव लोकवार्ताओं के सकलनकर्ता जोधपुर के निकटस्थ बिलाडा के निवासी स्व श्री शिवसिंह चोयल मल्लानाथ

का जन्म १३८५ वि मानते है।[१५] उनके समय के सबध में एक और साक्ष्य उपस्थित किया जा सकता है—जैसलमेर के शासक रावल घडसी का। ऊपर राव छाडा के सिलसिले में आई यह बात आपको याद होगी कि भाटियों ने अपनी लडकी कमला देवी का विवाह छाडा के साथ कर दिया था। परन्तु राठौडों की लडकी विमला देवी का घडसी भाटी के साथ विवाह होने की बात को भी कई ग्रथकारों और ख्यातकारों ने स्वीकार किया है।[१६]

रावल घडसी का समय लगभग १३७२ १४१८ वि (अथवा १३७३ ई) माना गया है। "पूगल का इतिहास के लेखक का कहना है कि १३६१ ६२ वि (१३०५ ई) में सलखा ने अपनी बहन विमलादे का विवाह घडसी भाटी से कराया। सलखा की बहन तो मल्लीनाथ की भुवा हो जाती है। मल्लीनाथ की लडकी और जगमाल की बहन का जैसलमेर के शासक रावल केलण से विवाह होना भी वे लिखते हैं—इस विवाह का समय वि १४३२ के लगभग ठहरता है।[१७] सभवत इसी विवाह की ओर नैणसी ने भी इशारा किया है परन्तु वे केलण के स्थान पर घडसी भाटी ही लिख रहे हैं। "मालानी का इतिहास (अप्रकाशित) के लेखक ने विमला या विमलादे को मल्लीनाथ की छोटी बहन माना है। सभवत उन्होंने राठौडों की वशावली को आधार माना हो।

जैसलमेर का तवारीख और श्री हरिसिंह भाटी दोनों ही घडसी भाटी पर वन विहार के समय अचानक हुए आक्रमण और उनकी मृत्यु की चर्चा करते हैं। हत्या हो जाने पर घडसी के शरीर को उनका घोडा किले के अन्दर तक ले आया। तब उनकी रानी विमला दे ने किले के दरवाजे बद करवाये। छ मास की अवधि तक वह सती नही हुई — राजकाज सम्हालती रही। फिर उसने केहर को गोद लेने के बाद चिता प्रज्वलित करा अग्निप्रवेश किया। यह घटना १४१८ वि की बतायी जाती है।[१८]

विमला दे के विषय में यह भी श्रुति परम्परा है कि उसका प्रथम विवाह देवडों (चौहानों की शाखा) के यहा पर हुआ। परन्तु मल्लीनाथ के सहयोगी के रूप में युद्ध करते हुए घडसी भाटी घायल हो गये थे उनकी सेवा टहल विमलादे के कधों पर आयी। यह सपर्क सबधों में बदल गया। विमला दे ने विवाहित पतिव्रता स्त्री के व्रत को निभाया। उसके यश को मुहता नैणसी ने भी गाया है—

बड रावळ सरगापुर वसियो विमला दे सहितो बैकुण्ठ।[१९]

एक ओर घडसी की मल्लीनाथ के समसामयिक होने की बात को कवि ढाढी बादर "वीरवाण" में स्वीकार करते हैं तो दूसरी ओर राठौडों की वशावलियों के आधार पर मारवाड के इतिहासकार मल्लीनाथ का जन्म (१४१५ वि) लगभग उस समय स्वीकार करते है जो घडसी भाटी का अन्तिम चरण ही स्वीकार किया जा सकता है। हाल ही में राव गणपतसिंह चीतलवाना जालौर को मिले मल्लीनाथ के वि १४३७ के ताम्रपत्र से उनके शासन काल की अवधारणा स्थापित की जा सकती है।[२] परन्तु उनका जन्म

१४१५ वि जिन आधारों पर तय किया गया है उनके प्रमाण ही संदिग्ध दिखाई देते हैं।

प विश्वेश्वरनाथ रेउ ने राव सीहा का जन्म १२५१ वि स्वीकार करते हुए हर उत्तराधिकारी का जन्म प्रति व्यक्ति १८ वर्ष बाद निर्धारित किया है। इस आधार पर सलखा का जन्म १३९७ वि माना गया है और मल्लीनाथ का जन्म १४१५ वि ठहरता है।[२१] काव्यों और ख्यातों में मिलने वाले विमलादे के १३६२ वि में घडसी के साथ विवाह की समस्या विमला दे को सलखा की बहन मानने पर भी सुलझती नहीं है बल्कि और उलझ जाती है जबकि मल्लीनाथ की पुत्री का केलण के साथ विवाह का समय फिर भी उचित जान पडता है।

इसी सबध में ख्यातों में मिलने वाले एक और सदर्भ पर भी विचार करना आवश्यक है। मुहता नैणसी ने[२२] "रावल मालोजी री बात में मल्लीनाथ के अन्तकाल में रोगग्रस्त होने की चर्चा की है। उस समय प्रदेश में लूट खसोट करने वाले हेमा को दण्ड देने के लिए आयोजित दरबार में मल्लीनाथ के बेटे पोते बैठे थे उमराव हाजिर थे। हेमा को दण्डित करने का बीडा कुभा जगमालोत ने उठाया। उसके कुछ समय पश्चात् मल्लीनाथ का स्वर्गवास हुआ और जगमाल ने राजकाज सम्हाल लिया। कुछ ही समय बाद उमरकोट के राणा सोढा माडण की पुत्री की सगाई कुभा के साथ हो गई। यदि इस बात पर विचार करें तो मृत्यु के समय मल्लीनाथ की आयु लगभग ५० ५५ या इससे भी अधिक होना माना जा सकता है। ऐसी परिस्थितियों में उनका जन्म वि १३८० १४०० के मध्य कहीं पर निश्चित किया जा सकता है।[२३]

इसी आलोक में मारवाड के प्रसिद्ध सन बाबा रामदेव के सबध में हम विचार कर लें तो उचित रहेगा। तवरों के इतिहास से सबधित "तवरों की ख्यात में रामदेव और मल्लीनाथ के भाईचारे का सदर्भ मिलता है।[२४] रामदेव की भतीजी का जगमाल के साथ विवाह कराने पर रामदेव जी अप्रसन्न हो गये और उन्होंने अपने गाव में प्रवेश करना स्वीकार नहीं किया। रामदेव के पिता अजमल व माता मैणादे थीं। एक मौखिक परम्परा के अनुसार अजमल रहवास के लिए स्थान मागने के लिए मल्लीनाथ के पास गये थे और उन्हें पोकरण इनायत की थी।

रामदेव व उनके साहित्य के अधिकारी विद्वान् डा सोनाराम बिश्नोई ने काफी ऊहापोह के बाद रामदेव का समय १४०९ ४२ वि ही स्वीकार किया है। स्वय बाबा रामदेव की वाणी इसी का प्रतिपादन करती है—

समत चतुरदस साल नव में श्रीमुख आप जगायो।
भणै रामदेव चैत सुद पाचै अजमल घरमें आयो॥[२५]

इस आधार पर हमें यही स्वीकार करना होगा कि अजमल मल्लीनाथ के पिता या प्रपिता के पास पहुचे होंगे—क्योंकि स्वय मल्लीनाथ और बाबा रामदेव समसामयिक

रहे हैं।

दस असल प रेउ और उनका अनुसरण करने वाले विद्वानों ने राव सीहा का जन्म वि १२५१ मानने से ही राठौडों के प्रारम्भिक इतिहास की तिथिया अन्य स्थानों की घटनाओं अथवा इतिहास से मेल नहीं खाती हैं। मेरे विचार से इन तिथियों पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता है जिसे इतिहासज्ञों के विवेक पर छोडना ही अधिक उचित रहेगा।

बहरहाल श्री शिवसिंह चोयल ने जो १३८५ वि मल्लीनाथ के जन्म का समय माना उसमें आंशिक सशोधन करते हुए इस समय को १३८० १४०० वि के मध्य कहीं मानना श्रेयस्कर रहेगा। वि १४३७ का गूगा गाव दान में देने का ताम्रपत्र तथा मल्लीनाथ के भतीजे (वीरम के पुत्र) राव चूडा द्वारा किए मडोवर विजय के पश्चात् चूडा के साथ मल्लीनाथ की उपस्थिति के सदर्भ उनके परवर्ती समय को १४५३ वि के बाद तक ले जाते हैं। इन आधारों पर अथवा अनुमानों पर मल्लीनाथ का समय १३८० १४५६ वि स्वीकार करना अधिक तर्कसगत एव समीचीन प्रतीत होगा।

३ मल्लीनाथ की राजनैतिक उपलब्धिया—

मल्लीनाथ के पूर्वजों का विचार करते समय यह बात स्पष्ट रूप से सामने आ गई है कि मल्लीनाथ का मारवाड के राठौडों के शासन में सीधा अधिकार या दखल नहीं हो सकता था क्योंकि वह शासक कान्हडदे के भाई सलखा का ज्येष्ठ पुत्र ही तो थे—अर्थात् कान्हडदे के "सलखा वासणी" गाव के जागीरदार के उत्तराधिकारी। फिर भी अपने चातुर्य और साहस तथा बुद्धिमानी के आधार पर जागीरदार का पुत्र माला किस प्रकार खेड महेवा का शासक हुआ और फिर किस प्रकार बडी आसानी से राज का त्याग कर भोगी से वह योगी बना यह कथा आपको वास्तव में ही मनोरजक और सुरुचिपूर्ण लगेगी।

मारवाड के प्रसिद्ध इतिहासकार मुहता नैणसी ने माला या मल्लीनाथ की किस प्रकार कान्हडदे से घनिष्ठता हो गई इस सबध में अनुश्रुति के आधार पर एक बात लिखी है। राव सलखा की मृत्यु होने पर मालोजी अपने भाइयों को साथ लेकर कान्हडदे के पास पहुचे और उनके साथ रहकर राजकाज में सहायता करने लगे।[२६]

एक दिन रावजी कान्हडदे शिकार खेलने के लिए गए थे उनके सहयोगी राजपूत सरदारों के साथ मालोजी भी उनके साथ थे। वे शिकार खेले किन्तु सन्तोष नहीं हुआ। जब वे लौटने लगे तो मालोजी ने कान्हडदे का पल्ला पकड लिया और अपने ताऊ से कहने लगे—मुझे राज की धरती में अपना हिस्सा चाहिए वह देंगे तब पल्ला छोडूगा।" कान्हड ने समझाने का बहुत कोशिश की किन्तु मालोजी नहीं माने। ताऊ-भतीजे का विवाद था सरदार क्या बोलते। वे एक ओर जाकर खडे हो गये हस्तक्षेप करने की किसी की हिम्मत नहीं पडी। वे कहने लगे—भाई यह चाचा भतीजे के बीच की बात है हम क्या जानें? तब हारकर कान्हड ने कहा—अच्छी बात है धरती का (राज्य का)

वेरह तुगा भाजिया मालै सळखाणी।"

यह घटना वि १४३५ की बतायी जाती है।[३] पराक्रम और सूझ बूझ से मल्लीनाथ ने अपने राज्य का काफी विस्तार किया। परन्तु अपने भाई जैतमाल को सिवाणा वीरमजी को खेड और शोभितजी को ओसिया जागीर में देकर सन्तुष्ट रखा।

मल्लीनाथ द्वारा किए गए युद्धों की अथवा उनकी राजनैतिक उपलब्धियों की चर्चा में वीरवाण और उसके मुसलमान कवि ढाढी बादर (बहादुर) ने मल्लीनाथ के युद्धों का जो जिक्र किया है वह भी कम मनोरजक नहीं है।[३१]

अहमदाबाद के मुसलमान सुलतान महमूद बेगडा के साथ मल्लीनाथ और उनके पुत्र जगमाल द्वारा किए गए युद्ध और सुल्तान की या किसी उसके सेनानायक की गींदोली नामकी कन्या के जगमाल द्वारा किए गए अपहरण की कथा को ढाढी बादर ने वीरवाण में काव्यबद्ध किया है। परन्तु ऐतिहासिक प्रमाणों पर यदि इसकी समीक्षा करने लगें तो इसमें सन्देह दिखाई देगा।

गुजरात के महमूद बेगडा का जन्म १४४५ ई (१३८८ वि) व राज्यारोहण २७ मई १४५८ ई का है।[३२] मारवाड के इतिहास के उपलब्ध स्रोतों के अनुसार मल्लीनाथ का समय अधिकतम १४५६ वि (१३९९ ई) तक माना जाता है। इसलिए ढाढी बादर ने "राव मालदे रो समो" लिखकर महमूद बेगडा के युद्ध में मल्लीनाथ का उपस्थित होना दिखाया है वह तर्कसगत नहीं है। दूसरे १४०० ई के आस पास जब जगमाल महेवा का शासक हुआ तो वह कम से कम ३० ३५ वर्ष का रहा होगा। महमूद बेगडा की प्रथम सन्तान यदि लडकी हो तब भी १४६३ ई से पूर्व उसका जन्म भी होना सभव नहीं है उसके अपहरण की बात तो बहुत दूर है। अत इस सिलसिले में मुझे इतना ही कहना है कि यदि वास्तव में मल्लीनाथ की उपस्थिति में जगमाल द्वारा युद्ध कर किसी गींदोली का अपहरण किया गया है तो उसका गुजरात के किसी अन्य व्यक्ति से ही सबध स्थापित किया जा सकता है महमूद बेगडा से कतई नही। ठीक इसी प्रकार युद्ध में जैसलमेर के शासक रावल घडसी का होना भी सभव प्रतीत नहीं होता है।

मल्लीनाथ की राजनैतिक चर्चा उनसे सबधित व्यक्तियों में राव चूडा की बात किए बिना अधूरी रहेगी। मल्लीनाथ के भाई वीरम का यह पुत्र था। जोहिया (जो मुसलमान हो गये थे) राजपूतों के साथ हुए युद्ध में वीरम वि १४४० (ई १३८३) मारा गया था। नैणसी ने इस वृत्तान्त में लिखा है कि वीरम की पत्नी सती हो गई और मरते समय अपने पुत्र चूडा को आल्हा चारण के हाथों में सौंप गई।

उस चारण ने चूडा का पालन पोषण कर समय आने पर उसे लेकर मल्लीनाथ के पास पहुचा दिया। मल्लीनाथ ने सहज स्नेह से स्वीकार कर उसे गुजरात की सीमा पर काठा नामक स्थान पर लगाया। बाद में उसे मडौर के पास सालोडी नामक स्थान की चौकी पर रखा। इसी चूडा ने ईंदो के साथ मिलकर मडोर में घास की गाडियों

में अपने सैनिकों के साथ प्रवेश किया और मुसलमान अधिकारियों और उनकी सेना से युद्ध कर मडोर पर कब्जा किया। यह खबर मल्लीनाथ तक पहुच गयी। व मडोर पहुचे और चूडा को आशीर्वाद देते हुए पट्टाभिषेक कर उसे मडोर का शासक घोषित किया[३३] और स्वय के परिवार के लिए महेवा का प्रदेश मात्र रखा। तबसे यह उक्ति लोकप्रसिद्ध है कि मल्लीनाथ के वशज "मढ" में और वीरम के वशज "गढ में रहेंगे।

"माला रा मढे ने वीरम रा गढे।"

सोलहवीं शती के पूर्वार्द्ध में लिखे सूर्यसिहवशप्रशस्ति में मल्लीनाथ के पराक्रम का वर्णन करते हुए लिखा कि वह असीम साहस वाला व्यक्ति था—रात में दिल्लीश्वर की हत्या कर उसने त्वरित गति से आकर गुजरात को जीत लिया था—

"निहन्तुमहितव्रित तिमिरलगभामैकत
समागमदितोन्यतो निखिलगुर्ज्जराधीश्वर।
असावसमसाहसो निशि निपत्य दिल्लीश्वर
प्रभातसमये जवादुपगतोजयद् गुर्ज्जरम्॥"[३४]

एक शासक के रूप में मल्लीनाथ की उपलब्धिया निश्चय ही प्रशसनीय हैं। उन्होंने महेवा खेड पर अपना आधिपत्य कायम रखा अपने भाइयों को भिन्न भिन्न स्थानों पर भेजकर राठौडों की सत्ता का विस्तार किया और चूडा को सरक्षण देकर मडोर को राठौड सत्ता का आधार बनाया। वे साहित्य और कलाओं के आश्रयदाता रहे। मेहा रोहडिया और मोकल बारहठ को उन्होंने साबरा और बागूडी गाव दान में दिये थे। वि १४३७ में गूगा गाव उनके द्वारा दान में दिए जाने का हाल ही में एक सदर्भ सामने आया है। "मालाणी का इतिहास" (अप्रकाशित) के लेखक ने उनके द्वारा चारणों को १२ गाव दान में दिये जाने का भी उल्लेख किया है।[३५] मल्लीनाथ के पराक्रम का वर्णन करने में कवियों की वाग्धारा प्रवाहित हो उठी। उनके पराक्रम और त्याग की दोनों ही परम्पराए उनके उत्तराधिकारियों ने सुरक्षित रखी हैं।

मल्लीनाथ के उत्तराधिकारी के रूप में उनके कितने पुत्र हुए ये यह सख्या बताना कठिन है। उनके दो विवाह हुए थे—पहला राणी चन्द्रावळ से और दूसरा राणी रूपादे से। जसोल के निकट बालोतरा नामक स्थान पर उपलब्ध हुई "गुसा री बही" में उदैसी जगपाल कूपा जगमाल अडमाल हेम बणवीर नाथा रामा नादा और मेहा ये इनके ११ पुत्र बताये हैं।[३६] भाडियावास के चारण बुधा आशिया की बही में ८ नाम दिये गये हैं—जगमाल कूपा जगपाल अडमाल मेरा सूरसी वीरमसी और करना।[३७] "मालाणी के गौरव गीत के सपादक श्री सौभाग्यसिंह शेखावत ने १२ पुत्रों की सूची दी है[३८] —जगमाल जगपाल कूपकरण महिराज चूण्डराव अडकमल्ल उदैसी हरिब्रह्मा रामसी नाथसी व नादकरण। परन्तु ख्यातों में उपलब्ध होने वाले पश्चात्वर्ती सदर्भों के आधार पर प रेउ ने उनके केवल ५ पुत्र होना ही स्वीकार किया है—जगमाल व

और अडकपाल।[३९]

गुजरात और दिल्ली के यवन शासकों से टक्कर लेते हुए परिहार चौहान और भाटियों से कभी युद्ध कर तो कभी परस्पर सामजस्य से महेवा खेड प्रदेश में राठौडों की सत्ता को दृढमूल करने का श्रेय जहा मल्लीनाथ को दिया जाना चाहिये वहीं पर उनकी इस बात के लिए भी प्रशसा करनी चाहिये कि उन्होंने भाई भाई में कोई विवाद या झगडा पनपने का मौका ही नहीं देकर उनका स्नेह भी प्राप्त किया और उनका उपयोग राठौडों की शक्ति के विकास में लगाया। परन्तु मल्लीनाथ के जीवन का उद्देश्य यहीं पर सीमित नहीं होता है। राजसत्ता का भोग करते हुए और आठों प्रहर राजनीति के चक्रों में फसा हुआ मनुष्य अपनी आत्मशक्ति को जागृत कर धीरे धीरे कैसे विरक्त बनता है ससार में रहते हुए वह असंसारी रहता है और योग और साधना के बल पर कैसे स्थितप्रज्ञ अवस्था से परमहस की अवस्था तक पहुच जाता है—यह मल्लीनाथ के जीवन का दूसरा पहलू है।

राज्य पर शासन करते करते कैसे वह लाखों मनुष्यों के मन पर आसीन होकर देवता बन जाता है यही कहानी तो मालोजी सलखाउत के मल्लीनाथ बनने की है इस कहानी की सूत्रधारिणी है उनकी राणी रूपादे—जिसके पद और वाणिया आज लाखों श्रद्धालुओं द्वारा प्रतिदिन गायी जाती हैं। दरअसल मल्लीनाथ के इस रूप का आभास जो बाद में सत् में बदल गया उनके जन्म के पूर्व से ही होने लगा था। उस पूर्व आभास की कथाए अनुभूति के रूप में मारवाड में सुनी जा सकती हैं कदाचित् पढने को भी मिल जाय। उनको दोहराने से पुनरावृत्ति का दोष नहीं लगेगा क्योंकि जितनी भी बार वे दोहरायी जाय अधिक से अधिक पुण्य देने वाली ही सिद्ध होंगी।

४ लोकोत्तरता का पूर्वाभास—

मल्लीनाथ और रूपादे से सबद्ध वार्ताओं अथवा परम्पराओं के अलावा मल्लीनाथ के जन्म के सबध में अनेक प्रकार की कथाए या बातें सुनने में आती हैं। एक कथा तो छन्दोबद्ध रूप में मारवाड के ग्रामीण श्रद्धालुओं द्वारा आज भी गायी जाती है। इस प्रकार की कथाओं का निरूपण मैं इस उद्देश्य से नहीं करना चाहता हू कि प्रारम्भ से ही मल्लीनाथ पर महत्ता थोपी जाय बल्कि उनका कथोपकथन इसलिए भी आवश्यक है कि वे जनसामान्य की उनके प्रति सदियों तक चली आ रही निष्ठा और भक्ति की परिचायक हैं।

राव सलखा आप जानते ही हैं कान्हडदे के छोटे भाई थे—उन्हें एक गाव जागीर में मिला था। उसका नाम हो गया था—सलखा वासणी। अपने गाव की जागीर सम्हालते सम्हालते बहुत समय बीत गया किन्तु सलखा को सन्तान का सुख नहीं मिल पाया। सब कुछ होते हुए भी पुत्र न होने से वे दुखी रहने लगे।[४]

एक दिन जब वह शिकार पर गये थे दोपहर को धूप तेज हो गया। जगल में

चलते उनके साथी पीछे रहे गये। अकेले ही ४५ कोस चल देने पर सलखा को प्यास सताने लगी। पानी की तलाश में घुमते घूमते पेडों का एक समूह उन्हें दिखाई दिया। कुछ समीप जाकर देखा तो उस स्थान पर धुआ निकल रहा था। तपता धूणा के पास एक जोगी अपनी तपस्या में लीन था। सलखा जाकर कुछ समय जोगी के पास खडा रहा फिर उसने जोगी के चरण स्पर्श किए।

जोगी ने पूछा—कहा रहते हो? तब सलखा ने कहा—मैं तो शिकार खेलने के लिए आया हू। मेरे सगी साथी पीछे रह गये हैं और मैं अकेला ही शिकार के पीछे दौडता हुआ आगे निकल गया। प्यास से मरा जा रहा हू, इसलिए कृपा कर आप मुझे पानी पिलाइये।"

जोगी ने पास में रखे कमडल की ओर इशारा करते हुए कहा—यह रहा कमडल इसमें पानी है। तुम पी लो और घोडे को प्यास लगी हो तो उसे भी पिलावो। और क्या ही आश्चर्य स्वय ने पीकर घोडे को पानी पिलाया फिर भी कमडल का पानी ज्यों का त्यों। तब सलखा को लगा कि वास्तव में यह कोई महान् सिद्धपुरुष दिखाई देता है। सन्तानहीन होने की बात से पीडित सलखा ने जोगी से विनति की—महाराज! मेरे पास धन वैभव सम्पत्ति सब कुछ है किन्तु पुत्र न होने का दुख मुझे हमेशा काटता रहता है।

जोगी ने अपनी झोली में हाथ डालकर विभूति का एक गोला और चार सुपारिया निकाल सलखा को देकर कहा—यह भस्मी का गोला राणी को दे दें तेरा बडा पुत्र होगा उसका नाम मल्लीनाथ रखना। तुम्हारे चार पुत्र होंगे किन्तु उत्तराधिकार तुम अपने बडे बेटे को ही देना। सलखा ने घर आकर जैसा जोगी ने कहा था वैसा ही किया। फिर उसके घर एक पुत्र ने जन्म लिया। समयत अन्य पुत्रों ने जन्म लेकर उसके घर को स्वर्ग बनाया।

कुछ सालों बाद सलखा ने बडे बेटे को टीका दिया। इस अवसर पर खास आमत्रण देकर जोगी को बुलाया। जोगी के वस्र पहनाकर बडे बेटे का नाम रावल मल्लीनाथ रखा गया। इस घटना का एक दोहे में भी यों स्मरण किया जाता है—

सातम ने सोमवार सलखे वाली सिवरी सेवना।
सलखा ने तूठौ शभूनाथ दीधो मोभी डीकरो॥

कभी शभूनाथ की जगह रतननाथ का नाम भी लिया जाता है।

इसी प्रकार की एक अन्य अनुश्रुति भी बहुत मनोरजक है—किन्तु वह मल्लीनाथ की राज्य प्राप्ति से अधिक जुडी हुई है। बात यह हुई कि सलखा की राणी के पैर भारी हो गये थे तब किराने की जरुरी वस्तुए लाने सलखा महेवा नगर आये थे। बणिये से जब सौदा ले लिया तो उसे एक राठी जाति के व्यक्ति के सिर पर रख और स्वय घोडे पर सवार होकर सलखा अपने गाव जा रहे थे। रास्ते में उन्होंने देखा कि चार

नाहर बैठे बैठे अपना भक्ष्य खा रहे हैं। सलखा घोडे से उतर जमीन पर बैठ गये। राठी ने कहा-(इस शकुन के बारे में) मैं पूछ आता हू। सलखा की स्वीकृति लेकर राठी दौडा दौडा कान्हडदे के पास गया और कहने लगा—सलखा जी किराना लेकर अपने गाव जा रहे थे मेरे सिर पर सामान का बोझ लदा हुआ था। तब एक शुभ शकुन हुआ। किराने की लायी हुई वस्तुए जिसको राणी खाएगी उसका बेटा भूमि का स्वामी होगा। आप सामान और सलखाजी को घेर लो यही कहने मैं आया हू।

किन्तु ईश्वर की इच्छा बलवती होती है। न तो कान्हडदे का कोई आदमी पहुचा और न ही वह राठी। बडी देर तक सलखा जी प्रतीक्षा करते रहे। राठी को न आते देख सामान को घोडे पर आगे रख उन्होंने आगे की यात्रा शुरू की। बाद में कान्हडदे के आदमी आये लेकिन खाली हाथ लौट गये। राठी सलखावासणी पहुच गया। राव के निवास पर जाकर बधाई दी—तुम्हारे चार बेटे होंगे अच्छी ठकुराई रहेगी धरती पर नाम होगा। सभी लडके पराक्रमी और कर्मप्रधान होंगे।[४१]

सलखा ने और ज्योतिषियों को भी पूछा और प्रसन्न होकर राठी के पगडी बधवाई। फिर मालोजी का जन्म हुआ। फिर जैतमाल वीरम और शोभित। चारों बेटे धीरे धीरे बडे होने लगे। मल्लीनाथ ने कान्हडदे की सेवा कर किस प्रकार राजसत्ता प्राप्त की यह आप पढ चुके हैं। मालोजी के जन्म के सबध में एक और अनुश्रुति भी जुडी हुई है परन्तु वह रूपादे के साथ भी जुडी है इसलिए उसकी चर्चा रूपादे के साथ करना ही ठीक रहेगा।

ऊपर जिन दो अनुश्रुतियों का उल्लेख किया है—उनमें से एक का सबध सीधा नाथों अथवा सिद्धो से है—यानी यहा तक कि रावल मल्लीनाथ यह उपाधि युक्त नाम भी योगियों का ही दिया हुआ है। मल्लीनाथ की राजनीतिक उपलब्धियों की चर्चा के दौरान हम यह भी देख चुके हैं कि दिल्ली के बादशाह ने उन्हें रावल का तिलक किया था। नाथ सम्प्रदाय और उसके अनेकविध विस्तार की चर्चा करने वाले विद्वानों ने भी रावल शब्द की बहुविध व्याख्या करने का प्रयास किया है। यहा तक कि नाथों में रावल पीर" नाम की सिद्धों की एक शाखा का ही विकास होने के सबध में अनेक प्रमाण उपस्थित किए जा सकते हैं।[४२] अत रूपादे मल्लीनाथ की कोई बात प्रस्तुत करने से पूर्व तत्कालीन धार्मिक परिवेश का चित्रण भी यहा आवश्यक हो जाता है। उसकी इसलिए भी आवश्यकता है कि यह विवरण रूपादे—मल्लीनाथ को समझने में उतना ही सहायक है जितना की उनसे सबधित भक्ति साहित्य।

५ तत्कालीन धार्मिक परिवेश—

राठौडों का मारवाड में आने का समय लगभग वि की १३वीं शती का पूर्वार्ध है। यह बात भी सही है क्नौजिये राठौडों से पूर्व मारवाड में राष्ट्रकूट वश के कुछ शासकों के यत्र तत्र स्थान बने हुए थे उनके अलावा सोलकी चौहान परिहार और इनस

भी पूर्व मेवाड में सिसोदिया वश अपनी सत्ता को स्थिर किए हुए था और इस भी आश्चर्यकारक समानता ही कहा जाएगा कि इन सभी वशों का किसी न किसी रूप में पाशुपत सम्प्रदाय अथवा लकुलीश सम्प्रदाय से सम्बद्ध होना ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर सिद्ध हो चुका है और इस सिलसिले में उनकी उपाधि रावल का विचार करना आवश्यक है क्योंकि यही उपाधि मल्लीनाथ से भी जुडी हुई है जो पर्याय से उनके नाथों से जुडे होने का सकेत माना जा सकता है।

नाथ सम्प्रदाय के १२ पथ या मत माने जाते हैं। कहा जाता है कि इनमें से ६ पथों का उपदेश स्वय भगवान् शिव ने दिया शेष ६ का सगठन गोरक्षनाथ ने किया।[४३] जैसा कि प्रसिद्ध है गोरक्ष मत्स्येन्द्र के शिष्य थे। गोरक्ष के समय के सबध में मिलने वाले ऐसा प्रमाणों की विस्तृत चर्चा करते हुए प द्विवेदी ने उनका समय ई ११वी शती का प्रारम्भ माना है[४४] और निश्चय ही इससे पूर्व हुए आचार्यों को हमें ९ ११ वी शती के बीच कहीं मानना पडेगा। गोरक्षनाथ की शिष्य परम्परा में १ हेठनाथ २ कारकाई ३ पूहाई ४ चारनाथ ५ बैरागनाथ ६ भावनाथ और ७ धजनाथ हुए थे।[४५] इनम से बैरागनाथ का पथ अथवा उसकी शिष्य परम्परा मारवाड में विकसित हुई।

बैरागनाथ की शिष्य परम्परा में भर्तृहरि या राजा भरथरी के नाम से आप सभी परिचित हैं। भरथरी के तीन शिष्य हुए—भईनाथ पूतननाथ और प्रेमनाथ।[४६] भर्तृहरि का समय जैसा प द्विवेदी जी ने सुझाया है १२वी शती स्वीकार किया जा सकता है तो मल्लीनाथ के जन्म को लेकर प्रचलित श्रुति परम्पराओं में जिस रतननाथ का तूठो रतननाथ सदर्भ आता है उसे भी स्वीकार करने के लिये पर्याप्त कारण उपस्थित हो जाते हैं।

नाथों में दो प्रकार के साधक होते हैं—कौल और योगी। जो बाह्य साधना करते हैं वे कौल हैं और जो अन्त साधना करते हैं वे योगी हैं। कुल का अर्थ है शक्ति अकुल का अर्थ है शिव। कुल से अकुल बनने वाला या तदर्थ प्रयत्न करने वाला व्यक्ति कौल है। कौल और योगी दोनों का लक्ष्य एक ही होता है अन्तर इतना ही है कि योगी प्रारम्भ से ही अन्तसाधना में प्रवृत्त होता है जबकि कौल बाह्य उपासना के आधार पर शनै शनै अन्त उपासना की ओर प्रवृत्त होता है। कोई कोई यह भी मानते हैं कि मल्लीनाथ कौल थे मेरी इस विषय में अब तक कोई निश्चित धारणा नहीं है परन्तु अनुमान है कि वे योगी थे।[४७]

नाथों में रावल सम्प्रदाय नाम से योगियों की एक बडी भारी शाखा रही है। कुछ लोगों का यह मानना है कि रावल राजकुल का अपभ्रष्ट रूप है और क्या ही सयोग का बात है कि राजस्थान गुजरात के मल्लीनाथ के पूर्व के तीनों राजवश १ मेवाड के सिसोदिया २ आबू के परमार ३ जालोर के चौहानों ने राजकुल (राउल रावळ) विरुद को धारण किया है। आबू के देलवाडा मदिर पर उत्कीर्ण शिलालेख श्री चद्रावतीपति राजकुल श्रीसोमदेवेन तथा साचौर का शिलालेख महाराज कुल श्री सामन्त सिंह देव

कल्याण विजय राव्ये को परमारों और चौहानों के विरुद के प्रमाण रूप में देखा जा सकता है।[४८]

यहा पर एक राजवश की चर्चा भी आवश्यक है—वह है भाटी वश। भाटियों के इतिहास पर विस्तृत प्रकाश डालने वाले श्री हरिसिंह भाटी ने लिखा है कि देरावर में देवराज का राज्याभिषेक करने वाले भी कोई जोगी रतननाथ थे। ई ८५२ में देरावर में किले का निर्माण कर देवराज ने सिंहासनारोहण किया था। उसे रावळ सिद्ध" की उपाधि रतननाथ ने दी थी। भाटी शासक गजनी लाहौर भटनेर मरोठ देरावर तणोत लुद्रवा होते हुए जैसलमेर पहुचे थे। रावळ की उपाधि केवल जैसलमेर के शासक ही लगाते थे पूगळ के नहीं। सभवत नाथों की कृपा से राज्य प्राप्ति होने से ही भाटियों में नाथों को प्रथम सम्मान दिये जाने की परम्परा है।

मेवाड में सिसोदिया वश के मूलपुरुष "बाप्पा रावळ के साथ जुडा रावळ शब्द बहुत प्रसिद्ध ही है। कई विद्वान् बाप्पा को गोरखनाथ का समसामयिक भी मानते हैं परन्तु प गौरीशकर हीराचद ओझा ने बाप्पा का समय ई की ८वीं शती का पूर्वार्द्ध माना है। एकलिंगमाहात्म्य में एकलिंग जी से बाप्पा को वर मिलने की बात का भी जिक्र हुआ है और यह भी बात प्रसिद्ध है कि बाप्पा के गुरु के सबध में जितनी भी श्रुत अथवा लिखित परम्पराए हैं उनमें गुरु का नाम हारीत ऋषि या हारीत राशि बताया गया है।

उदयपुर के निकट एकलिंग का मदिर है यही एकलिंग जी मेवाड के राजवश के कुलदैवत भी हैं। इस मदिर में ९७१ ई का जो लेख पाया जाता है वह उसकी पूर्वकालीन स्थिति को ही प्रमाणित करता है।[४९] प्रसिद्ध विद्वान फ्लीट ने १९०७ ई में लिखे एक प्रबन्ध में यह भी सप्रमाण सिद्ध किया है कि एकलिंग मदिर मूलत लकुलीश सम्प्रदाय का मदिर है। इस सिलसिले में बाप्पा को पाशुपत सम्प्रदाय से जोडने वाला प्रमाण उसका स्वय का सिक्का है जो अजमेर से प्राप्त हुआ था।[५०]

सिक्के से सामने की तरफ १ वर्तुलाकार माला के नीचे "श्री बाप्पा लिखा हुआ है। २ वर्तुलाकार माला के बाई ओर त्रिशूल और ३ त्रिशूल की दाहिनी ओर दो पत्थरों पर शिवलिंग अकित है ४ शिवलिंग के दाहिनी ओर नदी। इन दोनों के नीचे बाप्पा का अर्धवेश अग है और ५ पीछे कामधेनु है। प ओझा ने इसे लकुलीश सम्प्रदाय के कनफडे साधु हारीत ऋषि की कामधेनु होने का अनुमान प्रकट किया है। इस सिक्के का चित्रण स्वय इस बात का प्रमाण है कि बाप्पा लकुलीश सम्प्रदाय के अनुयायी रहे हैं।

पाशुपत अथवा लकुलीश सम्प्रदाय का प्रादुर्भाव अवान्तर उपनिषदों के काल की देन माना जाता है। प द्विवेदी के अनुसार लकुल मत अवैदिक था एव समाज के निचले स्तर में ही उसे मान्यता रही थी। रावळ शब्द वस्तुत इसी लकुल का ही रूपान्तर है।

बाप्पा ने इस मत का स्वय को अनन्य भक्त सिद्ध करना चाहा था और इस बात के भी निश्चित प्रमाण हैं कि रावल या लाकुल पाशुपत गोरक्षनाथ के सम्प्रदाय में मिल गये थे। गोरक्ष के अनुयायी धर्मनाथ के सबध में प्रसिद्ध एक अनुश्रुति भी रावळ शब्द पर प्रकाश डालती है।[५१]

धर्मनाथ पेशावर से धिनोधर आये थे और चारण देवी नामक विधवा के हाथ में से पुनर्वार पैदा हुए थे और इस पुनरुद्भूत सिद्ध का नाम रावल पीर पडा था। रावल पीर और लाकुल गुरु का शब्दसाम्य देखते ही बन पडता है।

लकुलीश सम्प्रदाय जैसा कि पहले कहा गया है समाज के निचले स्तर के व्यक्तियों को साथ लेकर चला था। इसलिए वैदिकों और भागवतों ने इसका विरोध किया। परन्तु जैसे राजकुल इससे जुडते गए इसका व्यापक प्रचार होने लगा यहा तक कि इसमें मुसलमानों का प्रवेश हो गया अथवा योगियों को इस शाखा में कुछ मुसलमान व्यक्ति आते गये। ११वीं के पूर्वार्द्ध में जब गोरक्षनाथ ने सम्प्रदायों का सगठन करना प्रारम्भ किया होगा तो लाकुलों का भी सभवत इसलिए समावेश कर लिया होगा कि इनके शास्त्रज्ञ सम्प्रदाय की प्रतिष्ठा पा गये होंगे। राजस्थान के कई मंदिरों में लकुलीश की उपलब्ध मूर्तियों को भी इसके व्यापक प्रभाव के रूप में देखा जा सकता है।[५२]

ये रावल नागनाथी रावल भी कहे जाते हैं। डॉ बर्गीज ने एलोरा की गुफाओं में उपलब्ध शिव के योगी की मूर्ति का एक चित्राकन प्रकाशित किया था। उसमें बायें हाथ में लाठी (लकुटी लगुडी) लिए हुए शिव पद्मासन में विराजित हैं और पद्म नागों की पृष्ठ पर आधारित है। इस प्रसग में उल्लेखनीय है कि मारवाड जोधपुर के निकट मडोर में नागादडी आदि स्थान उपलब्ध हैं। राठौडों की कुल देवी भी नागणेची है। प गोविन्दलाल श्रीमाली ने तक्षक (टाक) क्षत्रियों के इस भू भाग पर शासन रहने की बात को भी स्वीकार किया है।[५३] अत इस विषय में यह भी अनुमान किया जा सकता है कि उक्त नागनाथी रावल शाखा के योगियों का इस भू भाग पर भी कोई प्रभाव रहा हो।

लकुलीश सम्प्रदाय की ऊपर की गई चर्चा से कुछ बातें उभरकर सामने आती है। पहली बात यह है कि मल्लीनाथ से पूर्व राजस्थान में नाथ मत का पर्याप्त प्रभाव था और पाशुपत अथवा लकुलीश मत का नाथों के अन्तर्गत समावेश कर लिया गया था। दूसरी बात यह है कि राजस्थान के शासकों का नाथ सिद्धों और योगियों से पर्याप्त सपर्क था और बाप्पा या देवराज भाटी जैसे उदाहरणों में रावल की उपाधि इन शासकों को उनके गुरुओं द्वारा दी गई थी। रावळ राजकुल या लाकुल का पर्याय अथवा रूपान्तरित शब्द स्वीकार किया जा सकता है। इस आधार पर यह सहज ही अनुमान किया जा सकता है कि मल्लीनाथ की रावल उपाधि जैसी एक श्रुति परम्परा भी है शासकीय न होकर रतननाथ शभूनाथ या किसी अन्य योगी गुरु द्वारा दी हुई होनी चाहिए। इस सबध

में पूज्य डा मनोहर शर्मा मेरे अनुमान से सहमत नहीं है किन्तु तत्कालीन परिस्थितियों को देखते हुए यह सभावना व्यक्त करने में तो कोई आपत्ति नहीं है। योगियों की तरह कुछ चमत्कार शक्ति मल्लीनाथ में भी रही है। इस सबध में एक परम्परा का जिक्र यहा पर उपयुक्त होगा।

देश में चारों ओर अकाल था जनता बेहद परेशान थी। लोगों ने बादशाह से कहा कि मल्लीनाथ सिद्ध हैं उन्हें बुलाओ। वह अपने तपोबल से वर्षा कर सकते हैं। तब बादशाह ने ससम्मान उन्हें बुलाकर प्रार्थना की—

गुज्जर है मुलतान के चाकर तुम त्रयोदश हो रन हारे।
दिल्ली के शाह कह्यो तुम पीर हो तेरी कृपा बरखा घनकारे।
द्वैज के चद ज्यू द्वैज के पौस सबै जन पूजत होतु सुखारे
बक वै साधुन के गुनसागर रावल माल सदा रखवारे॥

तब मल्लीनाथ कहने लगे—

मालो किसो हर रो देह
हर बरसावै तो बरसे मेह॥[१४]

कहते हैं रावल जी ने समाधि लगाई और दूसरे ही दिन से चारों ओर वर्षा होने लगी।

उपर्युक्त चर्चा से सामने आने वाली तीसरी और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि लकुलीश सम्प्रदाय की अवधारणा सभी मनुष्यों में शिवत्व देखती है। वह सभी को समान मानते है जाति पाति का कुछ भी भेद नहीं स्वीकारा जाता है और इसकी इस विशेषता के कारण ही भागवतों या वैदिकों के विरोध के बावजूद वह दिनों दिन सशक्त होती गयी और सम्भवत शासन में सभी लोगों का प्रवेश स्वीकारते हुए शासकों ने आदर देकर उसके अनुयायी बनना शुरू किया।

यदि वैष्णव परम्परा में आस्था रखने वाले शासक "परम भागवत शैव परम्परा में विश्वास रखने वाले "परम माहेश्वर" अथवा बुद्ध में निष्ठा रखने वाले सौगत की उपाधि धारण कर सकते थे तो जन सामान्य का हित चाहने वाले राजस्थान के शासकों ने राजकुल या रावल की उपाधि धारण कर लकुलीश मत का प्रचार किया हो तो इसमें आश्चर्य की बात ही क्या है? और खासकर मल्लीनाथ के सदर्भ में इस उपाधि का अन्यतम महत्व है। बाबा रामदेव की तरह समाज के अस्पृश्य माने जाने वाले निचले स्तर के मनुष्यों को मुक्ति का मार्ग दिखाने वाली राणी रूपादे के सिद्धान्तों व उगमसी भाटी के उपदेशों को प्रत्यक्ष व्यवहार में लाकर प्रजा को समान दृष्टि से देखकर कल्याण करने में लगे मल्लीनाथ के साथ लगी रावल की उपाधि की सार्थकता उनके केवल लाकुल" सम्प्रदाय से सम्बद्ध होने में उतनी नहीं जितनी कि उनके द्वारा व्यवहार में सम्प्रदाय के सिद्धान्तों को अगीकार किये जाने में है। यह सार्थकता दिलाने में उनकी

राणी रूपादे ने महती भूमिका निभाई। उस महान साध्वी के भक्ति योग का निरूपण करने से पूर्व रूपादे—मल्लीनाथ के पूर्व जन्मों से संबंधित जो लोक कथाए या परम्पराए प्रसिद्ध हैं उनका निरूपण प्रस्तुत करने का उपक्रम करना अब समीचीन होगा।

६ रूपादे की जीवन-कथा—

समाज में निम्न स्तर के माने जाने वाले हर व्यक्ति के पारलौकिक उत्थान के लिये जीवन भर सघर्ष करती रही रूपादे बाबा रामदेव के सम्प्रदाय से भी जुड गयी थीं। रामदेव के भक्त रूपादे के भी भक्त हुए और रामदेव के पदों और प्रमाणों के साथ रूपादे की वाणिया और भजन गाये जाते रहे नई रचनाए होती रहीं और अनायास ही रूपादे की अलौकिकता जन कवियों की रचनाओं का विषय हो गयी। रामदेवजी के जम्मा जागरण में रूपादे की वेल न जाने कितने वर्षों से गायी जाती रही है। रूपादे के साथ ही मल्लीनाथ का समर्पण उन्हें अमर बना गया। इस प्रकार की गेय रचनाओं में मारवाड के बिलाडा जैतारण भू भाग पर मालजीकी जन्मपत्री नाम से गायी जाने वाली एक लघु रचना में मल्लीनाथ रूपादे के पूर्व जन्म का बडे ही रोचक ढग से विवरण मिलता है। यह अनुश्रुति से प्राप्त रचना है इसलिए उसकी ऐतिहासिक सत्यता की चर्चा भी व्यर्थ है।

बुधजी नाम के एक भक्त थे। उनके गुरु ने कहा—चलो पाटण शहर चलते हैं। वहा एक युग (तप) तक धूणी रमायेंगे। बुधजी अपने गुरु के साथ पाटण पहुच गये। गुरुजी ने अपना आसन लगाया और समाधिस्थ होकर तपस्या करना प्रारम्भ कर दिया—यह बारह वर्ष तक चलने वाली साधना थी।[५५] गुरु समाधिस्थ हो गये। उनकी आज्ञा के अनुसार चींपी लेकर शहर में भिक्षा मागने के लिए बुध जी चल दिये। हर दरवाजे को खटखटाते गये अन्त में हार गये लेकिन किसी भी व्यक्ति ने उनकी झोली में भिक्षा नहीं डाली। वे सोचने लगे—कैसे हैं ये पाटण के लोग। जरा सी भी दया नही कोई भी भिक्षा देना वाला नहीं—

पापी है पाटण रा लोग चिपटी नही घालै कोरे चूण री।[५६]

वे निराश होकर लौटने लगे तब कुम्हारिन को उन पर दया आई। फिर उसका यह क्रम लगातार चलता रहा। जाते हुए रास्ते में उसने लोहार को कहा—क्वाडिया बनाओगे? लोहार ने जबाव दिया—श्मशान में रहकर साधना करने वाले जोगियों से कैसी प्रीति? बुधजी ने गुरु का दिया हुआ चिमटा लोहार के पास गिरवी (रेहन) रख कर उससे कुल्हाडी ली और लकडी काटने के लिए जगल में चले गये।

वन में सूखी लकडी कहीं पर नही मिली। कदम्ब के वृक्ष पर उसने कुल्हाडी मारी और लकडी काटता रहा। आधी रात बीत गयी तब किसी की आवाज सुनायी दी—बुध जी! क्या सो रहे हो? शभूनाथ तुम पर प्रसन्न हुए हैं। जाओ धूणी की सेवा करो। तब से बुधजी रोज जगल में आकर लकडी काटते रहे और गीली लकडियों की

में पूज्य डा मनोहर शर्मा मेरे अनुमान से सहमत नहीं है किन्तु तत्कालीन परिस्थितियों को देखते हुए यह संभावना व्यक्त करने में तो कोई आपत्ति नहीं है। योगियों की तरह कुछ चमत्कार शक्ति मल्लीनाथ में भी रही है। इस संबध में एक परम्परा का जिक्र यहा पर उपयुक्त होगा।

देश में चारों ओर अकाल था जनता बेहद परेशान थी। लोगों ने बादशाह से कहा कि मल्लीनाथ सिद्ध हैं उन्हें बुलाओ। वह अपने तपोबल से वर्षा कर सकते हैं। तब बादशाह ने ससम्मान उन्हें बुलाकर प्रार्थना की—

गुज्जर है सुलतान के चाकर तुग त्रयोदश ही रन हारे।
दिल्ली के शाह कह्यो तुम पीर हो तेरी कृपा बरखा घनकारे।
द्वैज के चद ज्यू द्वैज के धौस सबै जन पूजत होतु सुखारे
बक वै साधुन के गुनसागर रावल माल सदा रखवारे॥

तब मल्लीनाथ कहने लगे—

मालो किसो हर री देह
हर बरसावै तो बरसे मेह॥[१४]

कहते है रावल जी ने समाधि लगाई और दूसरे ही दिन से चारों ओर वर्षा होने लगी।

उपर्युक्त चर्चा से सामने आने वाली तीसरी और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि लकुलीश सम्प्रदाय की अवधारणा सभी मनुष्यों में शिवत्व देखती है। वह सभी को समान मानते है जाति पाति का कुछ भी भेद नही स्वीकारा जाता है और इसकी इस विशेषता के कारण ही भागवतों या वैदिकों के विरोध के बावजूद वह दिनों दिन सशक्त होती गयी और सम्भवत शासन में सभी लोगों का प्रवेश स्वीकारते हुए शासकों ने आदर देकर उसके अनुयायी बनना शुरू किया।

यदि वैष्णव परम्परा में आस्था रखने वाले शासक परम भागवत शैव परम्परा में विश्वास रखने वाले परम माहेश्वर" अथवा बुद्ध में निष्ठा रखने वाले सौगत की उपाधि धारण कर सकते थे तो जन सामान्य का हित चाहने वाले राजस्थान के शासकों ने राजकुल या रावल की उपाधि धारण कर लकुलीश मत का प्रचार किया हो तो इसमें आश्चर्य की बात ही क्या है? और खासकर मल्लीनाथ के सदर्भ में इस उपाधि का अन्यतम महत्व है। बाबा रामदेव की तरह समाज के अस्पृश्य माने जाने वाले निचले स्तर के मनुष्यों को मुक्ति का मार्ग दिखाने वाली राणी रूपादे के सिद्धान्तों व उगमसी भाटी के उपदेशों को प्रत्यक्ष व्यवहार में लाकर प्रजा को समान दृष्टि से देखकर कल्याण करने में लगे मल्लीनाथ के साथ लगी रावल की उपाधि की सार्थकता उनके केवल लाकुल सम्प्रदाय से सम्बद्ध होने में उतनी नही जितनी कि उनके द्वारा व्यवहार में इस सम्प्रदाय के सिद्धान्तों का अगीकार किये जाने में है। यह सार्थकता दिलाने में उनकी

राणी रूपादे ने महती भूमिका निभाई। उस महान साध्वी के पवित्र योग का निरूपण करने से पूर्व रूपादे—मल्लीनाथ के पूर्व जन्मों से संबंधित जो लोक कथाएं या परम्पराएं प्रसिद्ध हैं उनका निरूपण प्रस्तुत करने का उपक्रम करना अब समीचीन होगा।

६ रूपादे की जीवन-कथा—

समाज में निम्न स्तर के माने जाने वाले हर व्यक्ति के पारलौकिक उत्थान के लिये जीवन भर संघर्ष करती रही रूपादे बाबा रामदेव के सम्प्रदाय से भी जुड़ गयी थीं। रामदेव के भक्त रूपादे के भी भक्त हुए और रामदेव के पदों और प्रमाणों के साथ रूपादे की वाणियां और भजन गाये जाते रहे नई रचनाएं होती रहीं और अनायास ही रूपादे की अलौकिकता जन कवियों की रचनाओं का विषय हो गयी। रामदेवजी के जम्मा जागरण में रूपादे की वेल न जाने कितने वर्षों से गायी जाती रही है। रूपादे के साथ ही मल्लीनाथ का समर्पण उन्हें अमर बना गया। इस प्रकार की गेय रचनाओं में मारवाड़ के बिलाड़ा जैतारण भू भाग पर मालजीकी जन्मपत्री" नाम से गायी जाने वाली एक लघु रचना में मल्लीनाथ रूपादे के पूर्व जन्म का बड़े ही रोचक ढंग से विवरण मिलता है। यह अनुश्रुति से प्राप्त रचना है इसलिए उसकी ऐतिहासिक सत्यता की चर्चा भी व्यर्थ है।

बुधजी नाम के एक भक्त थे। उनके गुरु ने कहा—चलो पाटण शहर चलते हैं। वहां एक युग (तप) तक धूणी रमायेंगे। बुधजी अपने गुरु के साथ पाटण पहुंच गये। गुरुजी ने अपना आसन लगाया और समाधिस्थ होकर तपस्या करना प्रारम्भ कर दिया—यह बारह वर्ष तक चलने वाली साधना थी।[५५] गुरु समाधिस्थ हो गये। उनकी आज्ञा के अनुसार चींपी लेकर शहर में भिक्षा मांगने के लिए बुध जी चल दिये। हर दरवाजे को खटखटाते गये अन्त में हार गये लेकिन किसी भी व्यक्ति ने उनकी झोली में भिक्षा नहीं डाली। वे सोचने लगे—कैसे हैं ये पाटण के लोग। जरा सी भी दया नहीं कोई भी भिक्षा देना वाला नहीं—

पापी है पाटण रा लोग चिपटी नहीं घालै कोरे चूण री।[५६]

वे निराश होकर लौटने लगे तब कुम्हारिन को उन पर दया आई। फिर उसका यह क्रम लगातार चलता रहा। जाते हुए रास्ते में उसने लोहार को कहा—क्वाडिया बनाओगे? लोहार ने जबाव दिया—श्मशान में रहकर साधना करने वाले जोगियों से कैसी प्रीति? बुधजी ने गुरु का दिया हुआ चिमटा लोहार के पास गिरवी (रेहन) रख कर उससे कुल्हाड़ी ली और लकड़ी काटने के लिए जंगल में चले गये।

वन में सूखी लकड़ी कहीं पर नहीं मिली। कदम्ब के वृक्ष पर उसने कुल्हाड़ी मारी और लकड़ी काटता रहा। आधी रात बीत गयी तब किसी को आवाज सुनायी दी—बुध जा! क्या सो रहे हो? शंभूनाथ तुम पर प्रसन्न हुए हैं। जाओ धूणी की सेवा करो। तब से बुधजी रोज जंगल में आकर लकड़ी काटते रहे और गीली लकड़ियों की

जटाओं की रस्सी बनाकर बाजार में बेचते रहे। इस तरह अपनी और गुरु के भोजन की व्यवस्था करते करते १२ वर्ष बीत गये। लकड़ियों का बोझ ढोते ढोते बुधजी के सिर के बाल सफा हो गये।[५७]

गुरुजी समाधि से जब जागृतावस्था में आये तब अपने शिष्य की यह हालत देखकर पूछने लगे—क्या तुम काशी और केदारनाथ गये थे या तुमने अडसठ तीर्थों की यात्रा की या तुम्हें नागों की जमात मिली? तुम्हारे सिर का मुकुट (बाल) किसने गिरा दिया—

बुध जी काई न्हायो काशी केदार काई अडसठ तीरथ न्हाविया।
काई मिली नागा री जमात माथा रा मुकुट कुण पाडिया॥[५८]

बुधजी क्या जवाब देते? अपना सारा हाल सुनाया। बारह साल तक लकड़ी काटते रहे और जीवन चलाते रहे। गुरुजी बहुत क्रोधित हुए—क्या पाटण शहर के लोग हैं एक जोगी को भी भिक्षा नहीं डाल सके? अपनी झोली में हाथ डालकर उन्होंने अपना पैर पटका और पाटण को दाटण कर दिया—

उठियो पाटण री अरडाट पाटण दाटण कर दीनी।[५९]

कुम्हार को बुधजी कह गये—कल सुबह से पहले शहर से बाहर निकल जाना। दूसरे दिन प्रात जब गुरु और बुधजी पाटण से बाहर निकले तब सारा शहर पत्थर का हो गया एक भी जीवित नहीं बचा। बुधजी ने कुम्हार और उसके परिवार के सहयोग की ओर अपने गुरुजी का ध्यान आकर्षित किया तब गुरुजी ने कुम्हार के परिवार को जीवित कर वरदान दिया कि कुम्हार महेवा का स्वामी मल्लीनाथ और कुम्हारिन रानी रूपादे के रूप में जन्म लेंगे। उनका बेटा जगमाल होगा गधी पाडल गाय होगी और उसकी बछडी घोडी का रूप लेगी। गुरु स्वय उगमसी भाटी होंगे और बुधजी धारु मघवाल का शरीर धारण करेंगे—

कुम्हारिया होजे मेहवा री माल घर नै सलखा री मोभी डीकरी री।

कुम्हारी होजे रुपादे नार घर नै बलरा जी मोभी डीकरी।

बाला होजे कवर जगमाल

बिछडी होजे पाडल गाय

गुरु होजे उगमसी आप

बुध होजे धारु मेघवाल॥[६०]

रूपादे के लौकिक जीवन के सभी पात्रों के पूर्व जन्म और उन सबके एक साथ

फिर से अवतरण की यह कथा आपको अवश्य ही अचम्भे में डाल देगी—मौखिक परम्परा पुनर्जन्म में विश्वास करती है और इसी विश्वास ने इस प्रकार की कथाओं को जन्म दिया है। इस कथा का एक रूपान्तरण भी है। उसे अजमेर के निकट डूमाडा के स्वामी गोकुलदास ने धारू माल रूपादे री बडी वेल के प्रारम्भ में दिया है। कथा इस प्रकार है—

सारसोप नगर के राजा अग्रसेन को एक दिन अचानक विरक्ति हो गयी और कफनी धारण कर वे ल्हसाड पाटन नगर के पास जाकर अपना आसन लगाकर बैठ गये। उनका सेवक सालरिया साथ में था। गुरु को तपस्या में बैठे देखकर सालरिया भिक्षा मागने चला। भिक्षा न मिलने पर निराश होकर लौटते सालरिया को "रूपा" नाम की एक मालन ने दो रोटिया दी।

दूसरे दिन से सालरिया ने क्रम बना लिया जगल में जाकर लकडी काटना उसे सुनार के यहा बेच देना और सवा सेर अनाज प्राप्त कर रूपा को दे देना। इस प्रकार वह बदले में रूपा से रोटिया लेता रहा। १२ वर्ष बीत गये। गुरुजी के सामने रोटियों का ढेर लग गया। जब सालरिया से सारे समाचार मिल गये तब गुरु ने एक साथ ही पाटण को अभिशाप और माली को वरदान दिया—

ल्हसाड पाटण दल दट्टण मल्ला माली का घर बच्चण।

ये ही माली और मालन गुरु से वर पाकर मल्लीनाथ और रूपादे के रूप में जन्म लेते हैं। दोनों कथाओं में कल्पना एक ही है केवल पात्रों के नाम की भिन्नता है। पहली कथा का दृष्टिकोण अधिक व्यापक है वह धारू मेघवाल और भाटी उगमसी को भी अपने साथ समेटती है। दूसरी में ऐसा लगता है कि धारू मेघवाल को पूर्वजन्म में भी मेघवाल सालरिया बनाने का प्रयत्न किया गया है। जो भी हो कथा की विभिन्न रूपता को श्रद्धा और निष्ठा की व्यापकता के प्रमाण के रूप में माना जा सकता है।

रूपादे और मल्लीनाथ के पूर्व जन्म के विषय में रूपादे की बेल के प्रारम्भ में एक कथा और गायी जाती है यह अलसी लालर कथा के नाम से प्रसिद्ध है।

काठियावाड के समीप किसी क्षेत्र में अलसी (अरिसिंह) अरिसी अरसी अइसी अलसी नाम का एक राजपूत जागीरदार था। कहते है उसके ■ बेटे थे और एक बेटी थी लालर। सबसे छोटी और सुन्दर। समय बीतते अलसी का अन्तकाल समीप आने लगा। उसके मन में एक इच्छा थी—चारण और भाटों को काठियावाडी घोडे दान करने की। उसके लडकों ने काठियावाडी वीरों से लडने का प्रयास भी किया (होगा) लेकिन वे सफल नहीं हो पाये। तब अलसी ने बेटी के सामने अपनी इच्छा प्रकट की।

लालर हिम्मतवाली थी उसने अपने पिता को ढाढस बधाया—"आप आराम से स्वर्ग की ओर प्रस्थान करिये काठियावाड से घोडे लाकर और आपकी इच्छा पूरी करके ही आपका कारज (उत्तरक्रिया) कराऊगी। मरणासन्न पिता को दिया हुआ वचन देखिये—

लालर कैने नाभाजी सुरग सिधावो मन में धीरज धारो।
काठियावाड रा घोड़ा लासू कारज सारसू थारो॥

यह कहकर युद्ध के लिए उपयुक्त वेशभूषा धारण कर और हाथ में चमकता हुआ भाला लेकर लालर घोडे पर सवार हुई। ऐसा लगने लगा कि क्षणभर में वह लालर स लालजी बन गयी।

इधर मारवाड से मल्लीनाथ भी अपनी राजपूती शूरता दिखाने के लिये काठियावाड में धाडा (लूट) डालने के लिये जा रहे थे। रास्ते में उनका लालर से मिलना हुआ। लालर ने अपना परिचय दिया— मैं तो अलसी का पुत्र हू, लालजी मेरा नाम है। अपने पिता के काम से घोडे लाने के लिये जा रहा हू। सामने बड में मेरा भाला रोपा हुआ है। अगर मेरे साथ चलेंग तो आपको अपने घोड पीछे रखने होंगे आगे मैं रहूगा।" मालोजी ने बात स्वीकार कर ली।

किसी पडाव पर लालजी नहाने बैठ गये थे कोई वस्त्र आदि का परदा नहीं किया था। मालोजी समझ गये यह लालजी नहीं अलसी की बेटी है। उसके रूप सौन्दर्य पर मुग्ध होकर मालोजी ने विवाह का प्रस्ताव रखा। लालर ने कहा—मुझे विवाह नहीं करना है काठियावाड के द्वार तोडकर अपने पिता को दिया हुआ वचन था यह मैंने पूरा कर लिया। अब मेरा भी समय हो रहा है।

बाला बदरा के घर मेरा पुनर्जन्म होगा मेरा नाम रूपा रखा जाएगा। दूधवा गाव में चार प्रहर शिकार खेलने आना वहीं पर आप मुझसे विवाह कर लेना। मालोजी विवश थे फौज लेकर अपनी राजधानी लौट आये।

धारू माल रूपादे की बेल में भी कथा तो यही है लेकिन उसमें मिलने वाला लालर के दिव्यत्व और अलौकिक शक्ति का बखान अतिशयात्मक भले हो किन्तु वह अधिक रोचक बन पडा है। देखिये—

लालर बचपन में ही घोडे की सवारी करने लगी थी। अपनी सहेलियों के साथ जगल में खेल रही लालर को मालोजी देखकर उस पर मोहित हो जाते हैं। लेकिन उसका दिव्य स्वरूप देखकर कहने लगे—तुम तो सब जानती हो। हम काठियावाड जा रहे हैं घोडे लूटने के लिए। तब लालर की फौज भी मालोजी के साथ चल पडी। यह तय हुआ कि जितने घोडे लूट लेंगे आधे आधे बाट लेंगे।

युद्ध शुरू हुआ। काठियावाडी फौज के सामने मालोजी की सेना के पैर उखडने लगे। तब लालर ने ताना मारा—

ऐसा नरा से नारी भली नही देवे रण पीठ।
अग्नि आगे जल जावे ज्यों कुल्हड का कीट॥

यह सुनकर मालोजी में दुगुना जोश आया और लालर के साथ रणक्षेत्र में कूद

पड़े। काठियावाड के सैनिक भाग गये और लालर ने घोडों को घेर लिया। घोडों का बटवारा होने लगा। आधे आधे बाट लेने के बाद भी एक घोडा रह गया। अब उसका बटवारा कैसे करें। तब कहते हैं घोडे के दो हिस्से कर अपने वाले भाग को लालर ने जीवित कर दिया। मालोजी में वह शक्ति कहा से आती? उस समय लालर ने अपना भयकर स्वरूप दिखाया मालोजी भयभीत होन लगे। तब लालर ने अपना सौम्य सुन्दर स्वरूप दिखाया और कहा—दूधवा में बलभद्र के घर जन्म लूगी तब रमते खेलते आप वहा पर आना वहीं पर आपसे मेरा विवाह होगा।

लालर ने अपने पिता के वचन की लाज रखी। इसलिए कहा जाता है—"जै लालर न्हीं जनमती अळसी जावत अगूत।" जिस लालर ने काठियावाडी घोडों का चारण भाटों को दान देकर अपने पिता का उद्धार किया बलभद्र के घर जन्म लेकर उसका मालोजी से कैसे विवाह सम्पन्न होता है यह जानने के लिये निश्चय ही आप उत्सुक होंगे। इसलिए अब इसी कथा को आगे बढाते हैं।

७ रूपादे का जन्म और मल्लीनाथ से विवाह—

बलभद्र या बाला बदरा खेती करने वाला और सामान्य माली हालत में गुजारा करने वाला इसान था। कहते हैं वह भी उगमसी भाटी का शिष्य था। लालर को इन्ही की बेटी बनकर पुनर्जन्म में रूपादे के नाम से विख्यात होना था।

बाला बदरा जी की पत्नी अनुकूल समय आने पर गर्भवती हो गयी। पहले मास में सरोवर स्नान की उन्हें इच्छा हुई। तीसरा महीना लगा तब खोपरा—खारीक उन्हें अच्छा लगने लगा कभी पान खाने की तो कभी घेवर के लड्डू खाने की इच्छा बलवती होती गयी। यों करते करते ९ मास की अवधि पूरी हुई तब बलभद्र के घर एक नन्हीं सी सुन्दर बच्ची ने ताबे के पाये से जन्म लिया। कहते हैं लडकी बहुत जल्दी बडी हो जाती है। किशोरी रूपादे जिसका मूलनाम यशोदा रखा गया था धीरे धीरे अपने पिता के काम में भी हाथ बटाने लगी। शिव का मदिर बनाकर पूजा करना उसका खेल बन गया था उम्र के साथ साथ उसमें भक्ति भावना भी बढती गयी।

मालोजी ने एक दिन अचानक अपने चाकरों से कहा—जीन लगाकर घोडा तैयार करो। आज चार प्रहर तक शिकार खेलने जायेंगे। यहा से चलेंगे जो दूधवा गाव में जाकर ही जल पीयेंगे। मालोजी जब अपने साथियों के साथ दूधवा पहुचे तब रूपा मूग की खेती सम्हाल रही थी। उनकी दृष्टि रूपादे पर पडी पूर्वजन्म के सस्कार प्रबल थे। बदरा जी या बलभद्र जी को बुलाने के लिए मालोजी ने अपने आदमी भेजे। आदमियों ने जाकर कहा बदरा जी। सो रहे हो तो बाहर आइये। आपकी बेटी रूपादे से मालोजी की सगाई की बात पक्की करनी है।

बाहर आकर बदरे जी बिनती करने लगे—आप तो राजवी सरदार हो मैं छोटा सा ठाकुर पूरी बारात की जलसेवा करने की भी हमारी सामर्थ्य नहीं है कैसे ब्याह कराऊगा?

मालोजी के आदमियों ने जवाब दिया—तोरण दूधवा में बाधा जाएगा घुडले की रस्म महेवा में पूरी कर लेंगे। उसने फिर से याचना की—अभी गुरुदेव (उगमसी) भी तीर्थयात्रा पर गये हैं चौमासा है बाद में करा देंग। किन्तु राजहठ के सामन उस गराब ठाकुर की एक भी न चली। मारवाड के धनी मल्लीनाथ रूपादे के साथ परिणय सूत्र में बध गये।

विवाह हुआ तब रूपादे अपने पिता से कहने लगी—दाता पाडल गाय गगाजल नाग काम्बड़िया धारू मेघवाल और तन्दूरा (एकतारा) ये सब वस्तुए आप कन्यादान के साथ मुझे दान में दे दो। अपनी आस्था और भक्ति के साधन लेकर रूपादे मल्लीनाथ के साथ रवाना हुई। मल्लीनाथ जी आये तो थे शिकार पर पर आते में नवविवाहित पत्नी रूपादे को लेकर लौटे। विधि का लेख भी यही था।

हरजी भाटी द्वारा—बनाई गई रूपादे की वेल कई प्रकारों से अवान्तर कथाओं को जोडते हुए गायी जाती है। गोकुलदास जी द्वारा दिये गये पाठ में मालोजी के महेवा आगमन और विवाह को और अधिक रोचक ढग से प्रस्तुत किया गया है। देखिये कथा कैसी रोचक बन पड़ी है—

बाला बदरा जी के घर पर शुभ घडी में लक्ष्मी प्रकट हुई। उसका जन्म का नाम था—लालर। लेकिन घर के लोग उसे रूपा नाम मे बुलाने लगे। रूपा बचपन में ही सुखदेव पवार के घर जागरण में जाने लगी उगमसी भाटी का आशीर्वाद उसे मिला। धारू मेघवाल उसका साथी बन गया। धारू के साथ उसका भक्तिभाव बढने लगा। समय बीतते क्या देर लगती है? रूपा अपने पिता के काम में भी हाथ बटाने लगी।

एक दिन गाव के चारों ओर घोडों का टापों का आवाज सुनाई देने लगी। मारवाड के स्वामी अपने दल बल सहित आये थे। धारू ने उन्हें देखा और कहने लगा मालोजी क्यों जगल में घूम रह हो। आप प्यासे हैं आपके घोडों का भूख लगा है। तब रूपा ने धारू से कहा—कोई भी हो है तो अपना मेहमान। पता नही कौन किस रूप में आता है इनका स्वागत करना अपना धर्म है।

रूपादे ने अपनी सेवा भावना से सारी फौज को पानी पिलाया भोजन कराया और वह भी हरेक की मनुहार करते हुए। मालोजी ने देखा—यह लडकी शक्ति का अवतार ही दिखाई देती है। अपने पूर्व सुकृत कह रहे हैं कि इससे विवाह कर लें। मालोजी ने बदरा जी से प्रार्थना की—

सरवर को पछी जपै आवे तीर नजीक।
प्यासा पानी पी चले नहिं सरवर के पीक॥

किन्तु बदराजी अपनी सीमाओं को भलीभाति जानता था। कहने लगा—मुझसे यह भार सहन नहीं होगा—

मेघमाल इन्दर चढे घन बीजळ घनघोर।

इह नाडा में ठरे नही सावर देखो और॥

किन्तु मालोजी कहा मानने वाले थे। जवाब दिया—

पूर्व अक टलसी नही कहता बिस्वा बीस॥

और पूर्व अक नहीं टल पाया। जोशी वेदियों को बुलाया तोरण बाधा गया विवाह की रस्में पूरी हुई। रूपा मन में सोचने लगी कि जिस भक्तिभाव से मन जुड गया अब उसका विरह कैसे सहन होगा। तब वह धारू से याचना करती है—

रूपा कहे सुण धारू वीर
बिछडे पडे पैली तीर
कब मिलणा होसी॥
दोनू बिच में राम है सायबो पार उतारे॥
गुरुमुख वचन निभावसी मालिक बाने तारे॥
साचा के सायबो सग रमै दिल कपटया के बारै॥

धारू जी भी असमजस में पड गये अब क्या करें। किन्तु गुरु के वचन को किसी भी तरह निभाना था। वे भी सपरिवार रूपा के साथ चले। रूपादे को मालोजी ने "पाटोतण (पाट रानी) बनाया। धारू भी महेवा में रहते हुए सत्सग करने लगे।

रूपादे की बाल्यावस्था में उसका भक्ति की ओर जो झुकाव हुआ उसमें पूर्वजन्म के सस्कार तो प्रभावी रहे ही होंगे किन्तु राजस्थानी में रूपादे री बात नाम से प्रसिद्ध एक बात में भक्ति के तात्कालिक कारण भी चर्चा मिलती है। इस बात को मल्लीनाथ पथ में आयो तै री वात" भी कहते हैं। बीकानेर के अनूप सस्कृत पुस्तकालय में हस्तलेख में सुरक्षित इस बात को डॉ मनोहर शर्मा ने प्रकाशित भी कराया है।

रुपादे वाल्हे तुडिये की बेटी थी। वाल्हे का खेत जगल में था। रूपादे खेत की रखवाली कर रही थी। जैसलमेर के स्वामी का बेटा (सत उगमसी) उस जगल से गुजर रहा था। पद यात्रा और गर्मी के कारण प्यास उसे सताने लगी। उसके साथ काम्बड या कामड जाति के कुछ लोग भी चल रहे थे।

रूपादे जहा पर बैठी थी वहा आकर उगमसी ने पूछा—बाई पानी मिलेगा? रूपादे ने कहा—हा। तब उगमसी ने अपने साथियों को आवाज देकर कहा— साधा आवो।" इतने व्यक्तियों को देखकर रूपादे ने मुह बिगाड लिया। जो पानी था उगमसी पी गये। अब उसे सोच होने लगा—मा बाप को क्या पिलाऊगी? तब उगमसी ने घडे पर हाथ रखकर कहा "साहब पूरो। घडा पानी से भर गया। इस चमत्कार को देखकर रूपादे आश्चर्यचकित हो गयी। तब उगमसी पूछने लगे—शादी हुई या कुवारी हो? रूपादे ने कहा—बाबाजी अभी विवाह नहीं हुआ।

उगमसी ने रूपादे के हाथ में ताबे की वेल (कडा) पहनायी और कहा—हर मास

की द्वितीया के दिन सात घरों से अनाज मागकर उसे कम्बिडियों (कामडों) में बाट देना। फिर उगमसी आगे तीर्थ यात्रा पर चल दिये। जैसा उन्होंने कहा था रूपादे उसका बराबर पालन करती रही।

एक बार मालाजा ने रूपादे को देखा और उस पर आसक्त हो तुडिये से कहा—रूपादे की मुझसे शादी करा दो। तुडिये ने बहुत ननुनच किया। किन्तु उसकी एक नहीं चली। मालाजी ने दबाव देकर रूपादे से विवाह कर लिया और उसे साथ लेकर महेवा के लिये रवाना हुए।

रूपादे के पूर्वजन्म और पुनर्जन्म से लेकर मालोजी के साथ विवाह होने की कथाओं अनुश्रुतियों और बात पर आधारित इस चर्चा से कुछ तथ्य उभर कर सामने आते हैं। जन्म पुनर्जन्म में पति पत्नी के साथ रहने का विश्वास इस कथा का आधार है। रूपादे ने अपने जीवन काल में जो सामान्य पद्धति से चलने का जीवनक्रम बनाया था उसे छोड जो अलग असामान्य मार्ग स्वीकार किया वह उसकी लोकोत्तरता या असामान्यत्व का परिचायक है और इसी आधार पर पूर्व जन्म में भी उसके साथ चमत्कारी शक्तियों को जोडते हुए उसमें दिव्यत्व देखने की जनमानस की दृष्टि के भी हमें इन कथाओं में दर्शन होते हैं। बचपन से ही उसका ईश भक्ति की ओर झुकाव रहा होगा किन्तु उसे और पुष्ट करने के लिये उगमसी भाटी की रूपादे पर हुई कृपा भी बातों के माध्यम से उसके साथ जुड गयी। अस्तु। अपने स्वामी के साथ रूपादे के महेवा जाने पर आगे की जो घटनाएं हैं उनकी अनुभूति भी आपके लिए रोचक ही सिद्ध होगी। इसलिए अब उनकी चर्चा करना उपयुक्त रहेगा।

८ महेवा मे जागरण का प्रसग—

रूपादे की बात के सकलनकर्ता ने रूपादे ने विवाह के पश्चात् भी अपनी साधना जारी रखी थी इस आशय का उल्लेख किया है। उगमसी की आज्ञानुसार अब भी द्वितीया के दिन सात घरों से भिक्षा लेकर उसे काम्बडियों में बाटने का उसका सिलसिला जारी था। उस समय के परिप्रेक्ष्य में यदि विचार करें तो राणी का इस तरह से बाहर निकलना लौकिक मर्यादाओं के सर्वथा विपरीत था। फिर भी रूपादे जाती रही। यदा-कदा धारू के घर भजन सकीर्तन करने भी उसके जाने का उल्लेख कथाओं में मिलता है।

मल्लीनाथ ने अपनी पहली राणी चन्द्रावळ की उपेक्षा कर रूपादे को पाटोतण (पट्टरानी) बनाया था। स्त्री स्वभाव को आप जानते ही हैं। रूपादे के इस प्रकार के स्वच्छन्द विचरण पर चद्रावळ को आपत्ति होना स्वाभाविक था। फिर सौतिया डाह से वह पीडित भी हो गया। यदा कदा वह मल्लीनाथ जी से शिकवा शिकायत भी करती तो उसका असर नहीं होता क्योंकि वे तो रूपादे के सौन्दर्य पर मुग्ध थे। रोज की शिकायतों से परेशान होकर एक बार उन्होंने कह दिया—"अब स्वय आखों से देखूगा तब ही यह बात मानी जा सकती है।" रूपादे का सत्सग चलता रहा दिन पर दिन बीतते गये।

धारू मेघवाल रूपादे के साथ ही आकर महेवा में रहने लगे थे। एक दिन गुरु उगमसी भाटी उनके घर आये धारू के तो मानों सारे पाप ही धुल गये। उगमसी ने कहा—भाई अबकी शनिवार के दिन द्वितीया तिथि आ रही है। इस दिन कलश की स्थापना कर जागरण किया जाए, अलख को जगाया जाये। गुरु की आज्ञा शिरोधार्य थी। सभी सन्तों और भक्तों को "वायक" (निमत्रण) देने का सिलसिला शुरू हुआ। वायक मिलने पर उगमसी के सत्सग का लाभ लेने के लिए कई सन्तों का आना शुरू हुआ।

राणा मोकल रामदेवजी पाबूजी हरबूजी पीर पैगम्बर ऐल सब आने लगे। चौक पुराया (सुशोभित मण्डित) गया मोतियों का मडप सजाया गया। सभी लोग आये रूपादे नही आयी। तब उगमसी ने धारू से कहा—जाओ रूपादे को वायक दे आओ। तब धारू रूपादे को जागरण का निमत्रण देने के लिये चल दिये। धारू को अपने दरवाजे पर देखकर रूपादे को क्या प्रसन्नता हुई है—

आज रो भाग भलो ऊगो धारू म्हाने दरसण देणा॥

रूपादे पूछती है—किस दिन जागरण है? कब आना है? फिर उसे अपनी स्थिति की मर्यादा याद आती है तब निराश होकर कहने लगी—बडा ही सकट है। कैसा योग बनेगा आने का। मेरा प्रणाम गुरुजी से कहना और मेरी ओर से अरज करना—हरि मिलायेगा तभी आपके दर्शन होंगे—

हर प्रणाम गुरा ने म्हारा कैणा हरि मिळे तो मिळाणा॥

कह तो दिया—अब मिलना मिलाना हरि के हाथ है। फिर भी उसका मन नही माना। जैसे जैसे जागरण की वेला समीप आती गयी रूपादे का भक्तिभाव अधीर हो उठा। शृगार कर पूजा की थाली को मोतियों से सजाया। गढ के दरवाजे बद थे—दरवाजे अपने आप खुलते गये—बद होते गये। "ठम ठम पैर रखती रूपादे महलों से बाहर आ गयी। रूपादे को किसी की परवाह नहीं थी उसे तो गुरु से मिलना था। वह सीधी जागरण स्थल पर पहुच गयी। जूतिया बाहर उतार कर गुरु उगमसी के चरण स्पर्श किये। धारू के घर भजनकीर्तन शुरू हुआ उसकी आवाज ठेठ महलों तक पहुच गयी और राणी चद्रावळ जी की नींद टूट गयी।

कीर्तन की आवाज कान में पडते ही राणी चद्रावळ ने अपनी दासी गोमती (या गोमली) को महल का चप्पा चप्पा छान मारने का आदेश दिया। चुगलखोर औरत को और क्या चाहिये? उसने जल्दी जल्दी ढूढकर देखा रूपादे अपने महल में नही थी तुरन्त राणी से कहने लगी—

चिजविया सो परा विया बाई रग में रग भराणा।

नमक मिर्च लगाते हुये गोमती ने कहा—रोज रोज का मकट है रोज दुख देती है। आज तो आप जाकर मालोजी को जगाओ और सारी हकीकत कह दो—

बदती बाद (त) धणीरै आगै नित दुख देती म्हानै।
माल जगाय नै रात हलाय दे कूँ मरा जद वानै॥

चद्रावळ जी को चैन कहा से आवे? तुरन्त मालोजी के महल में पहुची और उनको जगाकर कहने लगी—क्या खाक राज कमा रहे हो आपके घर की पद्मिनी घर में नही है—

पत्नी नहीं है थारी घर को पदमणी काई काई राज कमाणा॥

मालोजी को फिर भी विश्वास नहीं हुआ। बोले—क्यों झूठ बोलती हो और छल कपट करती हो। राणी तो मेरे साथ रगमहल में सो रही थी। जायेगी तो कैसे जाएगी। यहीं कही पर सो रही होगी। महलों में अच्छी तरह से देख लो। दीपक लगाकर सारा महल छान मारा। रूपादे कहीं पर नहीं थी। उसकी सेज पर वासग (वासक) नाग बैठा हुआ। चद्रावळ ने कहा—लो देख लिया। आपकी प्यारी तो मेघ धारू के घर गयी है। सुनते ही मालोजी बहुत क्रोधित हुए। भला राजा की पत्नी रात आधी गये मेघवालों के घर जावें यह कौन पुरुष सहन कर सकता है? गुस्से में कहने लगे—ऐसा फाग खिलाऊगा कि एक घाव में सोलह टुकडे कर दूगा—

एक घाव में सोलह टुकडा इसडा फाग खिलाणा॥

तब मालोजी ने एक पागी (पैरों के निशान देखकर आदमी की खोज करने वाला व्यक्ति) को रूपादे का ढूढने के लिए भेजा और कहा कि रूपा की एक मोजडी (जूती) उठाकर ले आवो। मालोजी के हुक्म की तुरन्त तामील की गयी। पागी गया और लाल हीरों से जडी एक मोजडी उठाकर ले आया।

जागरण में बैठे लोग तल्लीन हो गये। पाट पर कलश और चारों ओर हर एकके नाम की एक-एक जोत जल रही थी। वातावरण शान्त था। भोर का समय हुआ तब रूपादे ने गुरु से घर जाने की इजाजत मागा—"सफल हुई तो दुबारा आपके चरण स्पर्श करुगी। बाहर आयी तो मोजडी नहीं। तब गुरुजी ने अपने प्रभाव से स्वर्ग से पन्ने हीरे जडी हुई जूती मगायी। अब रूपादे वापस अपने महलों की ओर रवाना हुई।

बिजलिया चमकन लगीं—बादल गडगडाने लगे। इन्द्र देवता प्रसन्न हो गए। घारों ओर बरसात शुरू हुई। झर झर नीर बहने लगा। सामने देखा वो मालोजी रास्ता रोके हाथ में तलवार लिये हुये खडे हैं। अब रूपादे भयभीत हुई। क्या जबाव दूगी?

मालोजी का क्रोध अपने आपे में नही रहा। कहा—तुमने क्षत्रियों की मर्यादा तोडकर अकर्म करके मुझे बहुत लज्जित किया है—

खतरी तणी खोय दी राणी अकरम काम कमाणा।
महल छोड नै गया मेघा घर डौठी लाज लजाणा॥

मैंने अपनी आखों से तुम्हें काम्बडियों के साथ खाते पीते देखा है। तब रूपादे

बडी विनम्रता से कहने लगी—मैं तो फल फूल लाने गयी थी। रावळ जी को आश्चर्य हुआ कि कही आस पास में बगीचा तो है ही नहीं—एक मडोर में है वह बहुत दूर है। मालोजी को विश्वास नहीं हुआ तो थाली का आच्छादन तलवार की नोंक से हटाया। थाली में देखा तो मानों कोई बगीचा ही लगा है—महेवा में न उगने वाले फल फूल भी उसी में दिखाई दिये। इस चमत्कार से प्रभावित हुए मालोजी का गुस्सा एकदम ठडा हो गया और स्वय राणी के पथ में जाने की इच्छा प्रकट करने लगे—

इण पथ में ले जाओ पदमणी।
थे रहिया घणा दिन छाना॥

रूपा ने कहा—स्वामी! यह कोई साधारण पथ नही है। आपके जैसे राजवी सरदारों का इसमें निभ पाना मुश्किल है—

खरतर धारा खाडा री चलणा।
थासू सेल नहीं जावे सहणा॥

लेकिन मालोजी भी अपनी धुन के पक्के थे पीछे हटने वाले नही थे। आखिर में रूपादे मालोजी को लेकर अपने गुरु जी के पास गयी और विनती की—

रावळ माल अलख पद लागा।
ज्यानै जमै किस विध लेणा॥

गुरुजी ऐसे वैसे को दीक्षा थोडे ही देते। मालोजी के सामने परीक्षा की घडी आ खडी हुई। उगमसी ने बडी कठोर शर्तें रखी—तुम्हें पाडल गाय और गगा जल घोडे को मारना होगा। अपनी रानी चद्रावळ की हत्या करो। अपने कवर जगमाल की हत्या करो। मालोजी न राणी व कवर की हत्या की ओर भगवा वेष धारण कर पर्दे के पीछे बैठकर परमेश्वर का नाम जपना शुरू किया।

मालोजी के त्याग से गुरु उगमसी प्रसन्न हो गये। उन्होंने पाडल गाय रानी और कवर गगाजल घोडा सभी को जीवित किया। यह देख मालोजी प्रसन्न हुए। राणा रतनसी ने मालाजी के सिर पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया कानों में कुडल डलवाये—उस घडी से मालोजी रावल माल कहलाने लगे।

बिलाडा के श्री शिवसिंह चोयल के द्वारा सगृहीत रूपादे की बेल में मल्लीनाथ के समर्पण तक की कथा का यह सार है। डॉ सोनाराम विश्नोई ने रुपादे की बेल का जो पाठ सगृहीत किया है उसमें इस कथानक में थोडा सा अन्तर है। उसमें जागरण में आये सन्तों में नारायणा से रिणसी और खींवसी और कच्छ भुज से जैसल तोलाद के नाम भी जुड गये हैं।

रूपादे जब जागरण के लिये रवाना होती है तो रात में महल के दरवाजे बद होते हैं। वह पहरेदारों को कहती है—खोलो। चाबिया मालोजी के पास थीं। कहा से

खोलते? तब राणी ने अपनी अगुली की चाबी बनायी और ताले खुल गय। जागरण पूरा होने पर जब रूपादे रवाना हुई तो उसके साथ उगमसी ने रामदेवजी को भेजा। मालोजी के सामने पडने पर रूपादे सतियों का स्मरण करने लगी— त्रेता युग में हरिश्चन्द्र हार गये थे किन्तु तारामती नहीं हारी। हरिणाकुश को मारने के लिये हे हरि तुमने प्रह्लाद का रूप लिया। द्वापर युग में दुशासन के हाथों लज्जित होती द्रौपदी की तुमने लाज रखी। बलि को पाताल में गाडकर जनता की रक्षा की। अब मेरी रक्षा करो—

आ वळिया म्हारा मोटा स्याम।
घडी'क आवै नीं बाई रूपा रै भाव॥

अबला की पुकार पर भगवान हमेशा सहायता करते हैं। रूपादे का भी "थाली में बाग" लगाकर उन्होंने उद्धार किया। मालोजी को शरण में लेकर उगमसी ने उन्हें दीक्षा दी मालोजी उनके अनन्य भक्त हो गये।

इस जागरण में रूपादे की थाली में बाग लगाकर तथा मृत राणी चन्द्रावळ जगमाल पाडल गाय गगा जल घोडे को पुनर्जीवित कर मालोजी को जो परचा दिया (साक्षात् प्रतीति कराई) उसकी इतिहास सम्मत यद्यपि कोई तिथि नहीं है फिर भी डॉ बदरीप्रसाद साकरिया ने निजी समह में उपलब्ध रूपाद की बेल (पद ६८) में इसकी चर्चा प्रसगोपात्त की है। तदनुसार यह तिथि चैत्र शुक्ला द्वितीया १४३९ वि मानी गयी है।

समत चवदै सौ सीकार गुणचाळीसौ वरस विचार।
उज्जळ बीज सनीचर वार चैत मयो परचौ परचार ॥६८॥

रूपादे की बात के अन्त में मालोजी को उगमसी द्वारा दीक्षा देकर पथ में लिये जाने के सबध में एक महत्त्वपूर्ण उल्लेख हुआ है। समर्पण के बाद जब रूपादे मालोजी को गुरुजी के पास ले जाती है तब उगमसी ने रावल मालोजी के हाथ में ताबे की वेल (कडा) डालकर मोगेडिया दिया और उपदेश दिया कि द्वितीया के दिन सात घरों से भिक्षा मागकर काम्बडियों में बाट देना।

दूसरे दिन प्रात मालोजी उगमसी जी को अपने महलों में ले गये और उनकी बडी आवभगत की। उगमसी लगभग एक मास तक मालोजी के पास रहे। मालोजी ने उनसे पूरी विद्या लेने पर ही उन्हें विदा किया।

उपर्युक्त कथा रूपादे की बेल" नाम से उपलब्ध होने वाली तीन विभिन्न पाठान्तर वाली रचनाओं पर आधारित है। ऐसा अनुमान किया जा सकता है कि ये तीनों ही पाठान्[illegible] १६ १७ १८वी शती तक गाये जाते रहे होंगे। इनमें सशोधन भी होते रहे। द[illegible] अन्तराल और अनेक सशोधनों के पश्चात् वर्तमान में मेघवाल समाज में जो बेल गायी [illegible]ना है वह केवल रूपादे की बेल न होकर "धारू माल रूपादे री बडी बेल के [illegible] से प्रसिद्ध है। *इसमें अन्यान्य प्रक्षेपाश हैं तथा यह भी प्रतीत होता है कि मेघवालों* न [illegible]पादे की सारी चर्चा में धारू मेघवाल की महत्ता को बढाने के लिए सभवत इसमें

कई बातें ऐसी जोड दी हैं जिनकी काल्पनिक होने की सभावना की जा सकती है। गोकुलदास द्वारा सकलित यह पाठान्तर अधिसख्य मेघवाल—गायकों द्वारा गाया जा रहा है इसलिए कथा में आये उन अशों की चर्चा भी आपको रुचिकर लगेगी।

उगमसी की आज्ञानुसार धारू जब रूपादे को जागरण में आने का निमत्रण देने पहुचता है तो उसके सामने समस्या गढ के सात दरवाजों को पार करने की थी। रात में जाना होगा तो शय्या खाली दिखेगी। इस समस्या को सुलझाने का जिम्मा धारू मेघवाल ने लिया। उसने जाकर वासक नाग को जगाकर कहा कि रूपादे ने तुम्हें बुलाया है। ठीक समय पर नाग महल में पहुचा और रूपादे के रवाना होने से पहले उसकी शय्या पर लेट गया।

चद्रावळ ने जब शिकायत की और रूपादे को महलों में खोजा गया तब उसकी शय्या पर नाग को सोते हुए देखकर मालोजी आग बबूला हो गये। रूपादे को ढूढने करमतिया नाई जब पहुचा और उसने मोजडी चुराई तो अन्दर पाट पर लगायी गयी ज्योति मद पडने लग गयी। इससे साधुओं ने अनुमान लगाया कि कोई नुगरा (गुरु कृपा से रहित) व्यक्ति यहा पर आ गया है।

मालोजी के समर्पण के बाद जब उगमसी को उन्होंने गढ में आने का न्यौता दिया तो उनके साथ रामदेव तोला जेसल ऐलु देलु भैरू हनुमत बालीनाथ रणसी—सब पहुच गये। रावळजी के दीक्षित होने पर धारू मेघवाल ने उन्हें उपदेश दिया और राणी रूपादे ने भी मल्लीनाथजी को उपदेश देकर कृतार्थ किया।

ऊपर "रूपादे की बेल के जिन चार सस्करणों के आधार पर जागरण की चर्चा की है उनमें जागरण के स्वरूप और उसकी दीक्षा विधि के बारे में भी कुछ जानकारी उपलब्ध हुई है। वैसे तो इस पथ के लोग अपनी रहस्यमयता के लिये प्रसिद्ध हैं फिर भी जो कुछ जानकारी "बेल से प्राप्त हो सकती है वह भी ज्ञानवर्धक है।

९ जागरण का स्वरूप और दीक्षाविधि—

मेघवाल समाज के तथा अन्य पिछडी जाति के व्यक्तियों द्वारा अब भी इस प्रकार के जागरणों का आयोजन किया जाता है और उसे अत्यन्त गोपनीय रखा जाता है—यहा तक कि मडली में सम्मिलित होने वाले व्यक्ति के घरवालों को भी पता नहीं चलता कि उनका कोई सदस्य इस पथ का अनुयायी है। मारवाड में इसे कूण्डापथ कहा जाता है। इस पथ के जम्मे या जागरण की कुछ विशेषताए इस प्रकार देखी जा सकती है।

१ जागरण शुक्ल पक्ष की द्वितीया की रात को होता है। चैत्र और भाद्रपद के शुक्ल पक्ष की द्वितोया को सर्वार्थसिद्धिकारक माना जाता है।

२ भजन सकीर्तन और प्रसादी आधी रात से भोर होने तक के समय में सम्पन्न होती है।

३ प्रत्येक व्यक्ति को गोपनीयता रखनी पड़ती है।

४ जागरण के आयोजन का वायक (निमंत्रण) सभी देवताओं और सन्तों को दिया जाता है।

५ चौक को सजाकर उसमें पाट की स्थापना होती है।

६ मंडित पाट पर कलश में गंगाजल भरकर स्थापित किया जाता है।

७ पाट पर 'अलख' के प्रतीक के रूप में ज्योति लगायी जाती है कभी प्रत्येक व्यक्ति की एक एक ज्योति प्रज्वलित किये जाने की बात भी सुनी जाती है।

८ ओंकार का श्वासोच्छवास के साथ ही अजपा जाप किया जाता है।

९ प्रसाद में मांस का वितरण किया जाता है। जैसा–वेल में ही उल्लेख है— ताहरा थान आगे चढावो हतो आत्रवळि काळजो छुकियो। सु थाळी माहे घात रूपादे नू दीन्हो थाळियों माहे घातियो हुतो सु मालैजी दीठो हुतो। (रूपादे री बात)।

१० सभी भक्तजन 'अलख' निराकार ईश्वर का भजन संकीर्तन करते हैं।

इस पंथ में दीक्षा लेने का भी अलग ही विधान है। रावळ मालोजी के महलों में उगमसी के आने पर उन्हें दीक्षित करने की कथा आपने पढ़ी है। दीक्षा लेने वाला व्यक्ति पाट के सम्मुख बैठता है सामने ज्योति जलती रहती है। पीत वर्ण का पर्दा लगाकर साधक को औरों की नजर से बचाया जाता है। फिर साधक की आखें बांध दी जाती हैं। उसके कानों में लोहे के कुण्डल पहनाये जाते हैं सेली सींगी उसे पहनायी जाती है और फिर गुरु उसके सिर पर हाथ रखकर आशीर्वाद स्वरूप गुरुमंत्र देते हैं।

साधक के हाथ में तांबे की वेल (कड़ा) पहना कर उसे आदेश दिया जाता है कि हर द्वितीया को सात घरों से आखा (साबुत चावल) की भिक्षा मांगकर उसे काम्बडियों में बांट दें। दूसरे शब्दों में उसे धीरे धीरे काम्बडिया या काम्बड बनाया जाता है। मालोजी को दी हुई दीक्षा से इतनी ही बातों का खुलासा हो जाता है। जैसा पहले मैंने कहा है कि यह पंथ रहस्यात्मक रहा है इसलिए दीक्षा लेने के पश्चात् उस व्यक्ति पर क्या बीतती है या उसके आचरण के क्या नियम हैं इसकी जानकारी स्वयं उस पंथ में जाने से ही मालुम हो सकती है। संभवतः इसीलिये यह कथा मालोजी के पंथ में दीक्षित होने तक ही सीमित है।

कथा में जागरण के पश्चात् मालोजी को 'परचा' दिये जाने की घटना का जो उल्लेख है उसका समय १४३९ वि का दिया गया है। मालोजी ने भगवा वेष भी धारण कर लिया कुण्डल पहन लिये सेली सिंगी धारण कर ली। किन्तु इसका आशय यह कदापि नहीं है कि वे पूर्णतः विरक्त हो गये और राजकाज छोड़ दिया। ऐतिहासिक प्रमाण यह बतलाते हैं कि राव चूडा ने मंडोर पर वि १४५२ ५३ में कब्जा किया। उस समय

वह मडोर के पास सालोडी की चौकी पर तैनात अधिकारी था। मडोर विजय के बाद मालाजी चूडा के पास आये हैं और उसके साथ नागौर तक गये हैं। ये प्रमाण इस बात के सकेत हैं कि राजनीति में भी उनकी क्रियाशीलता बराबर बनी रही हालाकि रूपादे और उनके पथ का प्रभाव उन पर बना रहा।

मालोजी के समर्पण से रूपादे पर एक राणी होने के नाते जो बधन थे वे शिथिल पड गये। दूसरे शब्दों में उसकी साधना का मार्ग प्रशस्त हुआ। चूकि यह पथ समाज के उपेक्षित वर्ग को साथ लेकर चलता था इसलिए इसके अनुयायियों की सख्या बढती रही। फिर शासक और उसकी राणी इस पथ के अग्रणी माने जाने लगे। रूपादे की साधना के साथ मालोजी भी जुडे हुए थे। मालाणी प्रदेश गुजरात की सीमा पर है इसलिए सहज ही रूपादे के भजन और वाणिया गुजरात तक फैलती रही। मारवाड के लोगों की तरह गुजरात में भी रूपादे मल्लीनाथ के पद और वाणिया गाई जाने लगी और धीरे धीरे जैसल तोलादे और रावळ मल्लीनाथ रूपादे के सन्त समागम जनता में चर्चा के विषय बने। रूपादे की स्वय की और मल्लीनाथ से विवाह और पथ में आन की चर्चा गुजरात में यहा तक लोकप्रिय हो गई कि उन्होंने अपनी ओर से रूपादे को सौराष्ट्र की लडकी मान लिया। इसे रूपादे मल्लीनाथ की व्यापक प्रभावशीलता ही कहा जाएगा। पूर्व चर्चित कथाओं की तरह यह कथा भी रूपादे की दृढता का किस प्रकार बखान करती है उसकी चर्चा निश्चय ही पूर्व वार्ताओं के सातत्य में सोने में सुहाग सिद्ध होगी।

१० रूपादे-मल्लीनाथ का गुजराती आख्यान—

गुजरात में लोकप्रिय रूपादे मल्लीनाथ कथा का स्वरूप पूर्व कथाओं से किंचित् अलग है। यहा रूपादे अलख की आराधना करने वाली निर्गुण सन्त साधिका नही है वरन् भगवान् कृष्ण की भक्त है। मल्लीनाथ उसकी साधना में बाधाकारक नही है। सन्त समागम और धारू मेघ प्रसगों की चर्चा है उगमसिह भाटी देवायत का इस आख्यान में कही स्थान नही किन्तु जैसल तोलादे की चर्चा हुए बिना कथा समाप्त नही होती है। प्रारम्भ होता है—मारवाड में पडे अकाल की पीडा से।[६१]

मारवाड में अकाल पड गया था। गरीब जनता दिन भर मेहनत मजदूरी कर किसी तरह से दो समय की रोटी जुटाने में लगी हुई थी। पहले ही बरसात नहीं थी और जहा थोडी बहुत हुई थी वहा की फसल को एक जगली सुअर नुकसान पहुचाता था। धीरे धीरे फसल खत्म होने लगी और कोई भी उस सुअर को न तो मार सका और न ही पकड सका।

इस हालत में परेशान गाव के लोग मारवाड के धणी के पास पहुचे— महाराज की जय हो की आवाज राजधानी में गूजने लगी। महाराजा ने अपनी प्रजा के प्रतिनिधियों की बडी आवभगत की और पूछा—आप सब लोगों को इकट्ठ हाकर यहा पर आना पडा ऐसी क्या वजह हो गयी। ग्रामीणों ने अपना दुखडा रोया। महाराजा के पास में

बैठे मालदेव (मल्लीनाथ) से रहा नहीं गया और उन्होंने गुजारिश की—अरे एक क्या कई सुअर एक साथ आये तो भी खत्म कर दूगा। आप लोग निश्चिंत रहो। कल सवेरे तक उस सुअर को मारकर दरबार में अपना मुह दिखाऊगा।" ग्रामीण जन प्रसन्न होकर रवाना हो गये।

मल्लीनाथजी हाथ में भाला ले घोडे पर सवार हुए। उनके साथ और भी दो चार सैनिक हो गये। अब सुअर को पकडने या मारने के लिये वे और उनके साथी घोडा दौडाने लगे। लेकिन सुअर हाथ आता नहीं दिखाई दिया। शाम पड गयी। तब मालोजी ने अपने साथियों से कहा—तुम घेर लो भाले से एक ही घाव में इसे खतम कर दूगा। लेकिन बात कुछ नहीं बनी। रात आधी निकल गयी—आगे सुअर पीछे मालोजी दौडते रहे। मारवाड पीछे छूट गया अब सौराष्ट्र की धरती पर दोनों आ गये। लेकिन अब सुअर थक गया। वह खडी फसल में एक खेत में घुस गया। मालदे ने आव देखा न ताव और अपना घोडा भी उसी खेत में घुसा दिया। अब सुअर भाग नहीं सकता था। थोडी ही देर में नजर पडने पर मालदे ने उसे भाले से बीध दिया।

खेत में एक चारपाई (माचा) पडी हुई थी। उसके एक पैर से घोडे को बाध कर खुद सुस्ताने लगे। इतने में एक युवती की आवाज आई—ए जवान! क्या यह तेरे बाप का बगीचा है? नीचे उतर और अपने खच्चर को लेकर नौ दो ग्यारह हो जा। इस धमकी का कोई असर होना दूर लडकी की सुन्दरता पर मुग्ध होकर मालोजी उसे देखने लगे। उसने फिर एक बार धमकाया—अरे नीचे उतर क्या देख रहा है?

तो मालदे कूद कर खडे हो गये। लडकी ने पूछा—मेरे खेत में फसल को जो नुकसान हुआ उसे कौन भरेगा? तू या तेरा बाप? धीरे धीरे लडकी का गुस्सा ठडा हुआ।

मालदे ने पूछा—तुम्हारा अता पता क्या? किसकी बेटी हो? लडकी खिलखिलाकर हस पडी और बोली—मेरा नाम रूपा।

वढवाण के राजपूत की बेटी हू, बामण बनिया नहीं।

मालदे ने भी अपना परिचय दिया लेकिन लडकी को सहसा विश्वास नही हुआ। फसल के नुकसान के बदले में मालदे ने अपने गले का "नौलखा" हार निकालकर उसे दिया और राम राम रूपादे कहकर मारवाड के लिए रवाना हुये। मालदे का शरीर आगे दौडता जा रहा था मन रूपादे में उलझ गया।

सुअर मारकर लौटने पर मालदे की बडी प्रशसा होने लगी। सब ओर से बधाई आने लगीं। लेकिन उन्हें कोई चीज अच्छी नहीं लग रही थीं। न भूख थी न प्यास। किसी से बात करने को भी जी नहीं चाहता था। किसी की समझ में नहीं आया कि इसे क्या हुआ। बेचारी रानी मा से उनकी यह हालत देखी नहीं जा रही थी। इधर मालदे के दिलो दिमाग पर रूपादे छायी हुई थी। उसके अलावा उन्हें कोई बात सूझती

ही नहीं थी।

आखिर मा से रहा नही गया। उन्होंने बेटे से पूछ ही लिया—सोरठ से लौटने पर तुमने अपनी क्या हालत बना रखी है? न खाना न पीना। बोलते नही हो बात का जवाब भी नहीं देते हो? तब हिम्मत जुटाकर बोले—एक सोरठियाणी को मैने देखा है। केसर मोरी की लडकी है और राजपूत है। मा को इतना इशारा काफी था। उसने कहा—तुम निश्चिंत होकर राज काज सम्हालो। सारा इन्तजाम हो जाएगा। अपनी चिन्ता का भार मा पर छोड मालोजी कुछ आश्वस्त हुए।

दूसरे ही दिन राजमाता ने अपने प्रधानजी को आदेश दिया—राज के कुछ लोगों को साथ लेकर सौराष्ट्र जाओ। वढवाण नगर में केसर मोराजी रहते हैं। उनकी रूपादे नाम की लडकी है। उसे मालदे के नाम से चून्दडी ओढा कर वापस आना। प्रधानजी आदेश मिलते ही दूसरे दिन सौराष्ट्र के लिए चल पडे।

रूपादे ने मालदे के जाने बाद ही एक दिन यों ही उसके खेत में आने की बात छेडी। पिता अनुभवी थे। उसकी किसी बात का जवाब नही दिया। रूपादे काम करती रही। इतने में सन्त साधु उनके घर आये। "जय गुरुदेव कहकर साधुओं का उसने स्वागत किया। रात को भजन कीतन में रूपादे जागती रही और भक्ति भाव में डूब गयी। प्रातःकाल साधुओं को कुछ दूरी तक पहुचाने रूपादे गई जितने में प्रधानजी केसर मोरी के घर पर आ गये। प्रधानजी और उनक रसाले का जोर शोर से स्वागत कर दूध पिलाया और फिर मोरी पूछने लगे—महाशय। कैसे पधारना हुआ?

प्रधान जी—हमें जाना तो द्वारका था। किन्तु हमने सोचा डाकोर के दर्शन करते चलें। सो इधर आना हो गया। जोधपुर के मालदे का प्रधान हू। साथ में और लोग भी शहर के बार रुके हुए हैं।

केसरी मोरी—महाराज! मैं साधारण राजपूत हू। जागीरदार भी नहीं हू।

प्रधान—अरे इससे क्या? तुम्हारी लडकी के भाग्य में तो राजमहल के सुख भोगना लिखा है।

बेचारा केसर मोरी कुछ नहीं समझा। तब प्रधानजी ने और खुलासा किया— राज के लोग हमारे साथ है और मारवाड के स्वामी मालदेजी के नाम की चूदडी आपकी बेटी को ओढाने के लिए हम आये हैं। केसर मोरी सोच में पड गया—क्या बोलता। अब प्रधान ने देखा—बात बन गयी। कहने लगे—देखो भाई मारवाड के धणी का और भी लडकिया मिल जायेंगी लेकिन तुम्हारी बेटी फिर कभी रानी नही बन पाएगी। बेटी के जीवन मरण का प्रश्न था। केसर मोरी ने कहा—रूपादे से पूछ कर जवाब दूगा।

प्रधान जी भी कम नहीं थे। बोले—रूपा हा कर देगी तो—ही हमें भोजन के लिए बुलाना। नहीं तो हम चले।

इधर केसर मोरी ने रूपा को सारी बात बतायी। वह भी दुविधा में पड गयी क्योंकि उसका नियम था कि अतिथि को भोजन कराने के बाद ही वह भोजन कर सकती थी और उधर अतिथि चूदडी ओढाने पर आमादा थे। रूपा अपने भक्तिभाव में मस्त थी। उसने मा से कहा—मा मेरा मन ससार में नहा लगता—

गोविंदो प्राण हमारे रे।
मने जग लाग्यो खारो रे॥

मा ने अतिथि भोजन के व्रत की उसे याद दिलायी—बेटी तुम हा नहीं करोगी तो मेहमान भूखे लौटेंगे। तुम्हारा व्रत टूटेगा। तब रूपादे ने कहा—चलो प्रधान जी से बात करते हैं।

रूपा—प्रधानजी! मारवाड के धणी की चूदडी ओढने को मैं तैयार हू। लेकिन एक शर्त है।

प्रधान—कौन सी?

रूपा—मैं द्वारकाधीश का पूजा पाठ करती हू। साधु सन्तों के साथ भजन कीर्तन करती हू। इस पर कोई पाबदी नहीं होगी और यह वचन आपको देना होगा।

प्रधानजी ने कहा राजमाता भी बहुत श्रद्धालु और भक्त हैं। हमें यह शर्त मजूर है। तब रूपादे ने मालदेजी के नाम की चूदडी ओढी। मेहमान भोजन कर सन्तुष्ट हुए। रूपादे का व्रत भी बना रहा—मालदेजी की इच्छा पूरी हुई। प्रधानजी ने केसर मोरी से विदा ले मारवाड की ओर प्रस्थान किया।

मालदेजी की पहली राणी चद्रावळ को चिन्ता होना स्वाभाविक था। उसे इस बात का आश्चर्य था कि लाये तो भी किसे? सौराष्ट्र के किसान की बेटी? और कोई नहीं मिली?

कुछ दिन बीते और प्रधानजी लाव लश्कर के साथ शुभ समाचार लेकर राजधानी लौटे। मालोजी की सेवा में उपस्थित होकर कहने लगे—आपके लिए रूपादे को तो लाया हू। किन्तु मैंने आपकी ओर से एक वचन दिया है। वह आपको निभाना पड़ेगा।

मालोजी के पूछने पर फिर बोले—रूपा कालिया ठाकुर (भगवान कृष्ण) की भक्त हैं। भजन कीर्तन करेगी। आपको कोई आपत्ति नहीं होगी। मालदेजी ने हसकर कहा—अरे उसे आने तो दो। प्रेमवाणी के आगे सन्तवाणी कहा तक टिकेगी? फिर भी मैं आपके वचन का ध्यान रखूगा और उसे निभाऊगा।

शुभ मुहूर्त में मालेदेजी के पीठी चढाने का मगल उत्सव प्रारम्भ हुआ। धीरे धीरे चद्रावळ का भी कोप शान्त हुआ। वह भी उत्सव में सम्मिलित होती गयी। मालदेजी अपने महलों में पीठी चढी हालत में रहे और वधु रूपादे को लाने के लिये मालदेजी का खाडा (तलवार) लेकर पूरे लवाजमे के साथ प्रधानजी सौराष्ट्र आने के लिए रवाना

हुए। वढवाण पहुचे।

केसर मोरी की स्थिति तो सामान्य ही थी। फिर भी उसने अपनी ओर से कोई कसर नही छोडी। खाडे के साथ रूपा ने तीन परिक्रमाए की। बडी धूम धाम से विवाह सम्पन्न हुआ। परिजनों के वियोग की अपार वेदना और प्रिय मिलन की असीम खुशी साथ लिए रूपा ससुराल जाने के लिये रवाना हुई—

मारवाड देश जोधपुर गाम
मालदे रूपादे ना हुआ मुकाम।
घम घम घुघरा वागता बेलड हाल्या जाय।
रूपादे जेडा वेलडे मालदे ने मळवा जाय॥

आखिरकार राजधानी में नयी राणी ने प्रवेश किया जिस क्षण की मालदेजी ने इतने लम्बे समय तक प्रतीक्षा की वह समय आ पहुचा। मालदेजी अपनी पहली राणी को मनाने उसके महल पहुचे और चद्रावळ को समझाया। उसने टका सा जवाब दिया—एक बार लग्नमडप में मैंने आपको देखा है अब नही भी देखूगी तो कोई अन्तर नही आयेगा। मालदेजी उन्हें नहीं मना पाये। लग्न की घडी समीप थी अत वहा से चलना ही उन्होंने ठीक समझा।

लग्न मडल में पहुच कर मालदेजी वेदी के समीप बैठे। सोरठ के सजीले वस्त्रों में सज्जित रूपादे लजाती शर्माती उनके पास आकर बैठ गयी। विवाह की रस्में पूरी हुई। वर वधू को राजमहल ले जाया गया।

एकान्त पाकर मालदेजी रूपा के सौन्दर्य की प्रशसा करने लगे तो रूपा समझ गई कि ये महाशय मेरे रूप के ही साधक हैं। स्त्री को भोग की वस्तु समझते हैं। उसका मन निराश सा हो गया। फिर उन्होंने चद्रावळ की बात छेडी। उसका भी समाधान रूपाने ढूढ लिया कि वह उसे अपनी बडी बहन मानेगी। लेकिन उसका मन बार बार कहता रहा—मेरे पति मेरे रूप के गुलाम हैं गुण के नही। अस्तु।

दिन बीतते क्या देर लगती है? महल में कृष्ण भगवान् की मूर्ति थी। रूपा उसकी बडे ही भक्तिभाव से पूजा करती घन्टों बैठकर भगवान् के भजन गाती रहती। लेकिन मालदेजी को उसने इसकी भनक भी नही पडने दी। वह जानती थी जो लोग दिखावा करते है व्यर्थ की चर्चा करते हैं और स्वय भगवान् के परमभक्त होने का ढिंढोरा पीटते हैं वे वास्तव में ढोंगी हैं। भक्ति तो अन्तर्यामी होनी चाहिये क्योंकि प्रभु भी सबके अन्तर्यामी हैं। उधर मालदेजी दिन भर राजकाज में लगे रहते और रात पडे महलों में आते। उनके सपनेमें भी नहीं था कि रूपा भगवद् पूजा और भजन कीर्तन में लगी रहती है। कैसा विचित्र सयोग था—पत्नी ईश्वर भक्ति में तल्लीन और पति भौतिक सुखों से सरोबार होना चाहता था। इसी तरह रूपा मालदेजी का दाम्पत्य जीवन चलता रहा। समय गुजरता गया।

उन दिनों मारवाड की धरती पर धारू मेघ नाम के सन्त का बहुत बोलबाला था। व जहा भी जाते सौ संतों को निमन्त्रण देकर जागरण और प्रसादों के लिए बुलाते। ये धारू मेघ एक दिन जोधपुर आये और समीप में ही एक स्थान पर मुकाम किया। निमंत्रित भक्तों में से एक ने कहा—यहा एक ऐसे भी सन्त हैं जिनको कोई नही जानता है। वह भक्त कौन है यह देखने के लिए गुरुजी ने समाधि लगाई। समाधि से उठने पर उन्होंने आज्ञा दी—यहा के महलों में जावो और रूपादे को निमत्रण दे आवो। रूपादे ने भी धारू मेघ की बात सुनी थी और इस चिन्ता में पड गयी कि अपने को वायक मिलेगा या नहीं। इतने में शिष्य महल में पहुच गये। रूपादे से मिलकर उसके हाथ में अक्षताए देकर उन्होंने बडे आदर से रूपादे को जागरण में निमंत्रित किया। यह जागरण एक रात का न होकर तीन रात तक चलने वाला था।

वायक तो एक व्यक्ति के लिये ही था दो के लिये होता तो मालदेजी को भी साथ ले जाती। इस सोच में रूपादे पड गयी। रात हो गई धीरे धीरे मालदेजी ऊघने लगे। रूपादे को जाना तो था ही उसने स्नान कर शृगार किया और हीरे पन्ने जडी जूती पहनकर और मालदेजी के चरणस्पर्श कर वह महल से बाहर निकल गई। सामने महल में राणी चद्रावळ अभी जग रही थी। उसने देखा रूपादे कहीं जा रही है। तुरन्त अपनी दासी को कहा—जाओ। रूपादे के पीछे। कहा जाती है ध्यान रखो। दासी भी रूपादे के पीछे पीछे चल दी।

धारू मेघ के मुकाम पर वह पहुच गयी। तबू लगा था और अन्दर बैठे धारू जी भक्तों को उपदेश दे रहे थे—प्रारम्भ का भाग पूरा हुआ। किसी ने पूछा—रूपादे नहीं आई। गुरुजी हसे। कहा—भगवान् की इ आ बलवान् है। इतने में रूपादे ने तबू में प्रवेश किया। गुरुजी के चरण स्पर्श किये। गुरुजी ने कहा—बहुत देर कर दी बाई। लो यह एकतारा लो।

रूपादे ने धारू मेघ को प्रणाम कर पास में बैठे एक भक्त से मजीरा लिया और गाने लगी।

ओ जी। आज पाटे पधारो गणपति।
पाटे पधारो मारा मदिर पधारो॥

रूपा दे गाती रही। लोग भक्तिरस में आकण्ठ डूब गये। फिर प्रसाद का समय हुआ। थाली सामने रखकर धारूजी ने जागरण में आये सभी भक्तों को अपने हाथ से प्रसाद दिया लेकिन रूपादे को नहीं दिया। रूपा को कहा—लो अपने हाथ से प्रसाद ले लो। उसे बडा आश्चर्य हुआ। पूछा—आप अपने हाथ स प्रसाद नहीं देंगे? धारू कहने लगे—बुरा मन मानना। तुम सती हो। भक्त हो। लेकिन नुगरी हो। तुम्हारे सिर पर गुरु का हाथ नहीं।

रूपादे व्याकुल होकर बोल उठी— गुरुदेव। आज तक तो मुझे कोई गुरु नहीं

मिला। आपके दर्शन आज ही हुए। मुझे अपनी शिष्या बनाइये। मेरे सिर पर हाथ रखकर आशीर्वाद दीजिए और कण्ठी बधवा दीजिये।

धारू सशंकित थे। पूछा—महाराजा मालदेजी इसे स्वीकार करेंगे। रूपादे क्या कहती। जैसी आपकी इच्छा। गुरुजी समझ गये। उसके सिर पर हाथ रखकर कंठी बाध दी। रूपा दे अब धारू मेघ की शिष्या हो गई। उसे प्रसाद दिया गया। तब तक रात तीन प्रहर बीत गयी। गुरु से आज्ञा लेकर रूपादे रवाना हुई और महल में आकर चुपचाप सो गई।

चद्रावळ की दासी भी पहुच गयी। उसने सारा वृत्तान्त राणी से कहा—राणी ने सोचा सारा किस्सा मालदेजी को बताऊगी तब तो रूपा के रूप का नशा उतर जाएगा।

दिन ढल गया और दूसरी रात आयी। रूपा फिर से तैयार होकर जागरण में चली गयी और अपनी जूतिया तबू के बाहर उतार दी। सतवाणी चल रही थी। उसमें सम्मिलित हो गई। चद्रावळ ने देखा रूपादे चली गई और वह तुरन्त मालदेजी के पास पहुच गई। कहने लगी—आपकी नयी राणी का यह चाल चलन देख नही रहे हैं? रोज रात कहा चली जाती है?

मालदेजी इन सब बातों से बेखबर थे। चद्रावळ ने जोर देकर कहा—शहर के बाहर साधुओं की जमात ठहरी है। वहीं गयी है आपकी राणी। मालदेजी को विश्वास नहीं हुआ। लेकिन यह कहकर हाथ में तलवार लिये निकल पडे कि अगर यह सच नहीं हुआ तो तुम्हारा शीश काट दूगा। मालदेजी के रवाना होने की बात भक्तजन जान गये। रूपादे सकट में पड गई। रूपादे तुरन्त तबू के पीछे के मार्ग से रवाना होकर महल में पहुच गयी। मालदेजी रूपादे को तो देख नही पाये लेकिन उसकी जूतिया उन्होंने देख ली। किन्तु उन्हें उठाया नही और वापस राजमहल की ओर चल पडे।

अब रूपा को अपनी जूतियों की याद आई। मालदेजी ने देखा तो क्या कहेंगे। वह रात में ही कृष्ण भगवान के मन्दिर पहुची और पाट पर ज्योति लगा गुरु से प्रार्थना करने लगी—

गुरदेव पूजू पावडियो उघाडी छे मुज आखडीयो।
मारी दई दे पाछी मोजडी ओ गुरुदेव पूजू पावडियो॥

इधर तबू में पाट पर रूपादे के नाम से जलाई गयी ज्योति की लौ कम्पायमान होने लगी। गुरुजी ने देखा सती सकट में पड गई है। उन्होंने उसी क्षण समाधि लगाकर देखा—रूपादे अपनी जूतियों के लिये चिन्ता कर प्रार्थना कर रही है। समाधि से उठकर धारू जी ने अजलि भर पानी तबू के बाहर रखी मोजडियों पर डाला और वे उडकर जहा रूपा बैठी थी उसके एक ओर आकर पड गई।

मालदेजी को रूपादे दिखाई नहीं दी तो वे चद्रावळ के पास आये—कहने लगे

तुम्हारी बात सच लगती है। लेकिन वहा पर तो रूपा नहीं है। यही महलों में ढूढो। आधी रात रूपा की खोज शुरु हुई। महलों के पीछे की ओर कृष्ण भगवान् के मदिर में वह बैठी थी। मोजडिया उसके पास पडी थी। मालदेजी को लगा स्वप्न देख रहे हैं कुछ नहीं बोले और आकर अपने पलग पर सो गये।

फिर दिन ढल गया। तीसरी रात आई। मालदेजी ने अपने अनुचर को तबू के बाहर मोजडी चुराने के लिए नियुक्त किया। रूपादे समय पर तैयार होकर रवाना हुई। तबू में उसके प्रवेश करते ही अनुचर ने धीरे से मोजडी उठाई और महल में आकर मालदेजी को दी। मालदेजी ने फिर नौकर को भेजा और कहा—तुम ध्यान रखो। हम अभी आते हैं।

थोडी देर बाद माल्देजी भी रवाना हुए और क्या ही आश्चर्य भगवान् कृष्ण के मन्दिर में रूपा को उन्होंने बैठे हुए देख लिया।

मालदेजी अब शकाओं के जाल में फस गये। राणी जागरण में पहुची जब ही तो नौकर उसकी मोजडी उठाकर लाया और राणी तो यहा मदिर में बैठी है। फिर भी वे तबू तक गये। नौकर ने कहा—राणी जी अन्दर बिराजे हैं। नौकर रवाना हुआ। अब मालदेजी स्वय को रोक नहीं पाये। जागरण में अन्दर जहा भक्त मडली बैठी थी वहा चले गये। वहा रूपादे कहीं दिखाई नही दी। बाहर आये तो मोजडिया भी नही थी। मालदेजी का क्रोध अब काबू में नही था। तलवार निकालकर रूपा को मारने के लिए चल दिये।

महल में आये तो देखा कि मोजडिया बाहर पडी हैं और रूपादे पलग पर सो रही है। यह देखकर मालदेजी डर गये। तब रूपा की आवाज आई—महाराज। डरिये नही। उसके चेहरे पर एक दिव्य तेज था। यह तो मेरे गुरजी का पर्चा है अब आप समझ जाओ और अपना कल्याण करना चाहो तो कर लो। पहले मैं नुगरी थी। आप अब नुगरे" हो। चलिए गुरुजी के पास चलते हैं।

उधर पाट पर लगी रूपादे की ज्योति की लौ बडी हो गई। गुरु ने कहा—भक्तजनों आज हमारे बीच एक भक्त और आ रहा है। मालदेजी गुरु के चरणों में पड गये। उन्हें भी कण्ठी बाधकर धारू ने अपना शिष्य बनाया। रूपा की भक्ति साधना का मार्ग प्रशस्त हो गया मालदेजी भी उसके साथ हो गये थे। रूपा की भक्ति तरगिणी गगा निर्बाध प्रवाहित होती रही।

कुछ समय यों ही बीत गया। गाव के पास फिर कोई साधुओं की जमात आने की खबर रूपा को लगी। अब उसने अपने सेनापति को भेजकर साधुओं को निमत्रण दिया। लेकिन इस निमत्रण से साधु नाराज हो गए। घर के मालिक का निमत्रण मिलना चाहिए था। मालदेजी घर में थे नहीं इसलिए रूपा को भी विवश होकर सेनापति को भेजना पडा।

साधु रवाना हो ही रहे थे कि मालदेजी पहुच गये। क्षमायाचना की और साधुओं को मनाया। स्वय राजा घर का मालिक निमत्रण देने आया अब उन्हें कोई शिकायत नहीं थी। साधुओं के द्वारा निमत्रण को स्वीकार करने की बात रूपादे तक पहुच गयी। उसकी प्रसन्नता का कोई पार नही था। रात्रि का जागरण रखा था और खास विशेषता यह थी कि आज का पाट मालदेजी रूपादे के नाम से ही स्थापित किया जाना था।

साधुओं ने कहा—राजन्! अपने गुरु का स्मरण कर ज्योति जलाओ। मालदेजी ने भी कहा—आज तो अलख के नाम से ही ज्योति लगानी चाहिये। ज्योति लगाई गई। पाट पूरा हुआ। सारी रात भजन कीर्तन चलता रहा। प्रात काल हो गया। रूपा को मालदेजी कही दिखायी नही दिये। उनकी खोजबीन शुरु हुई। पर वे महलों में नही थे।

दोपहर हो गई। दूर से घोडे पर सवार होकर आते हुए मालदेजी दिखायी दिये। आते ही उन्होंने रुपा से पूछा—अरे! गाव के पास तो साधुओं की जमात आयी है और तुम यहा बैठी बैठी क्या कर रही हो? अब रूपा के आश्चर्य का कोई ठिकाना नहीं था। विस्मित होकर पूछने लगी—तो क्या आपने साधुओं को निमत्रण नहीं दिया? रात में पाट की पूजा कर आपने दोनों के नाम की ज्योति नही जगाई? वह स्तभित हो गयी। उसे मिला हुआ (कूकू) का पगला (पाद) प्रसाद और ज्योति का प्रकट होना_? वह सब समझ गयी।

गद्गद होकर बोली—महाराज! साक्षात् कृष्ण भगवान् अपने महल में आपके रूप में आये। हम धन्य धन्य हो गये। अहोभाग हमारे भगवान् स्वय आकर हमारी लाज रख गये।

गुजरात में मालदेजी—रूपादे की लोकप्रियता की यह कहानी उन्हें जेसल तोलादे से भी जोडती है। उसकी चर्चा बाद में करेंगे। मालदेजी रूपादे की अलौकिकता की कथाओं में पूर्व में किया गया विमर्श यदि आप स्मरण करें तो सहज ही इस कथा की समीक्षा का विचार आपके मन में आयेगा।

मूल कथा में मालदेजी को मालदेव नाम से ही सबोधित किया गया है और उन्हें मारवाड का स्वामी स्वीकारते हुए जोधपुर को उनका मूल स्थान माना गया है। मल्लीनाथ की इतिहास पुरुष के रूप में की गई चर्चा में हम यह देख चुके हैं कि मालदेजी महेवा तक ही सीमित रहे। मडोर पर उनके भतीजे चूडा ने अधिकार किया और १४५९ ई में जोधपुर की स्थापना जब राव जोधा ने की तभी से जोधपुर राठौडों की राजधानी हुई। मालोजा मालदे के नामसाम्य के कारण इस कथा में जोधपुर के राव मालदेव से जुडने का आभास होता है। मेरा यह अनुमान है कि इस कथा की कल्पना राठौडों की सत्ता जोधपुर में स्थिर होने के बाद हुई है—जब लोग महेवा को भूल गये।

दूसरे यह कथा रूपादे—माताजी के पूर्वजन्म की ओर कोई सकेत नही करती

है और न ही जन्म से ही उनमें दिव्यत्व का आधान करती है। बल्कि रूपादे की भक्ति किस तरह चरम अवस्था तक पहुचती है और मालोजी उसमें कैसे सहायक होते हैं यही इस कथा का प्रतिपाद्य है।

तीसरे कथा के प्रणेता उगमसी भाटी के नाम से परिचित नहीं रहे इसलिए रूपा और मालोजी का गुरुत्वपद धारू मेघ को दिया गया है। चौथे और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि केवल अलख आराधना तक रूपा की भक्ति सीमित नही है। वह "काळिया ठाकुर" को अनन्य भक्त है। रूपा की सगुणोपासना का कारण गुजरात की अधिकाश जनता का वैष्णव होना माना जा सकता है या यह भी हो कि भक्त और सामान्य लोग रूपादे को मीरा की तरह कृष्ण भक्त के रूप में ही समझने लग गये हो। जो भी हो इस कथा का मुख्य प्रतिपाद्य रूपा की भक्ति है चाहे वह निर्गुण हो या सगुण।

इसी कथा में कच्छ के सन्त जैसल तोलादे और रूपा मालोजी के परिचय और बाद में हुई प्रगाढता पर भी विचार गया है। जैसल तोरल प्रसग में अन्य कथाए भी उपलब्ध होती हैं। अत अब उनके विषय में विचार करना उचित होगा।

११ जैसल तोरल प्रसग--

गुजरात के कच्छ भू भाग पर जैसल नाम का एक डाकू रहता था। उसने काठीराज के घर डाका डाला तोरल नाम की घोडी को भगाने के लिये। लेकिन वह पकडा गया। राजा धार्मिक और दयालु था। उसने पूछा किसलिये डाका डाला? तोरल के लिये। राजा की पत्नी का नाम भी तोरल था। राजा ने तोरल उसे दे दी। उसने कहा महाराजा मैं तो घोडा चाहता था। राजा ने कहा--वह भी ले जाओ। तोरल भक्त थी और उसने अपने प्रभाव से जैसल को भी भक्ति मार्ग में दीक्षित किया। कच्छ कलाधर" में यह कथा विस्तार से दी गयी है। इस सिलसिले में एक उक्ति भी प्रसिद्ध है--

जैसल जगनो चोरटो पलमा कीधो पार।

जैसल तोलादे की कथा के अलावा "तोलादे की वेल नाम से प्रसिद्ध एक रचना में तोरल और उसके प्रभाव से सन्त बने जैसल की मुक्ति का वर्णन है। वेल में बाबा रामदेव के भक्त के रूप में इन्हें चित्रित किया है। रामदेव के समकालीन होने पर इन्हें *मल्लीनाथ रूपादे के समकालीन माना जा सकता है। परन्तु वेल में कहीं पर भी मल्लीनाथ रूपादे* प्रसग की चर्चा नही है इसे आश्चर्य ही माना जाएगा। फिर भी गुजरात और मारवाड में प्रसिद्ध तोलादे की कथा रूपादे मल्लीनाथ के सम्पर्क को स्वीकार करती है। इस प्रकार की दो कथाए हैं--एक तो अभी जिसकी चर्चा की गयी है उसमें मल्लीनाथ को मारवाड का मालदे माना है। दूसरी कथा में मेवासागर (महेवा) को मेवाड में मानकर मल्लीनाथ को मेवाड का निवासी माना गया है। पूर्व कथा की तरह प्रस्तुत कथा भी रोचक है इसलिए उसे सक्षिप्त रूप में अनूदित कर उद्धृत कर रहा हू।[५२]

मेवाड के मेवासागर स्थान के जागीरदार थे--मालदे और उनकी राणी थी रूपादे।

गुजरात के जैसल तोलादे की उन्होंने बडी प्रशसा सुनी थी और उनसे मिलने के लिये जाने की लम्बे समय से इच्छा थी। इसलिए तय कर एक दिन मालदे और रूपादे जैसल तोलादे से मिलने के लिय चल दिये। इसे आश्चर्य या सयोग ही कहा जाएगा कि कच्छ से जैसल तोलादे भी मालदे रूपादे से मिलने के लिए रवाना हुए। दोनों ही बीच रास्ते में आकर एक दूसरे से मिले। दोनों नाम से ही एक दूसरे को जानते थे कभी दखा नही था इसलिए पहचानते भी कैसे?

मालदे ने पूछा—आप कहा रहते हैं? इधर किस ओर निकले हैं? जब जैसल ने अपना अता पता बता दिया और कहा—मेवासा (महेवा) जाना चाहते हैं। मालोजी ने भी अपनी यात्रा के बारे में बताया कि हम मेवासा (महेवा) क रहने वाले हैं और कच्छ जा रहे हैं। और वार्तालाप में जब पता लगा कि जैसल तालादे से मिलने जा रहे थे वे ही मालदे रूपादे हैं तो चारों की प्रसन्नता का कोई पार नही रहा। अब दोनों एक दूसरे को आग्रह करने लगे—चलिये। अजर चलते हैं। "नहीं नही" आपको मिवासागर महेवा) ही चलना होगा। यों बाते करते करते शाम ढलने लगी। उन्होंने सोचा कि अब यहीं विश्राम किया जाय।

रात्रि में भोजन कर मालदे को तोरलदे से उपदेश सुनने की इच्छा हुई। तोरल परम साध्वी और भक्त थी। तोरल का उपदेश सुनकर मालदे और रूपादे ने अपनी जिज्ञासाए पूछी। लेकिन मालदे को तृप्ति नही हुई। इस तरह बहुत समय बीत गया। ज्ञान चर्चा में कब रात बीत गयी ध्यान ही नहीं रहा। जैसल मालदे मुख प्रक्षालनादि क्रियाओं में लग गये। तोरल रूपादे पास के ही एक कुए पर पानी लाने के लिये चली गयी।

लेकिन कुए का पानी निकला खारा। पीने लायक नही था। तोलादे कहने लगी—मैं तो यह मानती हू कि आपकी जैसी सती अगर चाहे तो कुछ भी कर दिखा सकती है। आप पूरे समदर को मीठा बना सकती हैं तो एक कुए के पानी को मीठा क्यों नही बना सकती? रूपादे ने सोचा—कहीं मेरी परीक्षा तो नहीं ले रही? रूपादे ध्यान लगाकर बैठ गयी और ईश्वर की आराधना करने लगी और क्या ही चमत्कार कुए का पानी मीठा हो गया। तब रूपादे ने कहा—लीजिए अब तो हो गया पानी मीठा?

साव सोनानी गुरुनी बारणी तेमा रूपादे राणी
माग्या माग्या मेह वरसीया तोरल काठी राणी।

खारी जमीन को तोलादे ने वर्षा कर मीठा बनाया। रूपादे और तोरल पानी की झारी भर कर लाये। जैसल जी पीपली पीपल की टहनी से दातून कर रहे थ और मालदे जाळ की टहनी से। दोनों ने सोचा—यह अपना मिलन स्थान है। धरती मीठी है पानी मीठा है। वहा पर पीपली और जाळ की टहनी उन्होंने रोपी। कहते हैं य दोनों वृक्ष और मीठे पानी का कुआ अभी भी वही पर हैं।

जैसल तोलादे फिर मालदे रूपादे के आग्रह का टाल नही सके और उनके साथ महेवा चले गये। वहा कुछ दिन रहकर बाबा रामदेव से मिलने रुणेचा आये और फिर अजार की वापसी यात्रा पर निकले। कुछ काल व्यतीत हुआ। जैसल तोरल पाच तार्थों की यात्रा करने निकले। इतनी लम्बी यात्रा तय कर जब वे अजार लौटे जैसलजी का स्वास्थ्य गिरने लगा। यात्रा से कमजोरी भी आ गयी थी और ऐसी स्थिति में महेवा से मालदेजी का वायक (निमत्रण) मिला। कैसी दुविधाजनक स्थिति हो गई।

जैसल नही चाहते थे कि इस निमत्रण का निरादर हो इसलिए उन्होंने तोरलदे को अकेले ही जाने के लिए कहा। पति की अस्वस्थता में ढलती उम्र में उसे अकेला छोडने की मजबूरी होने पर पतिव्रता सती साध्वियों के मन पर क्या गुजरती होगी उस व्यथा की कथा कहने की सामर्थ्य शब्दों में नहीं है।

खिन्न मन से तोरल ने विदा ली और मुकाम दर मुकाम करती एक दिन शाम ढलने पर वह महेवा पहुचा। गढ के दरवाज बन्द हो गय थ। प्रहरी दरवाजा खोलने के लिये तैयार नहीं हुए। तोरल दे अलख की आराधना के लिये गढ के बाहर ही बैठ गई। कुछ समय बाद दरवाजों के ताले अपने आप ही खुल गये। तोलादे जल्दी जल्दी मालदे के दरबार में पहुच गयी। अकेली तोलादे को देखकर मालदे को शका हुई—अरे! आप अकेली कैसे? जैसल जी क्यों नही आये?

तोलादे ने उनकी बीमारी की बात को जाहिर नही होने दिया। कहा—घर में कुछ काम था सो नहीं आये। किन्तु मालदे का विश्वास नहीं हुआ। पूछने लगे कि—कहीं जैसल जी स्वर्गगमन तो नही कर चुके। उनके नाम की यह ज्योति जैसे जैसे क्षीण पड़ती जा रही है यह कुशका मुझे डराने लगी है।

तोलादे स्वय भी शकित थी ही। मालदे की इस भविष्यवाणी से उनका सदेह विश्वास में बदल गया। उसने तुरन्त ही वापसी की यात्रा शुरू की। अजार की सीमा में आते ही उसे जैसल जी की समाधि लेने की खबर लग गई। उन्हे समाधि लिये तीन दिन हो गये थे। तोरल के शोक सन्ताप को कैसे बताया जाय। उनका सबध आत्मा का था शरीर के बिछोह से आत्मा का वियोग कितना कष्टकर और असहनीय हुआ होगा।

इधर मालदे के मन में भी जैसल के बारे में तरह तरह की शका कुशकाए घर करने लगी। तोरल के महेवा से निकलने पर दूसरे ही दिन वे भी कच्छ आने के लिये रवाना हुए। अजार पहुचे तब शोक सतप्त तोलादे समाधि लेने के लिए जल्दबाजी कर रही थी। उनकी उद्विग्न स्थिति देख कुछ ही क्षणों में स्वय को स्थिर कर मालदे तोरल को उपदेश देने लगे।

जो वस्तु तुम्हारे पास थी वह तो कही गई नहीं और जो वस्तु तुम्हारी नहीं थी उसके लिए शोक कैसा? काल की महिमा ऐसी ही है वह हमारे समझ के बाहर का चीज है। चित्र विचित्र घटनाओं का घटित करने वाले कालचक्र को कौन जान सकता

है? इस संसार समुद्र में अनेक आपत्तियों को सहन करना पड़ता है। संयोग वियोग में अणु परमाणु और त्रसरेणु जैसे तत्व काम करते हैं। उन्हीं के कारण हमें सृष्टि का मूर्तरूप दिखाई देता है उनके अलग-अलग हो जाने पर वह मूर्त रूप नष्ट हो जाता है। इसीलिए इस स्थूल शरीर को भी शून्याकार रूप में देखना चाहिए। पचमहाभूतों से बने शरीर का उन महाभूतों से वियोग होने पर नाश होना तो अवश्यभावी है। इस स्थूल शरीर का मोह मिथ्या है और इसलिए उसका शोक करना भी व्यर्थ है।

आत्मा अमर है वह स्थूल शरीर में प्रवेश करती है वह सर्वत्र गतिशील है। शरीर में आत्मा का अवतरण हो जाय तो वह अवतार है और शरीर से आत्मा का विसर्जन हो जाय वह मृत्यु है। आत्मा अमर है गतिमान् है। वह न स्त्री है न पुरुष न रूपवान् है और न कुरूप। न किसी की मित्र है न शत्रु। जिसके शरीर में आ जाय उस की कहलाती है। अब तुम बताओ किसके लिए शोक कर रही हो? शरीर का शोक व्यर्थ है और आत्मा अमर होने से उसका शोक करना भी व्यर्थ है।

मालदे की यह अमृतवाणी तोलादे का शोक कम करने में सफल हुई। फिर भी उसने कहा—जैसल की आत्मा से मेरी आत्मा को पृथक् न रख सकूगी। शान्त चित्त होकर तोलादे ने भी जैसल जी की समाधि के पास ही समाधि ली। पचमहाभूतों में विलीन हुई तोलादे की आत्मा ने जैसल की आत्मा का सानिध्य प्राप्त किया। मालदे रूपादे महेवा लौट गये।

इस कथा से पूर्व मैंने ऊपर गुजरात में लोकप्रिय रूपादे कथा की चर्चा की है। उसमें भी रूपादे-मालदे का जैसल तोलादे से मिलने के लिए जाने की व बीच रास्ते में ही मिलने की कथा गुम्फित की हुई है परन्तु इस कथा से वह आख्यान किंचित् भिन्न है। इसीलिए उस सदर्भ भिन्नता को भी यहा पर स्पष्ट करना आवश्यक है।

रूपादे मालदे ने एक नियम बनाया था। सन्त और अतिथि को भोजन कराये बिना स्वय भोजन नहीं करना। बरसात के दिन थे। ४-५ दिन कोई अतिथि नहीं आया—मालदे जी भूखे रहे। गुरुकृपा हुई-और स्वय धारूजी आ गये। श्रावणी सप्तमी को हुए जागरण पर तोलादे-जैसल को वायक गया था। वे भी आये थे। इसी प्रकार यह कथा यह भी बताती है कि तोलादे जैसल ने जो जागरण आयोजित किया था उसमें भी मालदे रूपादे गये थे। इस प्रकार की कथाओं/किंवदन्तियों में ऐसा भी सुनने में आता है कि मालदे जब जैसल की समाधि पर दर्शन करने गये तो अन्दर से जैसल की आवाज सुनाई दी थी। लोकोत्तर व्यक्तियों की बातें उनकी कथाए या उनके सबध में फैलने वाली किंवदन्तिया भी असामान्य ही हुआ करती है उनकी पुष्टि के लिए सामान्य प्रमाणों को ढूढना व्यर्थ है। वे असामान्य इस अर्थ में भी हैं कि उन्हें समझने के लिए उनकी स्थिति तक पहुचना पड़ता है—लौकिक से अलौकिक बनना पड़ता है। इसलिए इस अलौकिकता को लौकिकता के दायरे में चर्चा कर सीमित करने का कोई भी प्रयास टालना ही उचित होगा।

जैसल तोलादे फिर मालदे रूपादे के आग्रह को टाल नही सके और उनके साथ महेवा चले गये। वहा कुछ दिन रहकर बाबा रामदेव से मिलने रुणेचा आये और फिर अजार की वापसी यात्रा पर निकले। कुछ काल व्यतीत हुआ। जैसल तोरल पाच तीर्थों की यात्रा करने निकले। इतनी लम्बी यात्रा तय कर जब वे अजार लौटे जैसलजी का स्वास्थ्य गिरने लगा। यात्रा से कमजोरी भी आ गयी थी और ऐसी स्थिति में महेवा से मालदेजी का वायक (निमत्रण) मिला। कैसी दुविधाजनक स्थिति हो गई।

जैसल नही चाहते थे कि इस निमत्रण का निरादर हो इसलिए उन्होंने तोरलदे को अकेले ही जाने के लिए कहा। पति की अस्वस्थता में ढलती उम्र में उसे अकेला छोडने की मजबूरी होने पर पतिव्रता सती साध्वियों के मन पर क्या गुजरती होगी उस व्यथा की कथा कहने की सामर्थ्य शब्दों में नही है।

खिन्न मन से तोरल ने विदा ली और मुकाम दर मुकाम करती एक दिन शाम ढलने पर वह महेवा पहुची। गढ के दरवाजे बन्द हो गए थे। प्रहरी दरवाजा खोलने के लिये तैयार नहीं हुए। तोरल दे अलख की आराधना के लिये गढ के बाहर ही बैठ गई। कुछ समय बाद दरवाजों के ताले अपने आप ही खुल गये। तोलादे जल्दी जल्दी मालदे के दरबार में पहुच गयी। अकेली तोलादे को देखकर मालदे को शका हुई—अरे! आप अकेली कैसे? जैसल जी क्यों नही आये?

तोलादे ने उनकी बीमारी की बात को जाहिर नही होने दिया। कहा—घर में कुछ काम था सो नहीं आये। किन्तु मालदे को विश्वास नहीं हुआ। पूछने लगे कि—कहीं जैसल जी स्वर्गगमन तो नहीं कर चुके। उनके नाम की यह ज्योति जैसे जैसे क्षीण पडती जा रही है यह कुशका मुझे डराने लगी है।

तोलादे स्वय भी शक्ति थी ही। मालदे की इस भविष्यवाणी से उनका सदेह विश्वास में बदल गया। उसने तुरन्त ही वापसी की यात्रा शुरू की। अजार की सीमा में आते ही उसे जैसल जी की समाधि लेने की खबर लग गई। उन्हें समाधि लिये तीन दिन हो गये थे। तोरल के शोक सन्ताप को कैसे बताया जाय। उनका सबध आत्मा का था शरीर के बिछोह से आत्मा का वियोग कितना कष्टकर और असहनीय हुआ होगा।

इधर मालदे के मन में भी जैसल के बारे में तरह तरह की शका कुशकाए घर करने लगीं। तोरल के महेवा से निकलने पर दूसरे ही दिन वे भी कच्छ आने के लिये रवाना हुए। अजार पहुचे तब शोक सतप्त तोलादे समाधि लेने के लिए जल्दबाजी कर रही थी। उनकी उद्विग्न स्थिति देख कुछ ही क्षणों में स्वय को स्थिर कर मालदे तोरल को उपदेश देने लगे।

"जो वस्तु तुम्हारे पास थी वह तो कहीं गई नहीं और जो वस्तु तुम्हारी नहीं थी उसके लिए शोक कैसा? काल की महिमा ऐसी ही है वह हमारे समझ के बाहर की चीज है। चित्र विचित्र घटनाओं को घटित करने वाले कालचक्र को कौन जान सकता

धारू के बडे भाई की पत्नी मातादेवु और नामदेव छीपा ये सातों ही अपने योगबल से अन्तर्धान हो गये थे। जबकि मालाणी का इतिहास (अप्रकाशित) के लेखक ने उदयभाण की ख्यात के आधार पर यह प्रतिपादित किया है कि राणी रूपादे मल्लीनाथ के साथ सती हो गई थी।

मल्लीनाथ रूपादे के स्वर्गगमन के सिलसिले में एक और मान्यता प्रचलित है जो उन्हें तिलवाडा से जोडती है। राजस्थानी शब्दकोश के सपादक डॉ बद्रीप्रसाद साकरिया ने माला-जाळ वृक्ष की चर्चा के दौरान एक किंवदन्ती की ओर इशारा किया है। मल्लीनाथ जगल में एक जाळ वृक्ष के नीचे बैठकर अपनी साधना करते रहे। इसीलिए इस वृक्ष का नाम मालाजाळ पडा। धीरे धीरे उस स्थान पर जब लोगों ने आकर बसना शुरू किया तब मल्लीनाथजी की साधना में खलल पडने लगी। तब वह स्थान छोडकर वे लूनी नदी के किनारे आकर रहे थे। यहाँ पर उन्होंने देहत्याग किया। इस स्थान पर उनका देवल भी बना हुआ है।

लूणी नदी के किनारे जहा उन्होंने समाधि ली वह स्थान तिलवाडा कहलाता है। तिलवाडा में मल्लीनाथ का विशाल मदिर बना हुआ है। तिलवाडा में प्रतिवर्ष चैत्र कृष्ण एकादशी से चैत्र शुक्ला एकादशी तक मेला लगता है। पहले यहा मल्लीनाथ के श्रद्धालु जन दूर दूर से आते रहे। तब यह भक्त समागम था। दूर से आने वाले लोग ऊट बैल या अन्य किसी न किसी साधन से आते रहे और धीरे धीरे पशुओं का क्रय विक्रय भी किया जाने लगा—अब यह तिलवाडा का पशु मेला नाम से जाना जाता है। पहले इसे बाबा मल्लीनाथ का मेला या तिलवाडा का मेला नाम से ही सबोधित किया जाता रहा।

मल्लीनाथजी डोडियाली में यवनों के साथ मुठभेड में मारे गये और रूपादे सती हो गयी या उन्होंने धारू के देहावसान के बाद समाधि ली अथवा अपने योगबल से अन्तर्धान हुए ये सब अब कल्पना या अनुमान के विषय हो गये हैं। परन्तु उनके भक्त अब तक यह मानते आ रहे है कि उन्होंने घोडे पर बैठकर सदेह स्वर्गगमन किया और उनके पीछे-पीछे रूपादे जी भी स्वर्ग में पहुच गयीं। भक्तों के इस विश्वास का बखान हरजी भाटी ने अपनी एक रचना में किया है जिसे मालैजी री मैहमा नाम से जाना व गाया जाता है। हरजी भाटी रामदेव के भक्त और रूपादे मल्लीनाथ के परवर्ती कवि (१४६१ १५७५ वि) माने जाते हैं। रचना में कवि और भक्तों की निष्ठा और भक्ति भावना की अभिव्यक्ति देखिये।

मालोजी रूपादे से कहते हैं—हम बारहवें महिने में "साहिब से सदेह मिलेंगे—मालोजी ध्यान कर रहे हैं—इस ज्योति की जैसी कोई परमज्योति नही—

कहै मालोजी सुणो रूपादे गुण गावत आई दिल दाय
सैदेई साहिबजी सू मिलसा मिलसा मास दवादस माय॥

१२ मल्लीनाथ रूपादे का महाप्रयाण—

प्रारम्भ में मल्लीनाथ एव उनकी राजनैतिक चर्चा के दौरान यह बात सामने आई थी कि उनके जन्म समय के विषय में कोई निश्चित बात नहीं कही जा सकती थी। ठीक वहीं बात उनके देहावसान के विषय में भी है। सर्वसामान्यत उनका परलोक गमन १४५६ वि में माना जाता है परन्तु उसका कोई प्रामाणिक आधार नहीं मिल पाया है सारी चर्चा केवल अनुमानों के आधार पर ही टिकी हुई है। इसलिए इन अनुमानों के साथ उनसे सबधित साहित्यिक अवधारणाओं अथवा लोक विश्वास और धारणाओं पर यहा विचार किया जाना चाहिये।

मल्लीनाथ के वर्तमान वशजों में से डा नाहरसिंह जी से मल्लीनाथ के स्वर्गगमन पर चर्चा करने लगा तो कहने लगे डोडियाळी में मल्लीनाथ का अवसान हुआ था। इस सम्बन्ध में प्रचलित लोक परम्पराए बताती है कि डोडियाली मल्लीनाथ की बहन का ससुराल था। मल्लीनाथ जो दिल्ली से लौट रहे थे। रास्ते में जालोर के पास डोडियाली में अपनी बहन से मिलने चले गये। बहन ने सामेला (विधिवत् पीहर और ससुराल पक्ष के व्यक्तियों का मिलने का उत्सव) में उन्हें निमत्रित किया। वे डोडियाली में समय गवाना नहीं चाहते थे किन्तु बहन के स्नेहवश उन्हें रुकना पड़ा। उत्सव समाप्त होने पर वे कहने लगे कि अब हमें यहीं से प्रस्थान करना होगा हमारे पास अधिक समय नहीं है।

उपस्थित लोग भौचक्के रह गये। बहन ने अन्तिम विदाई से पूर्व अपने भाई से पूछा—आप तो प्रस्थान कर रहे हैं हमारे लिये क्या आदेश है? लोक परम्परा के अनुसार उन्होंने यह कहा बताया कि डोडियाली के लोग मेरे प्रस्थान के दिन से कभी भी अपने पानी के मटके (मिट्टी के बर्तन) ढकेंगे नहीं। यदि कोई ढकेगा तो उनमें कीडे पड जायेंगे। फिर मल्लीनाथ जी वहीं से घोडे पर बैठकर पहाडों में सुरग के रास्ते अदृश्य हो गये। डोडियाली में आज उस स्थान पर मल्लीनाथ जी का मन्दिर बना हुआ है और समीप में अलाव" नामक स्थान पर पहाडों के गुफा मुख पर भी मल्लीनाथजी का मन्दिर है।

इधर प्रसिद्ध इतिहासकार मानते हैं कि १४५६ वि में मल्लीनाथ जी डोडियाली नामक स्थान पर मुसलमानों के साथ हुई मुठभेड में मारे गये। नैणसी की ख्यात में यह सदर्भ आता है कि मल्लीनाथ का वृद्धावस्था के कारण शरीर अस्वस्थ हो गया था और इसी अस्वस्थता के कारण काल ने उन्हें ग्रस लिया। इधर मालदे रूपादे नाम से गुजरात में लोकप्रिय हुई कथा के अनुसार धारू मेघवाल ने समाधि लेने के सवा महीना पश्चात् मालजी रूपादे ने भी समाधि ली थी।

मालजी रूपादे के देहावसान के विषय में सरगावली नामक रचना में एक और ही बात मिलती है। उसके अनुसार मल्लीनाथ रूपादे धारू मेघवाल एलू, देलु कुम्हार

याद रोगी। बुद्धिजीवी व्यक्ति तर्क और प्रमाण के बिना सहसा किसी बात को स्वीकार या अस्वीकार नही कर सकता परन्तु भक्तों की बात और है। अलख उनका आराध्य है और वहा तक पहुचने का मार्ग बताने वाला उनका गुरु है। दूसरे भक्त के पास स्वय का कुछ भी सुरक्षित नही रहता है। वह सब कुछ समर्पण करता है और तल्लीन तदाकार हो जाता है। तीसरे सदेह स्वर्गारोहण भले ही न हुआ हो मल्लीनाथ रूपादे के भक्तों की दृष्टि में उनको लोकोत्तरता की अलौकिकता की असामान्यत्व की और अन्ततोगत्वा दिव्यत्व की जो निष्ठा है भक्ति है समर्पण है उसकी पराकाष्ठा मल्लीनाथ रूपादे के सदेह स्वर्गारोहण में देखी जानी चाहिये और जब मल्लीनाथ को स्वर्ग के प्रहरी पूछते हैं—बाबा किसका ध्यान करते हो? जवाब मिलता है—"अलख" का। इसलिए चौथे इस कथा का उद्देश्य निर्गुण निराकार अनन्त परब्रह्म की उपासना में जन सामान्य को प्रवृत्त करना भी है क्योंकि मूलत रूपादे मल्लीनाथ मनुष्य ही थे उन्होंने जिस मार्ग का अवलम्बन कर यह दिव्यत्व प्राप्त किया वही मार्ग श्रेयस्कर है। इसलिये अपने उद्देश्य के साथ ही साथ यह कथा यह सदेश भी देती है—

परस्पर भावयन्त श्रेय परमवाप्स्यथ।

यों युद्ध को जीवन और मृत्यु को मोक्ष मानने वाले दुर्दान्त रणबाकुरे राठौड रावळ मल्लीनाथ को भक्ति और योग द्वारा निर्गुण ईश्वर की उपासना में प्रवृत्त करने वाली रूपादे ने अपने गुरु उगमसी भाटी के उपदेशों व मार्ग का निष्ठापूर्वक अनुसरण कर न केवल स्वय ने पतिसहित परमपद प्राप्त किया अपितु हजारों लाखों अस्पृश्यों और समाज में उपेक्षित जनसामान्य को भक्ति मार्ग में प्रवृत्त किया। बाबा रामदेव इसी कार्य में प्रवृत्त हुए थे। कबीर मीरा से पूर्व १४वीं शती ई में राजस्थान में जो भक्ति की निर्गुण धारा प्रवाहित हुई और बाद में सारे भारतवर्ष में जो फैली उसका स्रोत कम से कम वेदोपनिषद् के समय पश्चात् लुप्त हुई निर्गुण उपासना की धाराओं के पुन सजीवीकरण का श्रेय राजस्थान में रूपादे मल्लीनाथ और रामदेव को दिया जाना चाहिये। रूपादे ने मल्लीनाथ को अपने पथ में लाने के लिये जो धैर्य दिखाया और जिन आपत्तियों का सामना करते हुए स्वय के साथ मल्लीनाथ का उद्धार किया उसके लिये किसी कवि ने उसकी मुक्त कण्ठ से प्रशसा की है—

ऐसी न कोई चोचौड सीसोदिया आगणै जिका कोरम घरै न कौ जाणी।
आ हुई माल रै महेवै अरधगा रूपादे राणिया सिरै राणी॥[६४]

और वह भी कैसी? अपने पति के साथ परमज्योतिर्मय हो गयी—

इण कळू बिचाळै माल रुपा अचळ जोत सह देव होवै परस जाय॥[६५]

जैसी रूपादे वैसे ही मल्लीनाथजी। बिना किसी जाति पाति के भेद के वे हिन्दु मुसलमान दोनों के लिए पीर हो गये—सबका दुख हरण करने वाले वे बाबा हो गये—

बाबौ दौरडा डोहेळा टळिसै सेवा करा पाय लागी।[६६]

शुभ मुहूर्त देखकर मालोजी अपने घोडे पर सवार हो गये और "नीसाण" घुमाया और शहर के बाहर आकर डेरा किया—उस समय वे ऐसे लोग रहे थे जैसे साक्षात् इन्द्र हो। इस तरह निशान सहित अपने स्वामी द्वारा शहर के बाहर डेरा किये जाने पर हाकिम को चिन्ता हुई—

चढ असवार साथ सोहि ऊभौ हाकिम निवण कर कर जोड।
कहो माल थै किसे गढ जावो हुकम करो बाका राठौड॥

जवाब में मालोजी कहते हैं—हमने धर्म की सेवा की हमारे करोडों जन्म के पापबधन कट गये हैं। इसलिए हम जहा से आये थे वहीं जा रहे हैं—

आया जठै उठै म्हैं जावा लायो नाव धरमरी ओड।
हेत कर सेवा कीवीं सामरी कट गया पाप जलम रा किरोड॥

यह कहकर मालोजी ने अपना घोडा स्वर्ग की ओर दौडाना शुरू किया और इन्द्र के स्थान तक पहुच गये—कोयल मोर बोलने लगे। नर साधु झूले झूलने लगे।

यों मालोजी के स्वर्ग पहुचने पर रूपादे भी जल्दी से जल्दी पहुचना चाहती थीं। उसने धारू से कहा—बैल लाओ और बैलगाडी तैयार करो—

रूपा कहे सुणो धारवा बैलिया लावो बैल सू जोड।
आगे रावळ मालोजी सीधा अपणे सरग भवन में कीधी दौड॥

तब धारू को आश्चर्य हुआ। कहने लगे—जाना तो मुझे पहले है। यों बैलों को जोडकर हे कामिनी कहा जा रही हो? रूपादे को अब और किसी से कोई नेह नहीं कोई मतलब नहीं। उसे अपने "धणी" (स्वामी) के चरणों में जाना है। देखिये रूपादे स्वर्ग की ओर रवाना हो रही है—

धम धम पडया बैल रा बाजे बाज ताल करै रिमझोळ।
सतरी बेल गेब सू हाली जणी सरगा चढी लूमती लोल॥

मालोजी रूपादे दोनों स्वर्ग के द्वार पर खडे हैं प्रहरी उन दोनों को नमस्कार करते हैं और आश्चर्यचकित हो पूछते हैं—आज तक तो यहा कोई नहीं पहुचा है आप किस का ध्यान करते हो? किसकी कृपा से सशरीर यहा पर पहुचे हो?

मालोजी उत्तर देते हैं—हमने हमेशा अलख निरजन की साधना की है—सभी में वह ही समाया हुआ है—

अलख निरजन सिवरिया साधौं राम भज्यो राजा रिणछोड।
साहिब एक भेष सगळा में अे सेहस नामा में एक हीज मोड॥[६३]

हमारा भौतिक सीमाओं की सकडी गलियों में रमा हुआ मन इस स्वर्गारोहण को स्वीकार न करेगा तो न सही। राजा जनक की भी सदेह स्वर्ग जाने की कथा आपको

याद होगी। बुद्धिजीवी व्यक्ति तर्क और प्रमाण के बिना सहसा किसी बात को स्वीकार या अस्वीकार नही कर सकता परन्तु भक्तों की बात और है। अलख उनका आराध्य है और वहा तक पहुचने का मार्ग बताने वाला उनका गुरु है। दूसरे भक्त के पास स्वय का कुछ भी सुरक्षित नहीं रहता है। वह सब कुछ समर्पण करता है और तल्लीन तदाकार हो जाता है। तीसरे सदेह स्वर्गारोहण भले ही न हुआ हो मल्लीनाथ रूपादे के भक्तों की दृष्टि में उनकी लोकोत्तरता की अलौकिकता की असामान्यत्व की और अन्ततोगत्वा दिव्यत्व की जो निष्ठा है भक्ति है समर्पण है उसकी पराकाष्ठा मल्लीनाथ रूपादे के सदेह स्वर्गारोहण में देखी जानी चाहिये और जब मल्लीनाथ को स्वर्ग के प्रहरी पूछते हैं—बाबा किसका ध्यान करते हो? जवाब मिलता है—"अलख" का। इसलिए चौथे इस कथा का उद्देश्य निर्गुण निराकार अनन्त परब्रह्म की उपासना में जन सामान्य को प्रवृत्त करना भी है क्योंकि मूलत रूपादे मल्लीनाथ मनुष्य ही थे उन्होंने जिस मार्ग का अवलम्बन कर यह दिव्यत्व प्राप्त किया वहीं मार्ग श्रेयस्कर है। इसलिये अपने उद्देश्य के साथ ही साथ यह कथा यह सदेश भी देती है—

परस्पर भावयन्त श्रेय परमवाप्स्यथ।

यों युद्ध को जीवन और मृत्यु को मोक्ष मानने वाले दुर्दान्त रणबाकुरे राठौड रावळ मल्लीनाथ को भक्ति और योग द्वारा निर्गुण ईश्वर की उपासना में प्रवृत्त करने वाली रूपादे ने अपने गुरु उगमसी भाटी के उपदेशों व मार्ग का निष्ठापूर्वक अनुसरण कर न केवल स्वय ने पतिसहित परमपद प्राप्त किया अपितु हजारों लाखों अस्पृश्यों और समाज में उपेक्षित जनसामान्य को भक्ति मार्ग में प्रवृत्त किया। बाबा रामदेव इसी कार्य में प्रवृत्त हुए थे। कबीर मीरा से पूर्व १४वीं शती ई में राजस्थान में जो भक्ति की निर्गुण धारा प्रवाहित हुई और बाद में सारे भारतवर्ष में जो फैली उसका स्रोत कम से कम वेदोपनिषद् के समय पश्चात् लुप्त हुई निर्गुण उपासना की धाराओं के पुन सजीवीकरण का श्रेय राजस्थान में रूपादे मल्लीनाथ और रामदेव को दिया जाना चाहिये। रूपादे ने मल्लीनाथ को अपने पथ में लाने के लिये जो धैर्य दिखाया और जिन आपत्तियों का सामना करते हुए स्वय के साथ मल्लीनाथ का उद्धार किया उसके लिये किसी कवि ने उसकी मुक्त कण्ठ से प्रशसा की है—

ऐसी न कोई चीतौड सीसोदिया आगणै जिका कोरम घरै न को जाणी।
आ हुई माल रै महेवै अरधगा रूपादे राणिया सिरै राणी॥[६४]

और वह भी कैसी? अपने पति के साथ परमज्योतिर्मय हो गयी—

इण कळू बिचाळै माल रुपा अचळ जोत सह देव होवै परस जाय॥[६५]

जैसी रूपादे वैसे ही मल्लीनाथजी। बिना किसी जाति पाति के भेद के वे हिन्दु मुसलमान दोनों के लिए पीर हो गये—सबका दुख हरण करने वाले वे बाबा हो गये—

बाबौ दीरडा डोहेळा टाळिसै सेवा करा पाय लागी।[६६]

और इसी निष्ठा और भावना के कारण मल्लीनाथ लोक के देवता हो गये—लोकदेवता बन गये। नवग्रह और नवनाथ नौ खण्डों में उनकी पूजा करते हैं। नवनिधिया उनकी दास हैं—

> *नवें महा सेवा तूझ नवें कुळी सेवें नाग*
> *नवा नाथा सिरै नाथ नवें खडा नाम।*
> *नवे हो पवन्ने खडा नवें नेह आगे नीत*
> *सता नवें निद्ध देवे महंवा री साम॥*[६०]

सिद्धों और नाथों के नाथ के सिद्ध मल्लीनाथ और उनकी मुक्तिदायिनी रूपा सामान्य से असामान्य हो गये साधक से सिद्ध हुए और मनुष्य कैसे देवत्व प्राप्त कर सकता है इसका उदाहरण छोड गये। साथ ही इस तथ्य को फिर से उजागर करते गये कि मानवता से और कोई भी वस्तु इस ससार में श्रेष्ठतर नहीं है—

न हि मानुषात् श्रेष्ठतर हि किंचित्।

यह सब सिद्ध करते-करते और साधना के औघट मार्ग पर चलते चलते उन्होंने जो उपदेश दिये उनका दर्शन उनके पदों और वाणियों में देखा सकता है। दूसरे उनकी जीवन गाथा को गाने का प्रयास जिन साधकों और कवियों ने किया है उसका दिङमात्र दर्शन भी अवश्य ही हमें पुण्य लाभ करायेगा क्योंकि वह भी उनके पुण्य का ही एक अग है उनकी जीवनगाथा का ही एक गीत है।

१३ रूपादे-मल्लीनाथ विषयक अन्यकर्तृक काव्यसर्जना—

मल्लीनाथ और रूपादे के पुनर्जन्म और पूर्वजन्म की कथा को विषय बनाकर जो गेय काव्य बनता गया वह रूपादे की वेल नाम से प्रसिद्ध है और चूंकि यह भक्तजनों द्वारा शताब्दियों तक निरन्तर गाया जाता रहा उसमें अनेक प्रकार से फेर बदल होते गये और जहा जहा वह गाया जाता रहा वहा की बोली या भाषा का उस पर प्रभाव भी पडता गया। इसीलिये वेल के उपलब्ध पाठों में छन्दों की सख्या की न्यूनाधिकता के साथ भाषायी भिन्नता भी नजर आयेगी। वेल के चार पाठ उपलब्ध हुए हैं—

१ प्रथम पाठ डॉ बद्रीप्रसाद साकरिया के सग्रह में मिले हस्तलिखित ग्रथ में उपलब्ध है। इसमें छन्द सख्या ६९ है। इसे श्री अगरचद नाहटा ने मरुभारती पत्रिका में प्रकाशित कराया है। केवल जागरण की कथा का प्रतिपादन करने वाली इस रचना में मल्लीनाथ को "परचो" (प्रतीति) मिलने का समय १४३९ वि बताया गया है।

२ दूसरा पाठ—जोधपुर के निकट बिलाडा कस्बे के निवासी श्री शिवसिंह चोयल द्वारा सकलित मौखिक परम्परा के आधार पर बनाया गया है। इसमें छन्दों की सख्या ५८ है। साकरिया द्वारा सकलित पाठ की तरह इसमें भी केवल जागरण के प्रसग का वर्णन है। इसे भी श्री नाहटा जी ने मरुभारती में प्रकाशित किया

है। इसका रचयिता हरनन्द भाटी है।

३ तीसरे पाठ का आधार भी मौखिक परम्परा है। इसका सकलन एव प्रकाशन डॉ सोनाराम विश्नोई ने किया है। छन्द सख्या ९८ है। इसमें अलसी लालर रूपादे का मालोजी से विवाह और महेवा आगमन जागरण तथा मल्लीनाथ के समर्पण तक की कथा दी हुई है। इसके रचयिता हरजी भाटी हैं जिनका अनुमानित समय १४६१ १५७५ वि माना जाता है।

४ चौथा पाठ स्वामी गोकुलदास जी डुमाडा निवासी द्वारा सकलित है जिसे धारू माल रूपादे की बडी वेल कहा जाता है। इसमें बुधजी और पाटण प्रम्ग अलसी लालर विवाह जागरण मल्लीनाथ जी का समर्पण रूपादे और धारू मेघवाल का मल्लीनाथ जी को उपदेश लिखमसी माली और ऋषि खींवण के उपदेश सकलित हैं। इसमें भी हरनन्द भाटी को ही रचयिता बताया गया है। इसमें छन्द सख्या १६० हैं।

बेल के इन विभिन्न पाठान्तरों के अलावा इस कथा को गद्य में भी निबद्ध किया है—इसे रुपादे री बात" अथवा "मल्लीनाथ पथ में आयो तै री बात" भी कहा जाता है। मालोजी (मल्लीनाथ) की जन्मपत्री पाटण सदर्भ" का बखान करती है जो मल्लीनाथ रूपादे धारू मेघवाल उगमसी भाटी पाडल गाय और गगाजल घोडे के पूर्वजन्म से सबधित है। इसी प्रकार शिवसिंह चोयल द्वारा मौखिक परम्परा के आधार पर प्राप्त की गयी एक रचना है—मालेजी री महैमा। मल्लीनाथ और रूपादे के सदेह स्वर्गगमन के प्रसग को इसमें बहुत प्रभावशाली ढग से प्रस्तुत किया गया है।

जागरण प्रसग के सदर्भ में गुजराती में धारू मेघ नी वाणी" नामक एक रचना भी मिली है। इसक अलावा तोलादे कतीबशाह देवायत पडित के कुछ पद तथा अन्य अनेक अज्ञातकर्तृक पद और गीत मिले हैं।

तोलादे जैसल प्रसग की चर्चा जिन गुजराती कथाओं पर आधारित है वे हैं—१ मालदे रूपादे और २ जैसल अने तोलादे। इसके अलावा कुछ गुजराती पद भी हैं जो मल्लीनाथ रूपादे की अजार यात्रा से सबधित हैं। इन सभी रचनाओं को तृतीय खण्ड के भाग (ब) में दिया है भाग (अ) रुपादे की स्वय की रचनाओं अथवा वाणियों के लिये सुरक्षित रखना मैंने उचित समझा है। इनमें यदि भाषा विषयक दृष्टि से सोंचे तो निश्चय ही यह भाषा आपको १४ १५वीं की नहीं लगेगी। उसके कुछ कारण हैं—

एक तो सदियों से गाये जा रहे पदों में बदलाव आया है और दूसरे इन्हें गाने वाले अशिक्षित समाज के उपेक्षित तबके के लोग अधिक हैं—उनका ध्यान भाषा सौष्ठव और सौन्दर्य की अपेक्षा भक्ति और समर्पण की ओर अधिक रहा है। तीसरे यह भी सभावना रही है कि कई लोगों ने स्वय ही रचनाए कर "कहे रूपादे" या "भणे रूपादे" जोड दिया है। ऐसे पदों को भी मैंने रूपादे कर्तृक ही माना है।

कुछ पद गुजराती में हैं कुछ मारवाडी में तो कुछ मेवाडी में भी हैं। दरअसल

भक्त के लिये भाषा का उतना महत्व नहीं है जितना की भाव का। ये पद भक्त के हृदय के उद्गार हैं उसके सत्वशुद्ध मन का दर्पण है लौकिक धरातल पर रहते अलौकिक बनने की मृत्यु से मोक्ष तक पहुचने की या कहिये मनुष्य से देवत्व प्राप्त करने की मनुष्य मन की उत्कट अभिलाषा की वे अभिव्यक्ति हैं। वे मानव मात्र को पाप से पुण्य की ओर मृत से अमृत की ओर और अशाश्वत से शाश्वत की ओर ले जाने वाले हैं। सत्वशील मन से ही हमें उनके अध्ययन में प्रवृत्त होना चाहिये और इसीलिये उनके अध्ययन का मैंने शीर्षक दिया है—रूपादे की अमृतवाणी जिसका अवगाहन निश्चय ही हमारे आपके मन में अमृतत्व की अभिलाषा को स्फुरित करेगा।

सन्दर्भ

१ मारवाड़ का इतिहास, पृष्ठ १२५०
२ वहीं पृष्ठ ३४
३ वहीं पृष्ठ ३४
४ वहीं, पृष्ठ ४१
५. वहीं, पृष्ठ ४४
६ वहीं पृष्ठ ४७
७ वहीं, पृष्ठ ४८
८ वहीं पृष्ठ ४९
९. वहीं पृष्ठ ५
१ वहीं पृष्ठ ५२
११ वहीं पृष्ठ ५२
१२ वहीं, पृष्ठ ५२
१३ वहीं, पृष्ठ ५३
१४ वहीं पृष्ठ ५४-५५
१५. शोध पत्रिका, भाग २ अंक २
१६ जैसलमेर की तवारीख, पृष्ठ ४
१७ हरिसिंह भाटी पूगल का इतिहास, पृष्ठ १८५ १९०
१८ वहीं, पृष्ठ ५
१९. मुहता नैणसी री ख्यात, भाग-२ पृष्ठ ६६ ६७
२० राव गणपतसिंह चितलवाना से मेरा पत्र व्यवहार
२१ मारवाड़ का इतिहास, पृष्ठ ३३
२२ मुहता नैणसी री ख्यात, भाग-२ पृष्ठ २८४
२३ वहीं पृष्ठ २८५ २९
२४ बाबा रामदेव पृष्ठ ५३०
२५. वहीं पृष्ठ ३४ ३५
२६ मुहता नैणसी ख्यात- भाग २ पृष्ठ २८० २८१
२७ वहीं पृष्ठ २८५
२८ मारवाड़ का इतिहास, पृष्ठ ५३
२९ वहीं पृष्ठ ५३-५५
३ मालाणी के गौरव गीत दे. मल्लीनाथ
३१ वीरमायण स. लक्ष्मीकुमारी चूंडावत
३२ दे. गुजरात का इतिहास
३३ नैणसी री ख्यात भाग २ पृष्ठ ३ ८
३४ सूरसिंह वरसप्रशस्ति दे. भूमिका
३५ मालाणी का इतिहास अप्रकाशित, पृष्ठ १७
३६ गुरु सा की बही बालोतरा डॉ हुकमसिंह भाटी द्वारा सगृहीत
३७ भाडियावास के बुधा आसिया की बही सौजन्य, डॉ. हुकमसिंह भाटी
३८ मालाणी के गौरव गीत, पृष्ठ ३६९
३९ मारवाड़ का इतिहास, पृष्ठ ५४
४० नैणसी री ख्यात, भाग ३ पृष्ठ २६ २७
४१ नैणसी री ख्यात, भाग २ पृष्ठ २८०
४२ नाथ सम्प्रदाय, पृष्ठ १५९
४३ वहीं पृष्ठ १२
४४ वहीं, पृष्ठ १६८
४५. वही पृष्ठ १५१

४६ वहीं पृष्ठ १६८ १७०
४७ शोध पत्रिका भाग २ पृष्ठ ८५
४८ नाथ सम्प्रदाय, पृष्ठ १५६
४९ वहीं पृष्ठ १५९
५० वहीं पृष्ठ १५७
५१ वहीं, पृष्ठ १५९
५२ वही पृष्ठ १५५ १६०
५३ खानजादा प्रशस्ति, नागौर सेमिनार १७७१
५४ मालाणी का इतिहास दे. मल्लीनाथ
५५ मालैजी री जन्मपत्री दे. परिशिष्ट
५६ वरदा वर्ष २ अक २ १९७७ पृष्ठ ४३
५७ वहीं पृष्ठ ४४ ४५
५८ मालैजी री जन्मपत्री
५९ वहीं १२
६० वहीं १३ १६
६१ दे मालदे रूपादे
६२ जैसल अने सती तोरल पृष्ठ ५७-७८
६३ शोध पत्रिका, भाग २ अक २
६४ मालाणी के गौरव गीत, पृष्ठ १७
६५ वहीं पृष्ठ १९
६६ वहीं पृष्ठ १७
६७ वहीं पृष्ठ १२



रूपादे की अमृतवाणी

१ पूर्वपीठिका—

भारतीय अध्यात्म चिन्तन की सनातन प्रवृत्ति के प्रथम दर्शन हमें वेद में ही उपलब्ध होते हैं साथ ही सृष्टिविषयक रहस्यों को जानने की मानव मनकी दुर्दम्य अभिलाषा और स्वय का मूल खोजने की उसकी जिज्ञासा इन दो तत्वों के कारण ही तो भारतीय दर्शनों का ऊहापोह हमें आत्मचिन्तन की ओर प्रवृत्त करता दिखाई देता है। ऋग्वेद की नासदीय सूक्त[1] जैसी रचनाए निश्चय ही सृष्टि प्रक्रिया के निरूपण का प्रयास करती हैं जबकि अस्यवामीय[2] सूक्त में कई ऐसे अश हैं जिनमें अद्वैत वेदान्त या साख्य दर्शन के मूल रूप को खोजा जा सकता है। वेद की सहिताओं स हम जब उपनिषदों क जगत् में प्रवेश करते हैं तब ससार की असारता और सत् या परब्रह्म की चिरन्तनता अर्थात् सदसद् की विचित्र उभयात्मक स्थिति हमें घेर लेती है। उपनिषद्, सन्यास या वानप्रस्थ की अवश्य ही चर्चा करते हैं परन्तु अकाल सन्यास की कदापि नहीं।

वेदकालीन समाज और उसकी आस्था के आयामों की चर्चा से पूर्व हमें यह बात ठीक तरह से समझ लेनी चाहिये कि वेद के सूक्तों अथवा रचनाओं को केवल स्तोत्र मानने की भूल हमें नहीं करनी चाहिए। यह बात नहीं है कि वर्षा गर्मी आदि से आनन्दित या पीड़ित होकर तत्तद् देवताओं की स्तुति कर लेने मात्र से ही व्यक्ति को सन्तोष हो जाता था क्योंकि यह भी बात नहीं है कि उन्हें होने वाली अनुभूतियों को केवल भौतिक स्तर तक ही सीमित किया जा सके क्योंकि आगे उपनिषदों में चलकर इन्द्र को परमतत्व मानने या "वह एक था फिर दो हुए उसने अनेकविध होने की इच्छा की इस प्रकार जो रहस्य भरे मनुष्य के अन्तर्मन के उद्गार हैं वे स्वय अपने आप में इस बात के स्पष्ट प्रमाण हैं कि वैदिक व्यक्तियों का व्यक्तित्व आधिभौतिक सीमाओं से घिरा हुआ नहीं था। परवर्ती भक्तों सन्तों की तरह उनके भी जीवन का एक उद्देश्य था जिसे कभी मोक्ष कभी मुक्ति कभी जीवन्मुक्ति तो कभी निर्वाण से अनेक प्रकार से अभिहित किया गया है।

वैदिक समाज की अपनी मान्यताए रही हैं। उनमें प्रमुख है आश्रम और वर्ण पर आधारित समाज की रचना। मनुष्य के जीवन के चार उद्देश्यों धर्म अर्थ काम और मोक्ष से चार आश्रमों को जोड दिया गया। बहुत सम्भव है वर्णों का आधार मूलत जन्म न रहा हो और गुणों की ही प्रधानता रही हो जैसा कि भगवद्गीता में भी कहा गया है। यथा चातुर्वर्ण्यं मया सृष्ट्वा गुणकर्मविभागश। परन्तु समाज में रहने वाले लोगों की अपनी ही अक्षमताओं या कमियों के कारण वर्णव्यवस्था अपने मूल रूप में स्थिर नहीं हो सकी और उसने कई जातियों उपजातियों को जन्म दिया। स्मृतियों में मिलने वाले आठ प्रकार के विवाहों को इन जातियों के मूल के रूप में देखा जा सकता है।

वेद ब्राह्मण ग्रन्थों के पश्चात् स्मृतियों ने भी धर्म-कर्म के अधिकारों को उच्च वर्ण तक ही सीमित रखा। परन्तु जाति उपजातियों के साथ वर्ण व्यवस्था भी अपने स्थायित्व के लिये सघर्ष करती रही और स्वभावत जब वर्णाश्रम के द्वार अन्य जातियों के लिये बन्द होने लगे तब समाज की विभिन्न जातियों के वर्गों में विद्रोह और असुरक्षा की भावना घर करने लगी तब मोक्ष पद की प्राप्ति के लिये स्वय का योग्य होना सिद्ध करने की होड सी लग गयी। महर्षि वाल्मीकि में इस प्रकार की भावना का उदाहरण हम देख सकते हैं।

वेदों के बहुदेववाद की साकार उपासना जहा पुराणों का विषय बन गयी उपनिषदों की श्रमण सस्कृति का भी धीरे धीरे विकास हुआ। ब्राह्मण-कर्म या मोटे रूप में ब्राह्मण धर्म का विरोध हुआ तब बौद्ध और जैन मतों का विकास कैसे व्यापक हुआ यह बात हमारी समझ में आने लगी। इसी ब्राह्मण धर्म के विरोध को सगठित रूप मिला ८ ९ वीं शती में नाथों के माध्यम से।

मल्लीनाथ के सिलसिले में पाशुपत या लकुलीश सम्प्रदाय की चर्चा हम पूर्व में कर आये हैं तथा यह भी देखा है कि राजस्थान के शासकों एव सामान्य वर्ग पर इस मत का बहुत अधिक वर्चस्व रहा है। पडित हजारी प्रसाद द्विवेदी ने बहुत ही विशद विवेचन कर यह बात भी भलीभाति सिद्ध की है कि गोरखनाथ ने ही इस प्रकार के मतों के अनुयायियों में सामजस्य स्थापित कर उन्हें नाथ होने की मान्यता प्रदान की थी। वेद विरोधी और ब्राह्मण धर्म विरोधी जो स्वय को बौद्ध या जैनों में धर्मान्तरित नहीं कर पाये उन्होंने इस मत का आश्रय लेना शुरू किया। इन लोगों को जुगी या जोगी कहा जाता था।[३]

वेद विरोध और स्मृति व्यवस्था के विरोध से जिन बौद्ध जैन परम्पराओं का विकास हुआ उनमें अकाल सन्यास के कारण सारा देश भिक्षु भिक्षुणियों से भर गया आश्रम वर्ण के उद्गाताओं ने अपनी सीमाए अधिक सकुचित की समाज व्यामोह में पडा रहा। लगभग १० ११ वी शती तक यही व्यवस्था बनी रही। सर्वथा असमजसता

का बोलबाला रहा और इसी पार्श्वभूमि पर जब मुसलमानों के आक्रमण शुरू हुए तो निचले स्तर के कई व्यक्तियों का मुसलमान बनने का सिलसिला शुरू हुआ। ये सब भारतीय मूल के मुसलमान कहे जाने लगे।[४] और इस दृष्टि से यदि विचार करें तो नाथ सम्प्रदाय या गोरख मत के दरवाजे हिन्दू और मुसलमान दोनों के लिये ही खुले थे रावल पीरों की नाथ सम्प्रदाय की शाखा का रहस्य इसी तथ्य में देखना चाहिये।

वास्तव में अकाल सन्यास के मूल को भी वेद विरोध में ही देखना चाहिये। तत्कालीन समाज के मापदण्ड शास्त्रीय ग्रथों और विधानों की चिन्ता न करते हुए मोक्ष साधना को अपना जीवन उद्देश्य मानने वाला एक वर्ग समाज में था जो मोक्ष को योगमूलक मानता था। इन लोगों को स्मृत्यादि ग्रन्थों में अतिवर्णाश्रमी या पचामाश्रमी माना गया है परन्तु योगियों ने इस शब्द की व्याख्या साधनात्मक और दार्शनिक आधार पर की है। इन्होंने पक्षपात (देहाभिमान) से विनिर्मुक्त होने पर ही ब्रह्म की प्राप्ति को स्वीकार किया है। आगे चलकर हम चर्चा कर देखेंगे कि अत्याश्रमी और नाथों में कितनी समानता है। नाथों में सभी के लिये प्रवेश खुला था इसलिए यह जीवनपद्धति "न हिन्दू न मुसलमान" वाली कहलायी।[५]

ऊपर जिस जोगी या जुगी का जिक्र किया है उनमें से अधिकाश नवधर्मान्तरित मुसलमान थे। इस सिलसिले में नाथों में मुस्लिमों की पर्याप्त सख्या के विषय में एक अनुमान किया गया है उसकी चर्चा भी यहा उपयुक्त होगी। अन्य धर्मावलम्बियों की तरह गोरखनाथ को भी मुसलमान आक्रमणकारियों से काफी सघर्ष करना पडा इसलिए उत्तर भारत में उन्होंने मुसलमानों से सन्धि कर ली। इसके तीन कारण थे नाथपथियों के मुख्य केन्द्र मुसलमानों के अधीन थे। दूसरे हिंगलाज देवी के प्रति श्रद्धाभाव रखने के कारण मुसलमान जनता से उनका सम्पर्क अधिक बढा। तीसरे मुसलमानों से सघर्ष के अवसर कम हुए। यही कारण है कि नाथों में रावल पीरों की शाखा का विकास हुआ। इन योगियों को कभी कभी जफर योगी भी कहा जाता है।

नाथ सम्प्रदाय में दीक्षित होती गयी जातियों के विवरण में प द्विवेदी ने जोगी के अलावा लगभग २५ ३० जातियों की ओर सकेत किया है।[६] इस सिलसिले में निवेदन है कि मक्का मदीना से चले नाथयोगियों का भारत में प्रवेश जिस रास्ते हुआ वह है काबुल कन्धार लाहौर भटनेर मरोठ देरावर लोद्रवा जैसलमेर। राजस्थान में यदुवशी भाटी भी इसी रास्ते आये। परन्तु प द्विवेदी जी ने राजस्थान में नाथों के व्यापक प्रचार की ओर या इस सम्प्रदाय में दीक्षित हुई राजस्थान की जनता की ओर विशेष रूप से कोई सकेत नहीं किया है अत नाथों की शास्त्रीय चर्चा और उनकी साधना पर विचार करने से पूर्व राजस्थान में नाथों का जो प्रभाव पड़ा और उससे जो सम्प्रदाय उद्भूत हुए, उन पर विचार करना भी यहा पर आवश्यक है।

रावल मल्लीनाथ के नाथानुयायी होने की चर्चा के दौरान हम पहले यह देख

चुके हैं कि तत्कालीन राजस्थान के शासकों पर पाशुपत या लकुलीश सम्प्रदाय का पर्याप्त प्रभाव था यहा तक कि उनकी उपाधिया भी राजकुल या रावल कुछ इसी प्रकार की रही हैं। मल्लीनाथ कैसे नाथ थे या हुए यह विषय नाथ सम्प्रदाय की विशेषताओं के साथ करना उचित होगा फिलहाल नाथ और उनसे हुई विभिन्न जातियों और उनकी साधना के विषय में की जा रही चर्चा आपको अवश्य ही रुचिकर प्रतीत होगी।

२ मारवाड का नाथ-समाज—

राजस्थान में विशेषकर मारवाड में एक शब्द बहुत प्रसिद्ध है खटदरसण हिन्दू, जैन और मुसलमानों के जितने भी साधु और फकीर हैं उनका समावेश इसी में किया जाता है—

जोगी जगम सेवडा सन्यासी दरवेश।
छट्टा दरशन ब्रह्म का जिसमें मीन न मेख॥

उत्तर प्रदेश के "जुगी" की तरह जोगियों का प्राचीन समय से मारवाड में निवास रहा है। योग साधना से योगी काया पलटना या आकाश में उडना इस तरह की करामातें किया करते थे इब्नबतूता ने इस प्रकार की करामातों को देखा भी था। इनकी देखादेखी अपनी सामर्थ्य से योगसाधना कर छोटे छोटे इल्म हासिल कर उदर निर्वाह करने वाले लोगों से सम्भवत जोगी जाति बनी। ये लोग गोरख सम्प्रदाय से अपना सम्बन्ध बताते हैं और अपनी परम्परा को जालन्धरनाथ से शुरू हुई मानते हैं। इनमें गृहस्थ जोगी अधिक हैं। निहग या नहग कम हैं। निहग जगलों में रहते प्राणायाम चढाते योग साधते और चेले मुडते थे।

जोगी महादेव की पूजा करते हैं भस्मी का तिलक लगाते हैं भीख मागते हैं और दारू मास का सेवन भी कर लेते हैं। इनके मदिरों को मठ या आसन कहा जाता है। मारवाड में ६ प्रकार के जोगी रहते आये हैं—

१ नाथ या कनफडे जोगी
२ मसानिया जोगी
३ कालबेलिया
४ औघड
५ अघोरी
६ रावल

(१) नाथ—

राजस्थान में सिसोदिया वश के सस्थापक बाप्पा रावल के गुरु थे हारीत ऋषि या राशी-नाथ गुरुओं के लिये ९ १०वीं से १३ १४वीं तक यही शब्द काम में लिया जाता रहा। मारवाड के मालाणी क्षेत्र में कपालेश्वर मदिर में स १३०० के शिलालेख

में पुजारियों के लिये इसी राशि का प्रयोग हुआ है। १५वीं १६वीं शती से इन्हें आयस या जोगेश्वर सरूप कहा जाने लगा। मारवाड के नाथ अधिकतर जालन्धरनाथ को ही मानते हैं। इसलिए उसके अनुयायियों को सिद्धेश्वर भी कहा जाता है। इनका प्राचीन आसन जालोर दुर्ग पर है। जालन्धरनाथ जी की मान्यता और उनके द्वारा किये गये चमत्कारों को खनोडा के चारण सबळा कवि ने गाया है। हमारे मल्लीनाथ भी उसी की कृपा के कायल रहे हैं किंचित् विषयान्तर का भय है किन्तु वह रचना जालन्धरनाथ जी के मारवाड में व्यापक प्रभाव का बखान करती है इसलिए उसे यहा उद्धृत कर रहा हू, जो डॉ शक्तिदान कविया के सौजन्य से प्राप्त हुई है—

(नीसाणी)
ओऊंकार अनादि इद निरगुण सरगुण नर।
पथा बारै ऊपरा पाव पथ अपम्पर।
सिद्धा चौरासी सिरै श्रीनाथ सिधेसर
दोय डाहलिया तारिया चदेरी सैहर।
मैंमद कीनो मुस्तफो मोती गढ अम्मर
गोड उद्धारे रामसिंघ काळी सिंघ ऊपर।
गोपीचद उद्धारियाबगाल तणी धर
आदि पुरी डण्डावती रगताचळ भाखर।
कोइक दिन तपस्या करी झरणा जळ नीझर
सज्जनियाँ बल बसयो जैनै दीनो वर
भागा पतसाहा भिडे हेकल्लै समहर।
निरभै चिडियानाथ नू, कीधो कालींजर।
दलियै चारण नू दियौ बेटो अम्बर
नाम कहायौ पीर निज सकवी देवासुर।
नाथ प्रगट्टे ओथ नर गढ पाल कर्णगिर
भूमडिल देखाळियो राव रैण करा घर।
जोपस याळी जवारिका जेण कीध जवाहर
गोगादे नै रळतळी दोघी कर मेहर।
मलीनाथ सिर कर मया द्रढ कियौ सहोदर
तोली कठयाणी तणी आसा पूरे उर।
सोनी ध्रमसी रे घरे बटाणा लगर
भीमे कानै भेटिया इह सच्चा अवखर।
जमै रात जागै जती गिरटिल्ले सिखर
साहस धीर उद्धारियो प्रगटे पालणपुर।
वूठा जमियलसाह नै है जोगी जाहर

दरसन जोगानै दियौ साचे मन सैंभर।
कर जोडे सबकौ कहै वे नाथ जालधर
(दूहौ)
कान दलौ भीमो सकवि सबलौ कियौ सनाथ।
जाळधर अधजारणा निमो चारणा नाथ॥

(सौजन्य–डॉ शक्तिदान कविया)

जालन्धरनाथ के ये अनुयायी अपने आचरण में कुछ मौलिकवाए लिये हुए हैं। ये कानों में मुद्रा या मुदरे पहनते हैं कपडे भगवे ही पहनते हैं किन्तु लगोट सफेद वस्त्र का होता है। काली ऊन की गुथी कणगती की तरह अपने गले में सेली पहनते हैं या उसे अपनी पगडी पर बाध देते हैं और गले में हरिण के सीग की बनी सीटी सींगी लटकाये रखते हैं भस्मी लगाते हैं और कोई-कोई रुद्राक्ष भी पहनते हैं।

मुदरे पहनने के लिये कान में छेद करना जरूरी है इसलिए कनफटा नाम से भी ये प्रसिद्ध हैं। जो कान चीरता है वह चीरा गुरु और जिसके उपदेश से शिष्य बनता है उसे सबद गुरु कहा जाता है।

चेला बनाने की इनकी विधि भी विशिष्ट है। चेले की आख बाधकर उसके कान में गुरुमत्र सुनाया जाता है और फिर आख खोलकर उसे ज्योति के दर्शन कराये जाते हैं तब वह "सुगरा" कहलाता है अन्यथा नुगरा। हिंगलाज माता की ज्योति प्रज्वलित होती है। स्त्री के दीक्षित होने की बात सामान्यत स्वीकार नहीं है किन्तु यदि वह हिंगलाज माता के सामने विरक्त होने की प्रतिज्ञा करती है तो उसे स्वीकार किया जाता है। वह मर्दाना वेष पहनती है और अन्य चीजों से उसका कोई लेना देना नही रहता है। नाथों में मुर्दों को उत्तर की ओर मुह करके गाड दिया जाता है।[७]

नाथों के इस ऊहापोह में दीक्षा विधि पर यदि थोडा सा भी विचार किया जाए तो मल्लीनाथ की दीक्षा के जिस प्रसग की चर्चा हम कर आये हैं उससे इस विधि की कितनी समानता है यह सहज ही दृष्टिगोचर होगा। साथ में यह भी यहा पर कहना आवश्यक है कि नाथों से सबधित कई शब्द यथा नुगरा सुगरा सेली सींगी रूपादे की वाणियों में कई बार प्रयुक्त हुए हैं। उनकी चर्चा बाद में करेंगे।

(२) मसानिया जोगी–

मसानिया (समशानिया) जोगियों के सिलसिले में एक दन्तकथा मारवाड में प्रचलित है। आज जोधपुर का किला जहा पर है वह भोमसेन पहाड कहलाता था। चिडियानाथ जो अपनी धूणी यहीं रमते थे। राठौड शासक जोधा ने जब किले का निर्माण किया तब चिडियानाथ को समीप ही पालासणी नामक स्थान पर जाने के लिये प्रार्थना की।

एक बार जोधा जब पानी का कुआ बनवाने में व्यस्त था तो उसमें से साप निकला।

उसको पकडने/मारने के लिये चिड़ियानाथ के शिष्य दीनानाथ को बुलाया गया। दीनानाथ ने साप को तो पकड लिया किन्तु सर्पदश से उनकी मौत हो गई। राजा ने उसके रिश्तेदारों को सात्वना के लिये कहा "मागो । तब उन्होंने कहा–जिन्दों के मालिक तुम मुर्दों के मालिक हम। तभी से मृतक के कफन के आधे हिस्से के वे मालिक हो गये। इसलिये जोधपुर में अब भी आधा कफन हरिजन का और आधा मसानिया जोगी का होता है। श्मशान में रहने से ये लोग मसानिया कहलाये।

इनका व्यवसाय खेती मजदूरी साप को पकडने का और जहर उतारने का भी है। साप के काटने से अगर इनमें से किसी की मौत हो जाय तो उस साप को ये लोग "नुगरा कहते हैं। ये महादेव माताजी की पूजा करते हैं कपाल पर भस्मी का आडा तिलक लगाते हैं। मदिरा और मास पर कोई बधन नहीं रखते हैं। जब इनमें से किसी व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है तो मुर्दे को कपडे की झोली में बैठाकर ले जाते हैं। मृतक के लगोट पर तहबद बाधते हैं तथा गले में कफनी नाद सेली और रुद्राक्ष डालते हैं। लगोट के सिवा सब कपडे भगवे होते हैं। मुर्दे के गाडने के बाद गायत्री मन्त्र का जाप करते हैं जिसके अन्त में गुरु गोरखनाथ का अवश्य ही स्मरण किया करते हैं।[८]

अपने पथ की बातों भजनों या वाणियों को मौखिक ही याद रखते हैं। कभी इकतारे पर इन्हें गाते हुए भी देखा सुना जा सकता है। जोगियों का ही फिरका होने से इनमें पथ के बारे में लगभग वे ही बातें मान्य हैं जो नाथ प्राय स्वीकार किया करते हैं। जोधपुर के निकट "अरना" नामक जगह इनका तीर्थस्थान है।

(३) कालबेलिया–

जालन्धरनाथ जी के १२वें शिष्य थे कनीपाव। कनीपाव के बारे में यह बात प्रसिद्ध रही है कि वे सर्पदश का इलाज कर जनता की सेवा करते थे। मारवाड के कालबेलियों का भी साप को पकडने व सर्पदश होने पर उसका इलाज कराने का व्यवसाय रहा है। इसलिये ये लोग कनीपाव की गद्दी को अपना गुरुपीठ मानते हैं। जोधपुर के निकट ढीकाई" नामक स्थान पर कालबेलियों का गुरुद्वारा है।

कालबेलिया अर्थात् जाति-बहिष्कृत नाथों की जाति से अलग की गयी यह जाति है। ये अपने नाम के अन्त में "पाव" लगाते हैं कान में मुदरे न पहन कर मुरकिया डाल लेते हैं और मुरकियों में मुदरे लटकाते हैं। कालबेलियों के मुदरे अधिकाशत कास्य पीतल और चादी के होते हैं जिन्हें तुगल" कहा जाता है। इनके उपनाम अधिकतर राजपूतों की जातियों पर ही मिलते हैं जैसे राठौड पवार सोलकी भाटी आदि।

कुछ कालबेलिये गावों में रहते हैं तो कुछ घुमक्कड भी हैं। ये पगडी प्राय भगवे रग की पहनते हैं और औरतें अपना दुपट्टा या ओढनी भी भगवे रग की ही पहिनती हैं। कालबेलिये महादेव और पार्वती की पूजा करते हैं आक धतूरा और धूप चढाते

हैं। इनमें भी जोगियों की तरह हिंगलाज माता की मान्यता है। हिंगलाज माता के यहा से "ठूमरे" नाम के पत्थर जैसे दिखाई देने वाले दाने लाकर पानी में उबालते हैं और रेशम या डोरे में बाधकर उन्हें गले में पहिनते हैं।

जब किसी कालबेलिये की मृत्यु हो जाती है तो उसे सीढी या अर्थी पर उत्तर की ओर पैर और दक्षिण की ओर सिर कर लम्बा लिटाकर ले जाते हैं। साढे तीन हाथ कपडे में लपेटकर शव को औंधा लिटाकर जमीन में गाडते हैं। हिंगलाज देवी के जिसने दर्शन किए हैं उसके शव को बैठे हुए स्थिति में दफन किया जाता है।[९]

(३-५) औघड़ अघोरी और रावल—

ये लोग मारवाड के मूल निवासी नहीं हैं। प्राय पजाब से आये हुए हैं। औघड कान में चीरा नहीं देते हैं। ये अपनी परपरा को राजा भरथरी से जोडते हैं। पजाब में भरथरी की धूणी पर कभी कोई आदमी गया और हाथ पर धूप सुलगा कर बारह वर्ष तक धूणी की परिक्रमा करता रहा। तब भरथरी ने प्रसन्न होकर उसे अपना चेला बनाया किन्तु शर्त रखी कान में चीरा नहीं दोगे। इस प्रकार की किंवदन्ती मारवाड में प्रचलित है। औघड सम्प्रदाय इस प्रकार भरथरी की परम्परा में विकसित हुआ एक सम्प्रदाय माना जाता है।

औघड सम्प्रदाय के बिगडे हुए लोग अघोरी कहलाते हैं। भिक्षावृत्ति ही इनकी आजीविका है। रावलों की सख्या मेवाड में अधिक है। ये कानों में मुदरे पहनते हैं। ये भी भिक्षावृत्ति पर आश्रित होते हैं जब भिक्षा मिल जाती है तो सिंगी बजाते हैं।[१०]

(६) जगम—

जोगियों के याचक जगम कहलाते हैं। अपने सिर दोनों भुजाए और कनपटियों पर पीतल के साप बाधे जगम भिक्षा मागते हैं। माथे पर मुकुट पहनते हैं तथा मुकुट में महादेव की मूर्ति अकित होती है। ये भगवे वस्त्र पहनते हैं और महादेव की पूजा करते हैं। "पार्वती का ब्यावला" गाने के लिये इन्हें कभी कभी शादी ब्याह के मौके पर बुलाया भी जाता है। रावल अपना सम्बन्ध प्रसिद्ध नागनाथी सम्प्रदाय से जोडते हैं।[११]

नाथ परम्परा से सीधे जुडे इन सम्प्रदायों के व्यक्तियों के अलावा मारवाड में शामी सामियों अथवा दशनामियों का सम्प्रदाय भी ऐसा है जिस पर नाथों के आचार विचार का पर्याप्त प्रभाव है। सामियों को अतीत या गोसाई भी कहा जाता है। इनमें गिरि पुरी भारती बन अरन पनत सगर तीर्थ आश्रम और सरस्वतियों का समावेश किया जाता है। इनमें से आधे नाम तो ऐसे प्रतीत होते हैं जो सन्यासियों के नाम की तरह हैं या उनके नाम के साथ जुडते हैं। ये सभी लोग महादेव के पूजक हैं। मृत्यूपरान्त प्राय इनको बैठे हुए ही गाड दिया जाता है और उनके अवशेष लाकर उनके आवास में रखकर एक चौंतरा बना उस पर मृत व्यक्ति तथा महादेव की मूर्ति या प्रतिमा लगाई जाती है। इनमें अधिकतर लोग गृहस्थ धर्म का पालन करते हैं।

जो व्यक्ति इनका शिष्य बनना चाहता है उसके सिर को मूंड़ा जाता है और भीख मागने के लिये एक खप्पर उसके हाथ में दिया जाता है। महिलाए जो हिंगलाज माता के दर्शन कर आती हैं वे मदाना वेश पहनती हैं और घर ससार से अलिप्त होकर रहती हैं। ऐसी महिलाओं को अवधूतनी कहा जाता है। इसी प्रकार जो पुरुष निरग रहते हैं उन्हें भी अवधूत कहा जाता है। अवधूत भस्मी लगाते हैं तथा बैठने आदि के लिये व्याघ्र चर्म या मृगचर्म को साथ में रखते हैं कमडल हाथ में लेकर भिक्षा वृत्ति से अपनी आजीविका चलाते हैं।[१२]

३ नाथ परम्परा और रूपादे मल्लीनाथ—

नाथ परम्परा से जुडे हुए मारवाड के समाज के एक पक्ष विशेष की ऊपर की गई चर्चा से कई अह मुद्दे उपस्थित हो जाते हैं खासकर मल्लीनाथ रूपादे के पथ के सिलसिले में। उन पर विचार किये बिना एक पग भी आगे बढना हमारे लिये कदाचित् ही सम्भव है। उपर्युक्त चर्चा से जो बातें उभर कर सामने आती हैं उनका सकेत यहा पर करना उचित होगा —

१ नाथ परम्परा का विकास राजस्थान में ८ ९ वी शती से माना जा सकता है।

२ नाथ परम्परा के अनुसार मुदरे सेली सिंगी व रुद्राक्ष पहनना इस समाज में आवश्यक माना गया है।

३ नाथों की चेला बनाने की विधि का मल्लीनाथ की दीक्षा विधि से पर्याप्त साम्य है।

४ इन सभी अनुयायियों में हिंगलाज माता की मान्यता प्रमुख है।

५ अन्तिम सस्कार में शव को दफनाने का ही रिवाज है।

६ इनमें से कोई जालन्धरनाथ की परम्परा के तो कोई कनीपाव जी के सम्प्रदाय से सम्बन्ध रखते हैं।

७ महादेव के साथ ये लोग शक्ति की उपासना भी करते हैं।

८ कान न फाडने वाले अघोरी सम्प्रदाय का भी यहा (मारवाड में)अस्तित्व रहा है।

९ कुछ अनुयायी यथा जगम साकार महादेव के उपासक हैं।

१० दशनामी सम्प्रदाय में मनुष्य जीवित अवस्था में महादेव का उपासक होता है परन्तु मृत्यु के पश्चात् उसे महादेव के समकक्ष मान लिया जाता है।

नाथों के बाह्याचरण दीक्षा और सुगरा बनाने की विधि के सिलसिले में मल्लीनाथ को दी गई दीक्षा की विधि पर यहा हमें विचार के लिये प्रवृत्त हो जाना चाहिये। यहा मल्लीनाथ से सम्बद्ध एक गद्य वार्ता का उदाहरण देना उचित होगा

रावल जी रै हाथै उगवसो तावारा बेल घाती अर मोगेडियो दियो कह्यो बीज

रै दिन सात घरा सू आखा माग कार्बडिया नू बाटि। [१३]

यहा कावड कामड का अर्थ सन्यास जीवन का प्रतिनिधि मान लेना चाहिये।

स्वामी गोकुलदास द्वारा सकलित "बेल के पद सख्या १५१ ५२ में जो दीक्षा वर्णन है वह भी देखिये—

आख बाधू तो अलखजी री आण
सतगुरु आगे लाया ताण रावल माल ने।
पाट पीताबर पडदा तणाय जोत कलस के सन्मुख बैठाय
आख बाध कर धारू जी त्याय
सेली सिंगी देवायत पहराय नुगरा का सुगरा।
गुरु उगवसी दीन्हा माथे हाथ
दे गुरु मत्र करिया सुनाथ चेला नाथ्या है।

नाथों में चेला बनाने से पहले उसकी आखें बन्द करना पडदे में बैठाना ज्योति दर्शन कराना सेली सिंगी पहनना और फिर गुरु मत्र देना प्रसिद्ध है।

रूपादे से सम्बन्धित "बेल के एक और सस्करण में जिसे श्री चोयल ने सकलित किया है साफ तौर पर कानों में कुडल पहनाने का निर्देश किया है। मल्लीनाथ को कान में कुडल पहनाकर उनके सिर पर राव रतनसी ने हाथ रखा है तब कहीं जाकर उन्हें रावल नाम से सबोधित किया गया है।—

राव रतनसी हाथ दिराणा काना में कुडल घलाणा
राव पलट नै रावल कैवाणा जणै वाना री लार बिकाणा॥[१४]

बेल के एक और सस्करण में देखिये नाथ की क्या महिमा गाई गई है—

नाथ निरजण अगम अपारा सिमरौ सता सिरजणहारा
अपणा धणी सही कर जाणौ जलम मरण भव डर क्यू आणौ॥[१५]

इन प्रमाणों को यदि स्वीकार करने की स्थिति में हम अपने को पाते हैं तो हमें निश्प्रपच ही यह स्वीकारना होगा कि रूपादे मल्लीनाथ जिस पथ के अनुयायी हो गये वह पथ नाथ अथवा उसी का कोई तत्कालीन प्रचलित रूप रहा होगा। ऊपर चर्चित नाथों के फिरकों में से वे किस से सम्बन्ध रखते होंगे इसलिए प्रमाण के रूप में एक जनश्रुति को उदाहृत किया जा सकता है। नाथों की चर्चा के अन्त में जिन सामियों/दशनामियों अथवा गोसाईयों की ओर आपका ध्यान हमने आकर्षित किया है उन गोसाईयों में यदि कोई व्यक्ति बीज" (द्वितीया) का व्रत रखता है तो व्रत के उद्यापन के दिन रात्रि में उसके यहा "रूपादे की बेल अवश्य ही गायी जाती है।

परन्तु यहा पर यह बात स्मरणीय है कि रूपादे का प्रभाव गोसाईयों से भी मेघवालों में अधिक है कामड भी उससे जुडे हुए हैं। वैसे तो कामड रामदेव के भक्त हैं किन्तु

जो व्यक्ति इनका शिष्य बनना चाहता है उसके सिर को मूडा जाता है और भीख मागने के लिये एक खप्पर उसके हाथ में दिया जाता है। महिलाए जो हिंगलाज माता के दर्शन कर आती हैं वे मर्दाना वेश पहनती हैं और घर ससार से अलिप्त होकर रहती हैं। एसी महिलाओं को अवधूतनी कहा जाता है। इसी प्रकार जो पुरुष निहग रहते हैं उन्हें भी अवधूत कहा जाता है। अवधूत भस्मी लगाते हैं तथा बैठने आदि के लिये व्याघ्र चर्म या मृगचर्म को साथ में रखते हैं कमडल हाथ में लेकर भिक्षा वृत्ति से अपनी आजीविका चलाते हैं।[१२]

३ नाथ परम्परा और रूपादे मल्लीनाथ—

नाथ परम्परा से जुडे हुए मारवाड के समाज के एक पथ विशेष की ऊपर की गई चर्चा से कई अह मुद्दे उपस्थित हो जाते हैं खासकर मल्लीनाथ रूपादे के पथ के सिलसिले में। उन पर विचार किये बिना एक पग भी आगे बढना हमारे लिये कदाचित् ही सम्भव है। उपर्युक्त चर्चा से जो बातें उभर कर सामने आती हैं उनका सकेत यहा पर करना उचित होगा —

१ नाथ परम्परा का विकास राजस्थान में ८ ९ वीं शती से माना जा सकता है।

२ नाथ परम्परा के अनुसार मुद्रे सेली सिंगी व रुद्राक्ष पहनना इस समाज में आवश्यक माना गया है।

३ नाथों की चेला बनाने की विधि का मल्लीनाथ की दीक्षा विधि से पर्याप्त साम्य है।

४ इन सभी अनुयायियों में हिंगलाज माता की मान्यता प्रमुख है।

५ अन्तिम सस्कार में शव को दफनाने का ही रिवाज है।

६ इनमें से कोई जालन्धरनाथ की परम्परा के तो कोई कनीपाव जी क सम्प्रदाय स सम्बन्ध रखते हैं।

७ महादेव क साथ ये लोग शक्ति की उपासना भी करते हैं।

८ कान न फाडने वाले अघोरी सम्प्रदाय का भी यहा (मारवाड में)अस्तित्व रहा है।

९ कुछ अनुयायी यथा जगम साकार महादव के उपासक हैं।

१० दशनामी सम्प्रदाय में मनुष्य जीवित अवस्था में महादेव का उपासक होता है परन्तु मृत्यु के पश्चात् उसे महादेव के समकक्ष मान लिया जाता है।

नाथों के बाह्याचरण दीक्षा और सुगरा बनाने की विधि के सिलसिले में मल्लीनाथ को दी गई दीक्षा की विधि पर यहा हमें विचार क लिये प्रवृत्त हो जाना चाहिये। यहा मल्लीनाथ से सम्बद्ध एक गद्य वार्ता का उदाहरण देना उचित होगा

रावल जी रै हाथै ठगवसी तावाण तेल घातो अर मोगेडियो दियो कह्यौ बोज

रै दिन सात घरा सू आखा माग कावडिया नू बाटि।"[१३]

यहा काबड कामड का अर्थ सन्यास जीवन का प्रतिनिधि मान लेना चाहिये।

स्वामी गोकुलदास द्वारा सकलित बेल के पद सख्या १५१ ५२ में जो दीक्षा वर्णन है वह भी देखिये—

आख बाधू तो अलखजी री आण
सतगुरु आगे लाया ताण रावल माल ने।
पाट पीताम्बर पडदा तणाय जोत कलस के सन्मुख बैठाय
आख बाध कर घारू जी ल्याय
सेली सिगी देवायत पहराय नुगरा का सुगरा।
गुरु उगवसी दीन्हा माथे हाथ
दे गुरु मत्र करिया सुनाय चेला नाथ्या है।

नाथों में चेला बनाने से पहले उसकी आखें बन्द करना पडदे में बैठाना ज्योति दर्शन कराना सेली सिंगी पहनना और फिर गुरु मत्र देना प्रसिद्ध है।

रूपादे से सम्बन्धित बेल के एक और सस्करण में जिसे श्री चोयल ने सकलित किया है साफ तौर पर कानों में कुडल पहनाने का निर्देश किया है। मल्लीनाथ को कान में कुडल पहनाकर उनके सिर पर राव रतनसी ने हाथ रखा है तब कहीं जाकर उन्हें रावल नाम से सबोधित किया गया है।—

राव रतनसी हाथ दिराणा काना में कुडल घलाणा
राव पलट नै रावल कैवाणा जणै वाना री लार बिकाणा॥[१४]

बेल के एक और सस्करण में देखिये "नाथ" की क्या महिमा गाई गई है—

नाथ निरजण अगम अपारा सिमरौ सता सिरजणहारा
अपणा धणी सही कर जाणौ जलम मरण भव डर क्यू आणौ॥[१५]

इन प्रमाणों को यदि स्वीकार करने की स्थिति में हम अपने को पाते हैं तो हमें निश्प्रपच ही यह स्वीकारना होगा कि रूपादे मल्लीनाथ जिस पथ के अनुयायी हो गये वह पथ नाथ अथवा उसी का कोई तत्कालीन प्रचलित रूप रहा होगा। ऊपर चर्चित नाथों के फिरकों में से वे किस से सम्बन्ध रखते होंगे इसलिए प्रमाण के रूप में एक जनश्रुति को उदाहृत किया जा सकता है। नाथों की चर्चा के अन्त में जिन सामियों/दशनामियों अथवा गोसाईयों की ओर आपका ध्यान हमने आकर्षित किया है उन गोसाईयों में यदि कोई व्यक्ति बीज (द्वितीया) का व्रत रखता है तो व्रत के उद्यापन के दिन रात्रि में उसके यहा रूपादे की बेल अवश्य ही गायी जाती है।

परन्तु यहा पर यह बात स्मरणीय है कि रूपादे का प्रभाव गोसाईयों मे भी मधवालों में अधिक है कामड भी उसमे जुडे हुए हैं। वैस तो कामड रामदेव के भक्त हैं किन्तु

जिस ब्राह्मण धर्म के विरोध की चर्चा इस खण्ड के प्रारंभ में मैंने की है उसी का परिणाम समझना चाहिये कि रूपादे के साथ रामदेव की तरह समाज के वे सभी लोग जुडते गये जो वर्ण और आश्रमों के विरोधी थे। यही कारण है कि रूपादे का सम्प्रदाय नाथों के अन्तर्गत ही मानने के लिये हम लगभग विवश हो जाते हैं। नाथों के इस बहुविध फैलाव में और उसके अनुयायियों के द्वारा किए जाने वाले जागरण में "जोत" की चर्चा आ चुकी है। यह ज्योति उसी शक्ति के प्रतीक के रूप में लगायी जाती है जिसे "हिंगलाज माता के नाम स चारणों की आराध्य देवी भी माना गया है। वैसे राजस्थान में प्रचलित मान्यता के आधार पर हिंगलाज माता चारण जाति की आराध्यदेवी है वे इसे आद्या शक्ति के रूप में मानते और पूजते हैं। हिंगलाज माता का मूल स्थान बलुचिस्तान में है देश के सभी ५१ शक्तिपीठों में यह आद्यस्थान माना जाता है। हिंगलाज की उत्पत्ति की कथा भी मनोरंजक है।

गवरैय्या शाखा के चारण हरिदास के घर कन्या के रूप में शक्ति ने अवतार लिया था। हरिदास जी थट्टा के निवासी थे सम्भवत इसी कारण चारणों में जितने भी शक्ति के अवतार हुए हैं वे हिंगलाज के ही अश माने जाते हैं। हिंगलाज के लोद्रवा और जैसलमेर के मदिर प्रसिद्ध हैं। जैसलमेर की मूर्ति के पाद भाग के नीचे "साता दीप री राम श्री हींगलाज" शब्द अंकित हुए दिखायी देते हैं। हिंगलाज के उपासकों में चागला मुसलमान भी सम्मिलित हैं।[१६]

चारणों का हिंगलाज के साथ कैसे सम्बन्ध स्थापित हुआ होगा इस विषय में अभी तक ऊहापोह नहीं हुआ है फिर कुछ तथ्यों पर विचार किया जा सकता है। गोरखनाथी सम्प्रदाय के चर्पटनाथ के विषय में प्रसिद्ध है कि चारण उन्हें अपनी जाति का व्यक्ति मानते हैं। फिर से नाथों के उदय होने की चर्चा का एक बार स्मरण करें तो सहज ही समझ सकते हैं कि चार वर्ण और चार आश्रमों में चारणों का कहीं पर भी समावेश नहीं हो सकता था। अत यह अनुमान करना युक्तिसगत ही होगा कि समाज के अन्य वर्गों की तरह चारण वर्ग भी धीरे धीरे नाथ उपासना की ओर बढा होगा और इसीलिये यद्यपि चारण वैष्णव भी हैं फिर भी उनमें अभी शाक्त मत को स्वीकार करने वाला भी एक बहुत बडा वर्ग है। अत हिंगलाज की उपासना उस कौल या पाशुपत सम्प्रदाय की देन ही मानना होगा जिसमें ९ १२वीं शती तक के राजस्थान के प्राय सभी शासक और उनके साथ प्रजाए भी दीक्षित होती गईं।[१७]

राजस्थान की नाथ परपराओं विशेष कर जोगी ओघड और कालबेलियों में जो अपने कान नहीं फाडते हैं हिंगलाज का इष्ट माना जाता है। इसके मूल में एक कथा की ओर सकेत किया जाना चाहिये।

हिंगलाज में जब एक बार दो सिद्ध अपने शिष्य का कान चीरने लगे थे किन्तु क्या ही चमत्कार कि वह छेद बार बार बन्द हो जाता था। तब से ओघड परम्परावादी

कान नहीं चिराते हैं।[१८] यहां की नाथ परम्परा में कान न चीरने वालों की संख्या जो अधिक है वे सभी हिंगलाज के उपासक हैं।

मल्लीनाथ रूपादे को नाथों की परम्परा से जोड़ने वाले संदर्भों में वासग नाग का महत्व है। रूपादे की बेल के सभी संस्करणों में किसी न किसी रूप में जागरण में रूपादे के जाने पर वासग नाग रूपादे की शय्या पर आकर सो जाता है। गोकुलदास वाली बेल में तो स्वयं धारू मेघवाल वासग नाग को निमन्त्रण देने गये थे। नागतत्व महादेव से अनिवार्यतः सम्बन्धित है रूपादे के रक्षक भी किसी न किसी रूप में आदि शिव ही हुए। इसी वासग नाग की पूजा प्रायः प्रत्येक अवसर पर मेघवाल समाज में भी की जाती है। इस सम्बन्ध में अध्ययन करने से पता चलता है कि मेघवालों की भी कमोवेश नाथों से ही जुड़ी हुई परम्परा है। जोगियों और आयडों में मृत्यूपरान्त की जाने वाली शंखोद्धार की क्रिया मेघवालों के यहां पर भी होती है। उसका संक्षिप्त विवरण यहां देना समीचीन होगा।[१९]

मेघवालों में मृत्यु के तीन दिन पश्चात् रात्रि में "पाट पूरने" का दस्तूर किया जाता है। चावलों के पाट पर सफेद और लालरंग के कपड़े ओढ़ा कर मेघवालों के पुरोहित "कोटवाल" पाट पर ऊपर की ओर बैकुंठ तथा नीचे हनुमान गजानन वासग नाग रामदेव जी की पादुकाएं उनका घोड़ा डाली बाई और हरजी भाटी बनाते हैं। दीपक को साकिया कहते हैं। कलश के बीच ज्योति की जाती है जो सारी रात जलती रहती है। कच्चे सूत का एक कैंकड़ा लकड़ी पर बनाया जाता है पांच व्यक्ति उसे स्पर्श कर लें तब ज्योति प्रज्वलित की जाती है। पाट के चारों ओर उनके महाराज और तीन व्यक्ति बैठे रहते हैं। पाट पूरने व ज्योति जलाये जाने के बाद मकान के दरवाजे किवाड़ बंद किये जाते हैं और फिर रात भर भजन कीर्तन चलता रहता है।

शंखोद्धार या शंख ढोलने की क्रिया लगभग भोर के समय होती है। एक बेंत के करीब बरू की अर्थी बनाई जाती है। उसे हिंगलाट कहते हैं जिसे कच्चे सूत से बांध दिया जाता है चारों किनारों पर भी कच्चा सूत बांधा जाता है और फिर उन्हें एक बड़े धागे में बांधते हैं। यह धागा मकान के ऊंचे डांडों में बांध दिया जाता है। इतना होने पर मिट्टी के कुण्डे को पाट पर रखते हैं और उसमें हिंगलाट को लटका देते हैं। हिंगलाट पर उड़द के आटे का पुतला बनाकर सुलाया जाता है जिसे झूला दिया जाता रहता है। यदि स्त्री की मृत्यु हुई है तो लाल अन्यथा सफेद कपड़े से पुतले को ढका जाता है। ऊपर के धागे में पीपल के नौ पत्ते बांधते हैं जिसे "पेंडी" कहते हैं। कुण्डे के पास पानी का लोटा और शंख रहता है। पुरोहित और सगे सम्बन्धी शंख से हिंगलाट पर पानी ढोलते रहते हैं।

धागे में बंधे पीपल के पत्ते जिन्हें भगवान तक पहुंचने की सीढ़ियां माना जाता है सवेरे खोल कर कुंडे में रखकर मकान के बाहर गाड़ दिये जाते हैं। चूरमे का प्रसाद

किया जाता है तथा चार व्यक्ति एक ही थाली में भोजन करते हैं कोटवाल भीतर से पूछता है और वे चारों उसके सवालों का जवाब देते हैं जैसे—

तुम कहा गये? बाहर गये।

कितने गये? पाच गये।

इस अवसर पर जो मृत्यु गीत गाये जाते हैं उनमें तोलादे और रूपादे[२] की रचनाए प्रमुख हैं।

वास्तव में शखोद्धार की क्रिया का सम्बन्ध सीधा नाथों से है। कैवल्यावस्था में चिर समाधि लेने वाले योगियों की कपाल मोक्ष की क्रिया के प्रतीक रूप में सम्भवत इस पद्धति का विकास हुआ हो। राजस्थान के नाथ समाज में शख ढाल या शखोद्धार सर्वत्र प्रचलित है। मसानिया जोगियों में बारहवें दिन यह क्रिया होती है। नाथों में किसी की मृत्यु होने पर जब शखोद्धार की क्रिया होती है उसी समय किसी को चेला बनाया जाता है।

मेघवालों के शखोद्धार के सम्बन्ध में रामदेव जी की पादुकाओं के पूजन को लेकर भी कुछ मुद्दों को यहा उठाना श्रेयस्कर रहेगा। नामसिद्धों की भी पादुकाओं की ही पूजा की जाती है। जोधपुर के पूर्व शासक महाराजा मानसिंह ने अपने गुरु आयस देवनाथ की पादुकाओं को अपने महल में स्थापित कर पूजा अर्चना का जो क्रम चालू किया था वह अब तक चल रहा है। दूसरे रामदेव जी अपने परचों या चमत्कारों के कारण ही अधिक प्रसिद्ध है। उनके महाराणा कुम्भा महाराजा विजयसिंह हरजी भाटी और रूपादे मल्लीनाथ को दिखाये चमत्कार प्रसिद्ध हैं। बाबा रामदेव और मल्लीनाथ के परस्पर सपर्क और निष्ठा की चर्चा हमने पहले की है। रूपादे की थाली में बाग लगाने का चमत्कार उन्हीं की कृपा का परिणाम है। बाबा रामदेव पर लिखने वाले प्रसिद्ध विद्वान इस दिशा में नाथ परम्परा के सदर्भ में यदि विचार करते तो कुछ और तथ्य सामने आ सकते थे। अस्तु।

अब तक राजस्थान के नाथ और उनसे जुडे समाज के विभिन्न वर्गों का जो विवरण प्रस्तुत किया गया है निश्चय ही उस आधार पर कुछ अनुमान रूपादे मल्लीनाथ के सदर्भ में ही प्रस्तुत किए जा सकते हैं। ब्राह्मण धर्म और स्मृति व्यवस्था का समाज के बहुसख्यक वर्ग के द्वारा सतत विरोध होते रहने के कारण वह क्षीण हो गई और तद् विरोधी व्यक्ति सगठित होते गये जो गोरक्षनाथ के झण्डे के नीचे आते गये। दूसरे शब्दों में नाथों का प्रभाव बढता गया शासक और शासित उससे जुडते गये। इसी आलोक में पिछले पृष्ठों में की गई चर्चा रूपादे मल्लीनाथ को किस प्रकार नाथान्वयी सिद्ध करती है उसके कुछ आधार स्पष्ट दिखायी देते हैं।

नाथों में अनिवार्यत कान चीर कर मुद्रा धारण करने तथा सेली सिंगी धारण करने का पालन मल्लीनाथ ने भी किया है। यही नहीं मल्लीनाथ को उगमसिंह भाटी के पथ

में दीक्षित करने की जो विधि है वह भी पूर्णत नाथों के द्वारा मान्य और उनके यहा की परपरा से सुरक्षित पद्धति है।

नाथों के बहुविध आयामों यथा जोगी कालबलिया औघड सामी इत्यादि के आचरण और व्यवहार भी नाथानुकूल ही हैं। इनमें जिस हिंगलाज माता की उपासना होती है वह भी शक्ति का आद्य अवतरित स्वरूप है और जिन जिन नाथ मतों के विभिन्न घटकों में इसे स्वीकार किया जाता है उनमें रूपादे का भी महत्वपूर्ण स्थान है। जैसे पहले सकेत किया है कि दशनामी सम्प्रदाय की गासाई जाति में द्वितीया के व्रत के उद्यापन पर रूपादे की बेल गायी जाती है। इसी प्रकार मेघवालों के "शख ढाल सस्कार में भी रूपादे की रचनाए गायी जाती हैं।

तीसरे रूपादे के गुरु उगमसी भाटी भी योगियों के चमत्कार से अछूते नही रहे हैं। बाल्यावस्था में रूपादे को जब वे आशीर्वाद देते हैं तो उसके पानी के घडे में पानी यथावत् बना रहता है।[२१] इसी प्रकार मालोजी की फौज जब "दूधवा" आती है तो रूपादे भी अपनी चमत्कार शक्ति से सारी फौज के खाने पीने की व्यवस्था कर देती है। पहली बार तोलादे के साथ जब रूपादे मल्लीनाथ का मिलना होता है तोलादे खारे पानी के कुए को मीठा बनाती है तो रूपादे अपनी शक्ति से वर्षा कर वहा की जमीन को ही मीठा बनाती है।

चौथे रूपादे मल्लीनाथ तोलादे ये तीनों ही व्यक्तित्व बाबा रामदेव मे जुडे हुए हैं। प्रसिद्ध है बाबा रामदेव भी यौगिक चमत्कारी शक्तियों के लिये ही अधिक जाने माने गये हैं और नाथों की तरह उनकी भी पादुकाओं का पूजन किया जाता है मूर्ति का नही।

रूपादे मल्लीनाथ रामदेव और तोलादे इन चारो को जोधपुर के महाराजा विजयसिह के आश्रित मुशी माधवराम ने शक्ति भक्ति प्रकाश के प्रारभ में ही स्मरण किया है।[२२] अर्थात् निश्चय ही इन चारों की दृष्टि एक ही रही है किन्तु इन्हें केवल शाक्त मानना बडी भूल होगी क्योंकि शक्ति शिव से जुडी हुई है और यही कारण है कि सुदीर्घ शाक्त परम्परा भी पाशुपतों लकुलीशों के साथ नाथो से जुड गयी और इस परम्परा में सम्भवत मूलत शाक्त होने के कारण योग की अपेक्षा कालान्तर में भक्ति का उदय हुआ।

बाबा रामदेव और मल्लीनाथ दोनों के लिये यह बात प्रसिद्ध है कि वे पार" हो गये। हिन्दू तथा मुसलमान दोनों ही उनके भक्त हो गये। इस सिलसिले में मुझे इतना ही कहना है कि इसका आधारभूत कारण नाथों की जीवन पद्धति न हिन्दू न मुसलमान ही है। नाथों के जफर योगी या रावल पीरों की शाखा की काफी चर्चा पडित द्विवेदी और डा नागेन्द्रनाथ उपाध्याय ने की है। आलोच्य काल में केवल नाथ ही ऐसी साधना पद्धति थी जिसमें समाज के किसी भी वर्ग का कोई भी व्यक्ति जा

सकता था। नाथ सिद्धांतों में नकारे गये स्त्री के पथ प्रवेश को लोगों ने नहीं माना यह बात राजस्थान के नाथ समाज के अध्ययन से प्रकट होती है। यहा स्त्री भी हिंगलाज या जोगमाया के दर्शन कर विरक्त होती थी और पुरुष वेष धारण कर "नाथपद" के लिए अपने जीवन को समर्पित कर सकती थी। बहुत सम्भव है इस दिशा में प्रथम "पदन्यास रूपादे का रहा हो। मेरी राय में रूपादे का पथ में प्रवेश और मल्लीनाथ का पीर रूप में पूजा जाना दोनों ही बातें उनके नाथानुयायी होने का अनुमान करने में सहायक सिद्ध होंगी।

मल्लीनाथ के नाथ परम्परा से सबद्ध होने के विषय में उनके जन्म के पूर्व सलखा जी को योगी का आशीर्वाद और मल्लीनाथ को भगवे कपडे पहनाने की मुहता नैणसी की बात आपको याद होगी। मल्लीनाथ के वशजों में अभी तक इस मूल परम्परा का अनिवार्यत पालन किया जाता है। रावल की मृत्यु पर उनके ढोली को बारह दिन तक भगवे वस्त्र पहनने पडते हैं रावल वश के प्रतिनिधि ठाकुर नाहरसिंह जी ने इस प्रकार की एक बात अपने साक्षात्कार में कही है। नाथों में भगवे वस्त्र पहनना कितना प्रचलित रहा है यह कहने की भी *आवश्यकता नहीं है। यदि मल्लीनाथ नाथानुग"* नहीं होते तो इस प्रकार की परम्परा का पालन ही क्यों किया जाता?

"रूपादे" का जो मेघवालों कालबेलियों और कामडों में जो पूज्य भाव है उसके कारण की भी कुछ इसी प्रकार से मीमासा की जा सकती है। नाथों में नागनाथी सम्प्रदाय का प्रभाव जिन जिन जातियों पर पडा वे भी नाथों से जुड गईं और उनमें नाग पूजा का महत्व बढा। मेघवालों की नाग पूजा पर यदि इस दृष्टि से विचार करें तो सहज ही उनके शाक्त शिव होने का आधार प्राप्त हो जाता है। पीतल के सांपों को भुजा और मस्तक पर बाधने वाले कालबेलिये भी नाथानुयायी ही तो हैं।

इस सबध में कर्नल वाल्टेयर का एक उद्धरण यहा प्रस्तुत किया जाना चाहिये—

The Guru or Priest of the Famous Mallinath from whom Malani is named, was a Gosain called Garibnath none of his disciples are allowed to marry but if any of them is caught interdining with a woman, he is turned out of the temple and not allowed to enter it

अपने शिष्यों को स्त्री से दूर रखने वाले गरीबनाथ की यदि मल्लीनाथ के गुरु के रूप में प्रसिद्धि हो सकती है तो फिर मल्लीनाथ के नाथ होने में सशय ही क्या रह जाता है। जोधपुर के महामदिर के भित्ति चित्रों में नाथानुयायी मल्लीनाथ का चित्र भी उनकी परम्परा का प्रमाण है।

नाथों के नियमों की कठोरता और घोर तपस्या और योग के रास्ते पर चलना कितना कठिन रहा होगा इसकी कल्पना की जा सकती है। सम्भवत इसी कारण मूल नियमों से विच्युत होते गये लोगों की अलग अलग जीवन पद्धतिया होती गईं। खास

कर मारवाड में अधिकाश नाथानुयायी गृहस्थ धर्म का पालन करते रहे। उनमें निराकार शब्द रूप शिवत्व प्राप्त करने की सामर्थ्य नहीं थी दूसरी ओर वर्ण व्यवस्था उन्हें स्वीकार नहीं सकती थी। इसलिये नाथों की छत्रछाया में उनकी अपनी अलग सस्कृति का निर्माण होता गया। परन्तु विघटन के इस दौर का प्रारभ होते होते नाथों के ज्ञानाश्रयत्व और कठिन योग मार्ग से जुडे रहते हुए उनमें निर्गुण भक्ति की मन्दाकिनी का उदय उगमसी रूपादे और मल्लीनाथ के प्रयासों से किस प्रकार हुआ इसकी चर्चा से पूर्व नाथा ` की जीवन पद्धति और उसके सामान्य जन सवेद्य न होने से हुए परिणामों पर विचार करना होगा क्योंकि उसी ने रूपादे मल्लीनाथ की निराकार भक्ति का मार्ग प्रशस्त किया है।

४ नाथ पद्धति—

नाथ साहित्य में नाथ शब्द को लेकर काफी ऊहापोह किया गया है। "ना का अर्थ है अनादि तत्व और "थ का अर्थ है भुवनत्रय का स्थापित होना। इसलिए नाथ शब्द का अर्थ भी स्पष्ट है वह अनादि तत्व जो त्रिभुवनों की स्थापना का मूल कारण है। कोई नाथ को मोक्ष ज्ञान में दक्ष ब्रह्म मानकर "थ" का अर्थ अज्ञान नाशक बताते हैं। गोरक्षनाथ ने सृष्टि स्थिति और लय की प्रक्रिया के उद्बोधन में कहा है कि शक्ति सर्जन करती है शिव उसक पालक हैं काल उसका सहारक है और नाथ मोक्ष देने वाला है।[२४]

नाथ के तीन रूप माने जाते हैं निराकार ज्योतिरूप आदिगुरु के रूप में साकार रूप और प्राप्य देवता के रूप में अद्वैत परिवर्ती नाथ। निराकार ध्येय नाथ और साकार उपास्य नाथ हैं। सक्षेप में यह कहा जा सकता है कि नाथ परमतत्व या परात्पर है। योग साधना कर नाथ तत्व प्राप्त करने के लिये प्रयत्नशील व्यक्ति भी नाथ ही कहलाता है और इसीलिये नाथ शब्द का प्रवर्तन सम्प्रदाय के रूप में भी हुआ। गोरक्षनाथ के अनुयायी होने से इन्हें गोरक्षनाथी भी कहते हैं। कान चीरा हुआ होने से "कनफडा का प्रयोग भी बहुतायत से देखा गया है। इसके अलावा एक शब्द और है दर्शनी। दर्शन का अर्थ है कुण्डल और जो दर्शन धारण करता है वह दर्शनी है।[२५]

जैसे पहले विचार किया गया है ब्राह्मण धर्म और वेद विरोधी व्यक्तियों ने इस पथ में धीरे धीरे प्रवेश लेकर स्वय को सगठित किया उनका आश्रम और वर्ण व्यवस्था के प्रति कोई रुझान नहीं था और न ही उन्हें आश्रम वर्ण में स्वीकारा गया इसलिए उन्हें अतिवर्णाश्रमी या अत्याश्रमी की सज्ञा शास्त्रीय ग्रन्थों में दी हुई है। इसी को नाथों की परिभाषा में पक्षपातराहित्य या निरभिमानित्व कहते हैं।[२६] उनकी धारणा है कि समाज के सभी लोग समान हैं और उन्हें किसी भी आधार पर पक्षपात जाति वर्ण आश्रम का नहीं रखना चाहिये। इसी कारण नाथों में मुसलमानों का प्रवेश होता गया सही अर्थों में उन्होंने राष्ट्रीय समाज की कल्पना को साकार करने का प्रयत्न

किया।

नाथ साधना प्रधानतः ज्ञानाश्रयी शाखा है और योग साधना के द्वारा परतत्व नाथ का अनुभव करना उसका साक्षात्कार करना यही उनका मोक्ष है। योगमार्ग में प्रवृत्त करने से पूर्व अथवा होने से पूर्व साधक को कौल साधना करनी पड़ती है कुल से अकुल शक्ति से शिवत्व प्राप्त करना। एक सफल कौल ही योगी बनता है। चूंकि योग साधना के द्वारा ही "परात्पर" का साक्षात्कार करना है अतः शरीरसिद्धि अथवा कायासिद्धि का नाथों में बड़ा ही महत्व है और कायासिद्धि के लिए आवश्यक है षडंगयोग की साधना आसन प्राणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यान और समाधि। परन्तु यह कायासिद्धि नाथों का गौण लक्ष्य है।[२७]

कायासिद्धि के मूल में नाथों की पिण्ड और ब्रह्माण्ड के एकत्व की मान्यता है।[२८] यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे अर्थात् जैसा पिण्ड शरीर में है वैसा ही सब कुछ-दल लोक गगनशिखर ब्रह्माण्ड में भी है। इस योग साधना को हठयोग कहते हैं। पायु और उपस्थ के बीच कुण्डलिनी को जागृत कर षट्चक्रभेदन कर साधक प्रथम सहस्रार चक्र तक पहुंचता है। द्वितीय सहस्रार चक्र तक गोरखनाथ जैसा कोई विरला ही पहुंच पाता है। इस समाधि राजयोग उन्मनी अमरत्व या शून्य कहा जाता है।[२९]

यह साधना इतनी कठिन है इसीलिये सम्भवतः इस मार्ग में गुरु की सहायता के बिना कुछ भी सम्भव नहीं है और जो आश्रम या वर्ण में विश्वास करता है ऐसे व्यक्ति को गुरु भी नही बनाया जा सकता इसके लिये गुरु का "अत्याश्रमी" होना आवश्यक है। गुरु ही अवधूत है और इसका परमपुरुषार्थ ही मुक्ति है। अवधूत वह है जो परात्पर सगुण निर्गुण से विलक्षण तत्व का साक्षात्कार कर लेता है।[३०] इसे ही समतत्व या द्वैताद्वैत विलक्षणतत्व माना जाता है। नाथ इसीलिये जोर देकर द्वैताद्वैत विलक्षण समतत्त्ववाद का समर्थन करते हैं। यही कारण है कि जो इस तत्व को नहीं जानते उन्हें भारवाही गधा कहा गया है। ऐसा गुरु मिलने पर ही व्यक्ति सुगुरा हो जाता है गुरु न मिले तो अन्त तक वह निगुरा ही बना रहता है।

आश्रम वर्ण व्यवस्था के विरोधी होने से स्मार्त पद्धति या तदनुसार आचार विचार के लिये नाथ परम्परा में कोई स्थान नहीं है इसलिए वह स्मार्त विरोधी है। द्वैत और अद्वैत मतों को ये सर्वथा दोषमुक्त नहीं मानते हैं कर्म त्याग और गार्हस्थ्य त्याग आवश्यक समझते हैं शिव और शक्ति में कोई भेद नहीं मानते और इनकी दृढ धारणा है मुक्ति मिल सकती है तो नाथ ही उसे दे सकते हैं गुरु या अवधूत उसका सहायक या मार्गदर्शक मात्र हो सकता है। प. द्विवेदी के शब्दों में—

नाथ ही एकमात्र शुद्ध आत्मा है बाकी सब बद्धजीव हैं शिव भी विष्णु भी ब्रह्मा भी। न तो ये लोग द्वैतवादियों के क्रियाब्रह्म में विश्वास करते हैं और न अद्वैतवादियों के निष्क्रिय ब्रह्म में। द्वैतवादियों के स्थान हैं कैलास वैकुण्ठ आदि। अद्वैतवादियों का

माया सबल ब्रह्मस्थान है योगियों का निर्गुण स्थान है परन्तु नथ मुक्तिरहित परमसिद्धान्तवादी अवधूत लोग सगुण और निर्गुण से परे उभयातीत स्थान को ही मानते हैं क्योंकि नाथ निर्गुण और सगुण दोनों से अतीत परात्पर है।"[३१]

सासारिक मायाजाल में फसे शिष्य को इस मार्ग में दीक्षित कर परात्पर प्राप्ति के लिये प्रेरित करने वाला गुरु अवधू या अवधूत कहलाता है। सर्वसामान्यत ससार के सघर्ष से अतीत मानापमान रहित योगी को अवधू या अवधूत कहते हैं। तन्त्र ग्रन्थो में चार प्रकार के अवधूतों की चर्चा की गयी है ब्रह्मावधूत शैवाधूत भक्तावधूत और हसावधूत। हसावधूतों में जो पूर्ण होते हैं वे परमहस कहलाते हैं और जो अपूर्ण होते हैं उन्हें परिव्राजक कहा जाता है।[३२]

योगी के लिये चिह्नमुद्रा नाद विभूति और आदेश परमावश्यक माने गये हैं। मुद्रा मुद का अर्थ आनन्द और राति ददाति जो देता है परमानन्द दायक है इसलिये उसे जीवात्मा परमात्मा की एकता का परिचायक स्वीकार किया गया है। नाद शृगी (सिंगी) है। आत्मा जीवात्मा और परमात्मा को सभूति (सम्मिलन) को आदेश कहा जाता है। इस प्रकार यद्यपि योगी के लिये इनका धारण आध्यात्मिक प्रतिरूप के रूप में आवश्यक है तथापि अवधूत इससे मुक्त है क्योंकि वह कभी त्यागी बन सकता है तो कभी भोगी कभी आचार का पालन कर भी लेगा तो कभी सर्वसग परित्याग की अवस्था में रहेगा। उसके इस रूप का वर्णन वैराग्यशतक में बहुत सुन्दर ढग से किया गया है—

क्वचिद् भूमौ शय्या क्वचिदपि च पर्यंकशयन।
क्वचिद् कथाधारी क्वचिदपि च माल्याबरधर॥
क्वचिच्छाकाहारी क्वचिदपि च दिव्यौदनरुचि।
मुनि शान्तारम्भो गणयति न दुःख न च सुखम्॥[३३]

अवधूत या गुरु अपने शिष्य को इसी वर्तमान शरीर में परात्पर नाथ के दर्शन में सहायता करता है इसलिये पूर्व में सकेतित की गयी कायसिद्धि का महत्व है। इस सिलसिले में नाथों का एक सिद्धान्त है जिसे पिण्डब्रह्माण्डवाद कहा जाता है। परन्तु इसमें हमें स्मरण रखना चाहिये कि पिण्ड ब्रह्माण्ड की समता की अनुभूति में केवल काया ही साधन नही मानसिक साधन भी उससे जुडे हुए हैं। अदृष्ट परमतत्व का दर्शन और उसी में चित्त का आधारण नाथयोग का लक्ष्य है। योग से ही शरीर को शुद्ध रखना शरीर की रक्षा करना और उसी से परम पद का गगनशिखर में साक्षात्कार करना योगी का लक्ष्य होता है। पिण्ड और ब्रह्माण्ड की समता का अनुभव योगी ही कर सकता है सामान्य जन एक ही तत्व की समान रूप में अभिव्यक्ति का नही जान पाता। इस साधना का प्रारभ पिण्ड से ही होता है जिसे हठयोग कहा गया है।[३४]

समस्त विश्व में व्याप्त महाकुण्डलिनी नामक शक्ति का प्रत्येक व्यक्ति में जो सुप्त स्वरूप है उसे कुण्डलिनी कहा गया है। प्रत्येक जीव प्राण और कुण्डलिनी के साथ मातृ गर्भ

में प्रवेश करता है तथा जाग्रत स्वप्न और सुषुप्ति तीनों ही अवस्था में यह शक्ति सुप्तावस्था में ही रहती है। मेरुदण्ड का अग्र भाग जो पायु और उपस्थ के बीच में लगता है वहा त्रिकोण में अवस्थित स्वयभू लिंग है जिसे साढे तीन वृत्तों में लपेट कर कुण्डलिनी अवस्थित रहती है। उसके ऊपर चार दलों का कमल है जिसे मूलाधार चक्र कहा जाता है। नाभि के ऊपर छह दलों का स्वाधिष्ठान चक्र होता है उसके ऊपर मणिपूर चक्र तथा हृदय के ऊपर अनाहत चक्र होता है। हृदय के ऊपर कण्ठ के पास विशुद्ध चक्र के सोलह दल होते हैं भ्रूमध्य स्थित आज्ञा चक्र में केवल दो ही दल होते हैं। इन ६ चक्रों का भेदन करने के पश्चात् मस्तक मे अवस्थित शून्य चक्र में जीवात्मा को पहुचाना ही योगी का परमलक्ष्य होता है। इस चक्र को सहस्रार दल चक्र कहते हैं। शून्य चक्र ही गगन मडल है।

शरीर में मेरुदण्ड के बायें और दाहिने ओर इडा और पिंगला नाडियों के बीच में सुषुम्ना नाम की नाडी है। इस सुषुम्ना से होकर ही कुण्डलिनी ऊर्ध्व की ओर स्फुरित होती है। कुण्डलिनी साधारण मनुष्यों में अधोमुखी रहती है इसलिए वह काम क्रोधादि के व्यामोह में पडा रहता है। उसका उद्बुद्ध होकर ऊर्ध्व स्फुरण में जो स्फोट होता है उसे नाद कहते हैं। नाद से प्रकाश और प्रकाश का ही अभिव्यक्त रूप महाबिन्दु है जो इच्छा ज्ञान और क्रिया रूप में प्रकाशित होता है। कुण्डलिनी उद्बोधन के लिये आवश्यक यौगिक क्रियाओं में सिद्धि प्राप्त करने के पश्चात् साधक शरीर में तरह तरह की ध्वनि सुनता है। परन्तु जैसे जैसे उसका मन स्थिर होता है और विशुद्ध होता जाता है उसे ये आवाजें सुनाई नहीं देती वह सुनता है उपाधि रहित स्फोट या शब्दतत्व। इस अवस्था में ब्रह्म ही ब्रह्म का प्रकाशक होता है। यह शब्द मूलाधार से उठकर शून्य चक्र में लीन होता है यही सहज समाधि है। इस प्रक्रिया में हठयोग से मनुष्य शरीर के शुद्धीकरण का कार्य सम्पन्न होता है साथ में आवश्यक होती है मानसिक एकाग्रता और विशुद्धता और इसीलिये नाथों में नैतिक आचरण पर विशेष बल दिया गया है।[३५]

व्यक्ति को इस मार्ग में अनुयायी बनने के लिये कडी से कडी परीक्षाओं का सामना करना पडता है। नाथ गुरु में ३६ व शिष्य में बतीस गुण बताये गये हैं। इन बतीस गुणों में से ४४ गुणों की आठ प्रकार से परीक्षाए ली जाती हैं। उनका विवरण इस प्रकार है–

१ ज्ञान परीक्षा निरालम्ब निर्मम निवासी निशब्द

२ विवेक परीक्षा निर्मोह निर्बन्ध निशक निर्विषय

३ परीक्षावमेक सर्वांगी सावधान सत्, सारग्राही

४ निरालम्ब परीक्षा निष्प्रपच निस्तरग निर्द्वन्द्व

५ सन्तोष परीक्षा अयाचिक अग्राह्यक अमान अस्थिर

६ शील परीक्षा शुचि सयमी शात श्रोता

७ सहज परीक्षा सहज शीतल सुखद स्वभाव

८ शून्य परीक्षा लय लक्ष्य ध्यान समाधि।[३६]

यदि गुणों की परीक्षाए और उनके स्वरूप पर विचार करें तो स्वय पर नियन्त्रण कर ससार से मुह मोडकर ही कोई व्यक्ति इस मार्ग पर चल सकता है। शिष्य को स्वय पर ही अवलम्बित रहना चाहिये और उसके लिये यह भी आवश्यक है कि ममता और मोह को पास भी न फटकने दें वह निष्पक्ष रहे निर्द्वन्द्व रहे किसी से कुछ भी पाने की आशा न रखें और इन सब में पहले चाहिये शुचिता मानसिक और शारीरिक भी। कुण्डलिनी की चर्चा में यह बात कह आये हैं कि सामान्य व्यक्तियों की कुण्डलिनी अधोमुख रहती है और इसी कारण से वह काम-क्रोधादि के पाश में जकडा हुआ होता है। उसे उद्बुद्ध कर ऊर्ध्वमुख की ओर स्फुरित करना योगी का पहला लक्ष्य होता है और इसीलिये व्यक्ति के लिये निर्द्वन्द्व निर्विषय और निरासक्त रहना पहली शर्त है। यह काम "निगुरा नही कर सकता वही कर सकता है जो "सगुरा होता है अर्थात् जिसे योग्य गुरु का निर्देशन मिलता है। इसलिए मार्ग में दीक्षा या गुरु की कृपा प्रथम सोपान है उसके बिना आगे किंचित् भी गति नहीं हो सकती है।

सद्गुरु अवधूत का ज्ञान पूर्ण और सत्यरूप होता है। शिष्य का बलशाली और तीव्र गतिमान मन गुरु के बाण से ही आहत होकर स्थिर होता है गुरु ही उसका ज्ञानस्रोत है ज्ञानदाता है उसके बिना शिष्य को विशुद्ध ज्ञान की प्राप्ति होना असम्भव है। शिष्य के लक्ष्य और गुरु की भूमिका के विषय में डा उपाध्याय ने लिखा है –

योग साधना में निष्णात होने पर जब सर्वतोभावेन सम्यक् योग सिद्ध हो जाता है गुरु अपनी कृपा से निर्वाण समाधि की रक्षा करता है। यह समाधि स्वानुभूतिगम्य सत्य है। गुरु इस सत्य का पूर्ण साक्षात्कार करता है और दूसरों की इस प्रकार की अनुभूति की भी उसी को प्रतीति होती है। त्रिगुणात्मिका माया को जो विभिन्न प्रकार के रूपों को धारण कर जीवों के चित्त को विमूढ कर देती है केवल गुरु ही दिखाने में उसके रहस्य को समझाने में सत्य और माया का विवेक कराने में समर्थ हो सकता है। स्वानुभूतिगम्य सत्य के वाचक शब्द का केवल गुरु ही प्रत्यक्ष करा सकते हैं। यह गुरुतत्व ही नाथ तत्व है जो मायाविमूढ सुषुप्त जगत के लिये नित्य जाग्रत रहता है क्योंकि बिना उनकी कृपा के बिना ब्रह्म साक्षात्कार या परमपद की प्राप्ति असम्भव है।[३७]

गोरक्षनाथ ने मनुष्य मन की चार अवस्थाए बतायी हैं गुरु उदासीनता आशा और कामिनी। उनका कहना है कि जो व्यक्ति अपना उद्धार करना चाहता है वह ससार से उदासीन होकर गुरु की शरण में आ जाए अन्यथा आशा और कामिनी के आश्रित होकर अपना विनाश कर लें। यही कारण है कि नाथानुयायी प्राय कामिनी का विरोध करते दिखाई देते हैं। व नारी को नरक नागिन साप आदि कहकर उसकी निन्दा करते

है और उसका सर्वथा निषेध करते हैं।

गोरक्षनाथ ने भी नारी के कामिनीरूप का सर्वथा त्याग करने की बात बार बार कही है। कथंचित् भी चित्त का रुझान कामिनी की ओर नही होना चाहिये स्त्री सगी व्यक्ति की स्थिति पौर्णिमा के चन्द्र की तरह क्षीयमाण रहती है इस अवस्था में कदापि योग सिद्धि सम्भव नहीं है। नारी योग के अनुकूल न होने से ही उसे गुणहीन माना गया है। नारी को नागिन कहा गया है। वह बाघिन है जो दिन में सोती है और रात में पुरुष का भक्षण करती है।नारी अनेक रूप धारण कर ससार मात्र को अपने वश में कर लेती है। मैथुन से शरीर को जीर्ण कर नदी किनारे खडे पेड की तरह बना देती है जो स्वय किसी भी क्षण गिर सकता है।[१८]

गोरक्ष की तरह अन्य नाथों ने भी नारी के कामिनी रूप की तीव्र भर्त्सना की है। वह जीवन और बिन्दु का शोषण करने वाली और जीवन मार्ग में अचानक आक्रमण कर व्यक्ति के स्व धन को बरबस लूट लेने वाली है। नारी को अग्निकुण्ड और पुरुष को घृत कुण्ड कहा गया है।

परन्तु गोरक्ष में सम्पूर्ण नारी जाति के लिये उपेक्षा या तिरस्कार का भाव नहीं है। वे उसके कल्याणमय मातृस्वरूप या शक्तिरूपत्व के प्रशसक हैं। उनके हृदय में "जननी"के प्रति अपार श्रद्धा और भक्ति है। वे मनुष्य धिक्कार के योग्य हैं जिन्होंने मातृ रूपा शक्ति को मात्र भोग का विषय बनाया है जिसने जन्म दिया है वह आदरणीया है। गोरक्ष द्वारा कामिनी रूप में स्त्री की निन्दा और मातृरूप में पूजा के विषय में एक कहानी प्रसिद्ध है। नव नाथों की परीक्षा लेते समय पार्वती ने गोरख को अपना कामिनी रूप ही दिखाया था परन्तु उन्होंने उसे माता के रूप में स्वीकार कर अपनी दृढता का प्रदर्शन किया था इस दृष्टि से योगियों के द्वारा प्रयुक्त किया जाने वाला माई शब्द ध्यान देन योग्य है।[१९]

इस प्रकार जब साधक स्त्री के कामिनी रूप से सर्वथा विमुख होकर ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए स्वय में उन गुणों का विकास करने के लिए गुरु कृपा प्राप्त कर सुगरा हो जाता है तब उसकी साधना का क्रम प्रारभ होता है। ससार से निर्मोही निष्पक्ष और निश्शक होने से ससार के आडम्बर या बाह्याचार उसके लिये कुछ भी महत्व नहीं रखते। इसीलिये नाथयोगियों ने बाह्याचार का भी डटकर विरोध किया है।

५ नाथ और सन्त मान्यताए–

निश्चय ही नाथों के प्रसग में भक्ति की चर्चा आपको सर्वथा अप्रासगिक और अनुपयोगी लगेगी फिर भी विशेषकर रूपादे की रचनाओं के अध्ययन के लिये वह सर्वथा अनुपयुक्त और उपक्षणीय प्रतीत नहीं होगी। पिछले पृष्ठों में नाथों का सामान्य परिचय और उनकी साधना के बारे में जिन तथ्यों की चर्चा की गयी है उससे यह स्पष्ट है कि एक नाथयोगी या साधक अपने शरीर में अवस्थित शक्ति को जागृत कर गगनशिखर

या शून्यचक्र तक पहुचकर परब्रह्म नादरूप शिव का सत्य का साक्षात्कार करता है। शरीर शुद्धि और मानसिक शुद्धि के अनेक प्रकार के कठोर नियमों का पालन करते हुए व विभिन्न परीक्षाओं में उत्तीर्ण होकर उस गुरुकृपा प्राप्त करनी होती है और गुरु कृपा मिलना/होना कोई सामान्य बात तो नही है। अर्थात् वह साधक आधिभौतिक साधनों के सहारे से योगयुक्त ज्ञान के बल पर आध्यात्मिक उन्नति के मार्ग पर अग्रसर होता है। यद्यपि इस सारी प्रक्रिया का आधार शरीर और तन्निहित चक्रों नाडियों का ज्ञान और सतत साधना है फिर भी मन की शुचिता उससे जुडी हुई है। इन्द्रियों का या मनोवृत्तियों का बाहरी विषयों या पदार्थों से परावर्तन होना आवश्यक है क्योंकि साधक जब तक बाह्यनिवृत्त होकर एकाग्र में मन का आधान नही करता है तब तक उसकी साधना का प्रारभ ही नही होता और साधना का प्रारभ कराने के लिये गुरु ही समर्थ है वह ही उसे सत्य की प्रतीति कराता है। इसलिये जैसा नाथ साहित्य के विवेचकों ने विवेचन किया है कि यदि नाथ साधक में भक्ति तत्व पर विचार करें तो यह बात निश्चित रूप से प्रमाणित होती है कि साधक की भक्ति या निष्ठा केवल गुरु तक ही सीमित होती है। नाथ कृपा से गुरु की प्राप्ति होती है और गुरु कृपा से नाथ पद की प्राप्ति होती है इसलिये गुरु और नाथ साधक के लिये अन्योन्य सबद्ध हैं।

यह बात सत्य है कि एक भक्त की या सन्त की स्थिति नाथ साधक से सर्वथा भिन्न होती है क्योंकि भक्ति का सीधा सम्बन्ध हृदय से है न कि ज्ञान से। भक्त ससार से विरक्त होकर भगवान् को समर्पित हो जाता है फिर उसका स्वय का कुछ भी शेष नही रहता है उसका धन होता है भगवन्नाम सकीर्तन या नाम स्मरण अथवा श्वास निश्वास के साथ चलने वाला हरिनाम का जाप। इस सस्मरण या सस्मृति को ही कभी कभी नाथ साहित्य में सुरति" कहा गया है। सुरति से जुडा हुआ शब्द है निरति। नाथ विवेचना के मूर्धन्य विद्वान् प हजारी प्रसाद द्विवेदी ने सुरति निरति की एक अलग ही प्रकार से व्याख्या की है। मनुष्य की बाह्य प्रवृत्तियों से निवृत्ति निरति है और उसकी अन्तर्मुखी वृत्ति सुरति है। अस्तु।[४०]

सुरति को प्राय स्मृति से उत्पन्न माना गया है। किन्तु नाथ साहित्य में उसे श्रुति और स्मृति दोनों ही रूपों में प्रयुक्त किया गया है श्रुति में वेद नही केवल प्रातिभ ज्ञान मात्र का ग्रहण किया जाता है। स्मृति से उत्पन्न सुरति का सीधा अर्थ स्मरण ही है।डा उपाध्याय ने लिखा है कि –गोरखमच्छिन्द्र बोध में सुरति निरति को ही साधनात्मक जीवन का सब कुछ माना गया है। वस्तुत सुरति को भावात्मक और निरति को अभावात्मक कहा जा सकता है। आचार्य क्षितिमोहन सेन का कहना है कि निरति सुरति में लीन हो अर्थात् बाह्य प्रवृत्तिया अन्तप्रवृत्तियों में लीन हों तो वही जीव और ब्रह्म का अभेद है। डा बडथ्वाल ने सुरति को –(१) स्मृति (२) सुरत और (३)सु रत तीन अर्थों में प्रयुक्त माना है। इसी सुरति या स्मरण की चरमसीमा अजपाजाप है। निरति को वे निरतिशय रति मानते हैं। अर्थात् एक मत के अनुसार निरति वैराग्य है और पूर्ण विकसित ब्रह्मानन्द

के गुणों की परीक्षा कर उसे प्रेरित कर सत्य का साक्षात्कार कराने वाले गुरुओं के अभाव को महसूस किया जाने लगा सच्चे गुरु की खोज या प्राप्ति के लिये जब नाथकृपा आवश्यक हुई तो इसका सीधा अर्थ होता है सच्चे योगी गुरु का मिलना भी दुष्प्राप्य होने लगा।

यों नाथों के अनुयायी बहुत होते गये बहुत दीक्षित होते रहे पर मैंने जिसके लिये नैष्ठिक शब्द का प्रयोग किया है ऐसे अनुयायी कितने हो पाये और उनमें से कितने गुरु होकर पथ प्रदर्शन करने की योग्यता रखते रहे होंगे यह अवश्य ही विचार करने की बात है। हम पिछले पन्नों में यह देख चुके हैं कि नाथ राजस्थान के शासकों के गुरु थे और निश्चय ही राजा की प्रजा भी उस परम्परा की अनुयायी बनती रही। बिना जाति पाति विचार के प्रवेश होते रहने से कभी ऐसा भी देखा गया है कि अभी १५० २०० वर्ष पूर्व मारवाड के शासक ने जब आयस देवनाथ को गुरु बनाकर उन्हें महामंदिर में स्थापित किया तब लोगों में नाथ बनने की एक होड सी लगी। दीक्षा समारोह के लिये दल बादल" डेरा खडा किया गया। नाथ तत्व प्राप्त हो न हो राज्याश्रय प्राप्त करने का एक रास्ता खुल गया। मनुष्य की प्रवृत्तियों के सनातन होने के बारे में मुझे कुछ कहने की जरूरत नहीं। आलोच्य काल में भी अवश्य ही इस प्रकार की प्रवृत्तियों ने सामान्य जन को नाथ पथ में दीक्षित होने के लिये अवश्य ही प्रेरित किया होगा।

नाथों के स्मार्त और वेद विरोधी होने व अत्याश्रमी और अतिवर्णी होने से मान्यता प्राप्त चार वर्णों के अलावा प्राय सभी के लिये उसमें प्रवेश खुला था और समाजशास्त्र के अध्ययन से सामने आने वाली बात भी स्पष्ट है कि सभी मनुष्यों का बौद्धिक स्तर समान नहीं हो सकता रुचिया अलग होंगी विचार करने का स्तर अलग अलग होगा और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि वे जिस काल में रहते आये हैं तत्कालीन समाज की उनसे रही समयानुकूल अपेक्षाए भी भिन्न होंगी।

इस पृष्ठभूमि पर खडे होकर यदि हम मारवाड के नाथ समाज का अध्ययन करें तो आपको सहज ही प्रतीत होगा कि नाथ परम्परा में दीक्षित होते गये अधिकाश लोग योगसाधना की योग्यता नहीं रखते थे। उनमें वह निष्ठा ब्रह्मचर्य की पालना ससार से विराग और भी जो सब बातें आवश्यक थी उनके पास न थी और थीं भी तो किसी बिरले के पास। इसलिये मारवाड के नाथ और उसकी परम्परा में विकसित फिरकों में अधिकतर अनुयायी गृहस्थ धर्म का निर्वाह करते थे। शादी ब्याह के लिये अपने गुरुद्वारे की सीमा छोडकर अन्यत्र ब्याह कर सकते थे भीख मागते थे कोई मजदूरी कर लेता कोई खेती करता तो कोई और काम कर लेता। इनका बाह्याचरण नाथ पथी रहा मुद्रा पहनते सिंगी सेली धारण करते सिंगी को पवित्रतम वस्तु मानते भस्मी का लेप करते और मुर्दे को कभी बैठाकर तो कभी लिटा कर गाड देते।

इनमें से कुछ साकार नाथ के उपासक हो गये कोई साप बाधकर तो कोई मुकुट

में महादेव की मूर्ति पहन कर। महादेव के साथ आद्याशक्ति के रूप में पार्वती की उपासना का प्रारम्भ हुआ और चारणों की आद्या शक्ति हिंगलाज माता इन लोगों के लिये परम आराध्य हो गयीं। सम्भवत इसीलिये धीरे धीरे नारी निषेध का स्वर क्षीण पडता गया। हिंगलाज माता के दर्शन कर आयी स्त्री स्वय को विरक्त महसूस करने लगी और पुरुष वेष धारण कर इस मार्ग में प्रवृत्त हुई। मूलत नाथ परम्परा जीव हत्या मास सेवन मदिरा का कठोर प्रतिषेध करती रही किन्तु यह प्रतिषेध का स्वर भी अनान्दोलित हो गया नाथों के अनुयायियों के सभी सगठनों में (प्राय) मद्य मास का सेवन साधारण बात हो गयी।

रूपादे के जागरण के प्रसग को यदि एक बार फिर स्मरण कर लें तो आपको याद आयेगा कि रूपादे की थाली में प्रसाद स्वरूप मास से टुकडे ही तो रखे हुए थे जो उगमसी भाटी या रामदेव की कृपा से फल फूल बन गये। जब नाथों के अनुयायी घरबारी हो गये अर्थात् गोरखनाथ के शब्दों में "कामिनी के क्रोड में पलते रहे" आजीविका के लिये किसी न किसी वृत्ति का आश्रय लेकर दिन गुजारते रहे। दूसरे शब्दों में आशायुक्त जीवन के अभ्यस्त हो गये तब उनमें कुण्डलिनी को उन्मुख कर स्फुरित करने की शक्ति कहा से आती इसलिये वे धीरे धीरे ज्ञानाश्रयी योगमार्ग से दूर होते गये।

फिर अन्य समाज के लोग जो नाथ तो नहीं थे किन्तु वे अन्त्यज इनके साथ जुडते गये और उन्होंने भी कुछ नाथ सस्कारों को स्वीकार किया यथा मेघवाल हरिजन आदि। सर्व समन्वयक इस नाथ भ्रष्ट समाज में गुरु के प्रति निष्ठा वाला तत्व अद्यापि किसी न किसी रूप में बना हुआ था तब जनता नाथ या परमतत्व के दर्शन ही अपने गुरु में करने लगी क्योंकि कम से कम आपत्तियों में फसने पर मनुष्य को श्रद्धा रखने के लिये कोई न कोई तो आधार चाहिये। इस गुरु-पद की भक्ति परब्रह्म या भगवान् के समर्पण में परिवर्तित होना ही योगी का सन्त बनना उसके पूरे या अधकचरे अनुयायियों का भक्त बनना है।

जैसे पहले प्रिथीनाथ या पृथ्वीनाथ की चर्चा में स्पष्ट हुआ है कि नाथ योगियों ने भी अनुभव किया कि योग सामान्य के योग्य नहीं है भक्ति ही उनके अनुकूल है। पिरथीनाथ १७वीं शती में हुए थे। दिशाहीन हुए समाज की पुनस्स्थापना के लिये उसके सस्कारों के लिये उनमें भक्ति भाव और समर्पण की भावना के अवतरण के लिये उनके बाह्याचार और ढोंग का विरोध कर उन्हें सन्मार्ग की ओर प्रवृत्त करने के लिये अपने जीवन को समर्पित करनेवाले महात्माओं में पृथ्वीनाथ और उनसे भी पूर्व कबीर से पहले यदि किसी का नाम लिया जा सकता है तो वह केवल रूपादे का है। नाथ मिश्रित समाज जो वर्णाश्रमियों की दृष्टि से तब भी हेय था किस प्रकार रूपादे के उपदेशों से प्रभावित होकर भक्ति भावना से ओत प्रोत हृदय का समर्पण कर मारवाड राजस्थान में निर्गुणी उपासना का सूत्रपात कर सका यह जानने के लिये ही आगामी पृष्ठ लिखने हैं।

परन्तु रूपादे पर विचार करने से पूर्व उनके गुरु भाई धारू मेघवाल और गुरु उगमसी भाटी के मनोगतों से परिचित होना निश्चय ही उपादेय होगा।

७ योग से भक्ति योग—

रूपादे की भक्ति-कथा से जुडे हुए व्यक्तियों में मल्लीनाथ जी के अलावा दो व्यक्तित्व विशेष महत्वपूर्ण है उसक बालसखा और मार्ग दर्शक धारू मेघवाल और गुरु उगमसी भाटी। उगमसी भाटी की सिद्धियों के बारे में यत्र तत्र सदर्भ मिलते हैं परन्तु उनकी उपलब्ध रचनाओं और बेल में उनका जो स्वरूप उभर कर आया है उससे यह सिद्ध करने में सहायता मिलती है कि यद्यपि उनका बाहयाचार नाथ-जैसा ही था परन्तु उनकी आत्मा उनका मन एक समर्पित भक्त का था। यही बात उनके शिष्य धारू के बारे में भी कही जा सकती है।

रूपादे का मल्लीनाथ से विवाह होने पर यह बात सामने आयी है कि धारू मेघवाल को बारात रवाना होते समय रूपा धारू से पूछती है—

वचन भाव पूरो करयो फिर भक्ति पद धारे
दोनू बिच में राम हैं सायबो पार उतारे।
सुगरा नर सरगा जावसी नुगरा नरक सिधारे
गुरु मुख वचन निभावसी मालिक वाने तारे॥[४४]

यद्यपि इसमें सुगरा नुगरा का प्रयोग सुगुरा नुगुरा की तरह किया गया है फिर भी राम साहेब मालिक आदि पद निश्चय ही महत्वपूर्ण हैं। गुरु की आज्ञा थी रूपा को भक्ति में दीक्षित करना और उस वचन का निभाने के लिय धारू सपरिवार रूपा के साथ चल पडते हैं यहा धारू का भक्ति से अटूट सबध है।

दीक्षा के बाद धारू जब मल्लीनाथ को उपदेश देते हैं तो उसका आशय व्यापक दृष्टि रखने का है केवल स्वय के शरीर में परब्रह्म का साक्षात्कार करने का नहीं है। समष्टि को साथ लकर मोक्ष मार्ग पर अग्रसर होना है। धारू कहते हैं कि जागरण में आवो वहीं गुरुदर्शन होंगे—

जमला री रेण जगाय म्हारा वीरा रे जमले गुरु म्हारो आवेलो।

"तुम्हे नहाना है तो समुद्र से सम्बन्ध रखो छोटे छोटे गड्ढों में क्या नहाते हो पर्वत से वास्ता रखो छोटी छोटी पहाडियों से क्या लेना देना ? परनारी से हेत मत रखो। गुड से ही खाड होती है। खाड से शक्कर और शक्कर से ही मिश्री। मालोजी! साधु का जीवन बडा कठिन होता है व्यक्ति को खाड से मिश्री बनना होता है स्वय के शरीर के साथ साथ मन की पूरी शुद्धि चाहिये।"[४५] फिर भी अभी तक ये लोग नाथ प्रभाव से मुक्त नहीं हो पाये थे इसलिये उस परमतत्व को अलख ही कहते रहे—

अलख पुरूष को धर लो ध्यान।[४६]

इसलिए धारू उसका बार बार नाम स्मरण करते हैं—

अहकार जग रह्यौ अलाप जग आरभियौ जपवा जाप।[४७]

नाम स्मरण का उत्तम साधन जप या भजन है और हमारे धारू जी

भजन में लगे हुए हैं निरन्तर रात और दिन—

धारू भजन करे हर बार।[४८]

और अपने जागरण में केवल सन्तों को ही नहीं वे सभी देवताओं को निमन्त्रण देते हैं पाट पूरते हैं और विधिवत् उनकी पाट पर स्थापना करते हैं।[४९]

रूपादे जब जागरण के लिये चल देती है तो महलों के बद दरवाजों को हरिने ही तो खोला था—

रूपा जपै हरि रा नाम खिडकी खोली हरि आपौ आप।[५०]

इसी को बेल के एक दूसरे सस्करण में देखिये क्या हरि की अधीनता स्वीकार की गई है—

हरी खोलीया जदी खुलाणा।[५१]

जागरण तक पहुच कर दोनों हाथ जोड सन्तों और गुरु उगमसी के वह "पग परसती है। जागरण सम्पन्न होने पर लौटते हुए जब मल्लीनाथ जी सामने पड जाते हैं तो पशोपेश में पडी अबला रूपादे द्रौपदी तारामती या हिरण्यकुश का स्मरण करती है और बार बार जगदीश कृष्ण को बुलाती है—

अरध देऊ ऊगै दिन ईस जपिया झट आवो जगदीस।[५२]

क्योंकि इस लोक में भवसागर पार कर अगर कोई मोक्ष की गति प्राप्त कराने वाला है तो वह जगदीश के अलावा और कोई नही—

जिणरी गति कोई जगदीस सवारे थिन पाचो जी जगदीस जवारे॥[५३]

जगदीस और राम में कोई अन्तर नहीं तुम्हारी वेदना का विनाश अगर कोई कर सकता है तो वह केवल राम ही है इसलिये राम का स्मरण करो—

भजौ राम वेदन नहीं व्यापै।[५४]

धारू मेघवाल की तरह बेल के रचयिता ने उगमसी भाटी को भी विशुद्ध योगी या नाथ के रूप में चित्रित नही किया है। हालाकि वे मल्लीनाथ को सींगी सेली आदि बाह्यचिह्न धारण कराते हैं फिर भी उनकी साधना में प्रेमाभक्ति का तत्व है—

राव रतनसी उगमसी भाटी पीधौ प्रेम रस भाणा।

उगमसी भाटी का प्रेमा भक्ति या भक्ति का ही सही दिग्दर्शन उनकी रचना में

भी स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। कृषिप्रधान भूमि के किसानों और सामान्य लोगों का भक्ति की महिमा और उस मार्ग पर चलने के लिये वे उद्बोधन करते हैं जिस मार्ग का अनुसरण (उनके शिष्य) रूपादे और मल्लीनाथ ने किया है। उगमसी पूछते हैं अरे भाई। इस बार कौन सी खेती कर रहे हो अरे सत की खेती करो तो उसकी फसल भी सत स्वरूप ही होगी—

सतडे री बाड सजोरी खेती खरसण साच कमावो।
काई थूला बपरावो म्हारा भाईडा।[५६]

इस स्थूल ससार से विमुख हो जाओ और वह पाने के लिये प्रयत्न करो जो सत् है स्थायी है चिरन्तन है सत्य है। इसलिये वे वनमाली या कृषक को कहते हैं "अगम बाग का सिंचन करो। तुम कौन कौन सी वस्तुए पैदा करोगे। तुम हीरों की खेती करो सच्चे "साहेब" का ध्यान करो तो तुम्हारी काया अमर हो जावेगी "अमीरस अमृत का पान तुम तो करोगे ही और जो चाहे उसे भी पिला देना अपने साथ औरों का भी उद्धार करो—

अगम बाग सिंचावो वनमाली
काई काई वसत निपावो। म्हारा भाईडा।

साचा म्हारा वीरा जी थे हीरा री बिणज करो
साचे सायबजी ने थे ध्यावो
काया थारी अमर हुए भाईडा।
तिरगटी (निर्गुण) रा मोल अमीरस भरिया
सो पीवै ज्यानै पावो म्हारा भाईडा॥

तुम्हारी पाचों इन्द्रियों को विषय वासना से दूर रखो उन पाच "सुवटियों" को मोतियों का चुगा डालो अर्थात् तुम बाह्य और अन्तर्मन में शुद्धता निर्मलता रखो तो तुम्हारी इन्द्रिया स्वय ही शुद्ध रहेंगी—

सुखमण सरवरिया पाच सुवटिया मोतीडा रो चूग चुगावो।

मालोजी और रूपादे ने भी यही किया और वे अमर हो गये उसी रास्ते तुम चलो—

जिण करणी मालो रूपादे सीझा
सो पथ थे हलावो म्हारा भाईडा

हीरा री बिणज हलावो। म्हारा भाईडा।[५७]

यदि कोई इस पद्य में प्रतीकवाद या रहस्यवाद के सूत्र देखना है तो उसके लिये

वह स्वतन्त्र है परन्तु जिन लोगों के लिये यह बात कही गई है उनके लिये सीधा अर्थ है सत् कर्म में प्रवृत्ति सत्कर्म जन्म पुनर्जन्म के चक्र को समाप्त करता है और बार-बार योनि भ्रमण न कर मनुष्य को मुक्ति मिलती है। यह मुक्ति योगी की नहीं अपितु भक्त की है। ऊपर की पंक्तियों में आया "तिरगटी या निरगटी" शब्द निस्संशयत निर्गुणत्व का वाचक है।

अब यह आशका हो सकती है कि एक तरफ तो रूपादे नामों से सम्बदध है दूसरी ओर वह हरि और जगदीश का बार बार स्मरण करती है तो कभी आलम (निर्गुण पद) को अपना "सैंया मानती है तो कभी अल्ला साई और परब्रह्म की एकता का बखान करती दिखायी देती है। और इस दृष्टि से विचार करें तो मीरा के पदों में मिलने वाली निर्गुणोपासना अथवा कबीर के गोविन्द की पुकार किए हुए पदों को देखकर यह अर्थ निकालना कि कोई सगुण है या निर्गुण का समर्थक है उचित नहीं है।

वास्तव में भक्ति तरंगिणी के दो प्रवाह हैं जो साथ साथ बह रहे हैं उन्हें लाठी मारकर अलग अलग नही किया जा सकता है आचार्य द्विवेदी ने ठीक ही कहा है – कि हम जिस अलक्ष्य अगम परब्रह्म या आदिपुरुष और उसके कार्य का वर्णन करना चाहते हैं वह अरूप है असीमित है अगुणी है। जो व्यक्ति वर्णन करने वाले हैं वे ससीम है। गुणाच्छन्न हैं उनकी रूप दर्शन की भी एक सीमा है। इसलिए रूप से अरूप का या सीमित से असीमित का वर्णन करने की जब भी कभी बात उठेगी तो उसमें पूर्णता कदापि नही आ सकती है कभी उसका सगुण रूप दिखायी देगा कभी ऐसा लगेगा कि वह गुणों से परे निर्गुण है तो कभी स्वानुभूति के आधार पर यों भी प्रतीत होगा कि वह सगुण निर्गुण से अतीत कोई विलक्षण तत्व है।[५८]

रूपादे के विचारों/उपदेशों अथवा उसके दर्शन की मीमासा से पूर्व हमें इस बात को ठीक तरह से हृदयगम कर लेना चाहिये कि सगुण निर्गुण या तदतीत की जो शब्दावली है वह वास्तव में परम तत्व का निरूपण नहीं करती प्रत्युत् हम जिस रूप में उस तत्व का अनुभव करते हैं उस अनुभव का किंचित् स्वरूप इन शब्दों से प्रकट होता है। स्पष्ट है हम मूर्तिपूजा में इसलिये विश्वास करते हैं कि उस तत्व के निराकार होने की कल्पना भी कदाचित हमारे लिये असह्य हो जाए, जब हम उसे निराकार रूप में पूजने की सामर्थ्य रखें तो सहज ही सगुण भाव हमारे लिये गौण होगा। सही रूप में तो वेदोपनिषदादि और तदनुसारी दर्शन ग्रन्थों में जो उसका नेति नेति इस प्रकार से निषेधात्मक वर्णन मिलता है वही इस बात का प्रमाण है कि हम उसके स्वरूप की याथातथ्य वर्णना नही कर सकते हैं क्योंकि वह केवल अनुभवैकगम्य है और भगवत्कृपा से होने वाले इस अनुभव का कथन जो परानुभव है हमारे पास वाणी का चौथा भाग जो वैखरी है उससे सम्भव भी नहीं है।

जैसा कि हम अब तक जान गये हैं कि रूपादे ने जिस काल और समाज में

जन्म लिया तब की धार्मिक स्थिति में समाज की व्यक्ति से अलग प्रकार की अपेक्षाएं थीं। मुसलमान आक्रमणों के परिणाम स्वरूप जिन लोगों को वेद स्मृतियां स्वीकार करने में हिचक हो रही थी वे लोग या तो मुसलमान होते गये या फिर नाथानुयायी बनते रहे। ढगमसी भाटी रामदेव मल्लीनाथ इन सबसे सिद्धि या चमत्कार शक्ति जुड़ी हुई थी रूपादे का यह समाज था। इसलिए उसके उपदेशों में कहीं नाथ साधना के तत्व प्रतीत होंगे तो हमें आश्चर्य नहीं करना चाहिये। दूसरे रूपादे स्त्री होने के नाते हिन्दू संस्कारों से सर्वथा मुक्त नहीं है जगदीश राम सांवरिया सभी की कृपा उसे चाहिये। उसे उनका सगुण रूप मान्य है यह विचारना है। किन्तु वह योगियों की तरह मोक्ष पर केवल अपना अधिकार नहीं मानती सब स्तर के लोगों को वह साथ ले चलना चाहती है गुरु ही उसके लिये अलख बन जाता है समाज में नैतिमता की मान्य अवधारणाओं को वह पुन स्थापित रूप में देखना चाहती है। इसलिए रूपादे की वाणी का अध्ययन बहुत कुछ अर्थों में किसी सम्प्रदाय विशेष की सन्त वाणी का न होकर व्यापक रूप में भारतीय आध्यात्मिक चिन्तन के भक्ति उन्मुखीकरण के आधार के रूप में ही किया जाना चाहिये।

८ रूपांदे का भक्ति-दर्शन—

रूपादे स्वभावत नाथ परम्परा से जुड़ी होने से गुरु के प्रति अपार निष्ठा उसकी वाणी में अन्तर्भूत महत्वपूर्ण तथ्य है। जैसा नाथ कहते हैं – नाथ कृपा से ही गुरु मिलता है साधक गुरु में परम तत्व देखने लग जाते हैं और परम तत्व परात्पर का जो मार्गदर्शक है वह उनके लिये स्वय परात्पर बन जाता है वही परमतत्व आलम है वहीं सैंया है वही उसका पावणा या मेहमान है उसका स्वागत करने के लिये माणिक और मोती ही चाहिये—

हालो ये नगर री सखा गुरु वदावौ हाला
गुरा ने वधावा माणक मोतिया।
प्रेम रा निसाण बण वाप्या भारी सैंया
आलम जी आया है प्यारा पामणा॥[५९]

रूपादे का गुरु केवल ज्ञानाश्रित योगी बुद्धिवादी व्यक्ति नहीं वह उसका सैंया है उसके प्रेम में रूपा समर्पित है यह जरूर है वह गुरु आलम है या फिर आलम ही गुरु है। वह सत् गुरु है। रूपादे ने जैसा आगे देखेंगे सत् की महिमा बहुत गायी है।

गुरु का पधारना या पर्याय से सत् की किंचित् भी अनुभूति होने पर उसका क्या परिणाम होता है देखिये –सतगुरु के मेहमान के रूप में आने पर जल हीरे जैसा हो जाता है अर्थात् यह भवाब्धि या भवसागर उसकी अनुभूति से हीरे जैसा प्रकाशमय हो जाता है। ससाराब्धि में तैरने वाली मछली जिसे रूपादे ने जीव कहा है अपने मुह में बालू रेत लिये हुए रोती है।

गुरु का आगमन ही उसके लिये वर्षा है जल प्रवाह तत्व है और जीव मृत्तिका जड अथवा अपेक्षाकृत स्थायी है जीव का भौतिक ससार का आकर्षण धीरे धीरे कम होता है क्योंकि सत्गुरु की आगमन रूपी वर्षा उसके अज्ञानान्धकार को नष्ट करती है—

सत्गुरु आया पावणा
झरमर बरसे मेह
हीरा जल लागा हे जी।
हे ऊडा जलरी माछली रे मुख में बालू रेत
अथग जल भरिया हे जी सत्गुरु आया पावणा॥[६०]

अनेक विषयों में उलझे जीव को घाट के पार लगाना तो केवल गुरु का ही काम है क्योंकि गुरु के पास ज्ञान की ऐसी गोली है जिसके सामने (कायर) अज्ञानी भाग खड़े होते हैं और जो शूर बने फिरते हैं और अपने हठ पर अडे रहते है उनकी मुक्ति कहा सम्भव है—

गोली लगाई गुरु ग्यान री रे कायर भागा जाय।
सूरा नर हठ मा आवे सतगुरु आया पावणा॥[६१]

यह गुरु या सैंया कोई तात्कालिक थोडे ही है। वह है "जूनी कला रा साई"। उसे देवालय में जाकर आप देवता कहो या मक्का जाकर उसे अल्लाह के रूप में देखो वह है तो एक ही तत्व। रूपादे उसी को सम्बोधित कर बार-बार विनती करती है मेरे जूनी कला के साई अब आप जागिये—

देवरा में देव मका जी अल्ला जुवाला में साई
खडक सम्ब भाई आप बिराजे
राम जहा देखू साई।
जागो म्हारा जूनी कला रा साई॥[६२]

परन्तु गुरु या साई को प्राप्त करने के लिये चाहिये भक्ति और हृदय का समर्पण जिसमें भक्ति नहीं समर्पण नही वह कैसा चेला—

ए जी सुरति बिना कैसा चेला हो रावल माला॥[६३]

अर्थात् भक्त में सुरति प्रकृष्ट अनुरक्ति परम समर्पण चाहिये।सब कुछ भूल कर सारे रिश्ते नातों को तोडकर वह अपनी जीवन की नैया सतगुरु के हवाले कर दें इस विश्वास के साथ कि केवल सतगुरु ही उसे घाट के पार लगा सकते हैं—

सतगुरु म्हारी नाव हा रे
धिनगुरु म्हारी नाव।
भरोसे आपरे हालो हो
सतगुरु म्हारी नाव॥[६४]

पर सतगुरु मिलना भी तो कठिन है समर्पण करें या सुरति भाव रखें गुरु मिलें तब तो ना। रूपादे कहती है गुरू पावणा है प्यारा पावणा है सैंया है तो फिर प्रेम की सार्थकता ही विरह में है जब तक विरह व्यथा नहीं होगी सैंया से विछोह का दुख नहीं होगा जब तक जीव विरहाग्नि में व्याकुल न होगा सतगुरु मिलेंगे तो भी कैसे? जिसके मन में विरह व्यथा नहीं वह धूल के समान है गेरुए वस्त्र पहन कर अगर वह अग्नि में जला नहीं तो उसके जैसा मूर्ख कौन—

जी रे वीरा ज्यांरे मन में विरह नही हो जी ज्यारो धूड सो जीणो।
जी रे वीरा ऊपर भेख सुहामणो हो जी गेरू सु रग लीनो।
आप अगन में जलिया नही हो जी। होय रयो मति हीणो॥[६५]

मन में विरह व्यथा लेकर जो साधु होकर गुरु के पास जाए तपस्या के समाम में बिना भय अपना सिर देकर जो मरने से कभी नहीं डरा वही व्यक्ति या साधक अपने मोक्ष का मार्ग तय कर सकता है। सैंया या आलम के प्रति आप में भक्ति है प्रेम है समर्पण है किन्तु उससे मिलने के लिये अगर आप तडप नहीं जाते उसके विरह की व्यथा आपको नहीं सताती उसके विरह की अग्नि यदि आपको नहीं जलाती तब आप मोक्ष मार्ग के कदापि अधिकारी नहीं हो सकते—

जी रे विरह सहित साधु होया हो जी जिका सिर धर दीनो।
मरणे सू डरिया नहीं हो जी मग में मारग कीनो॥[६६]

फिर वह अपने गुरु उगमसी भाटी की कृपा का विचार कर क्षण भर भाव विभोर हो उठती है जिसे उगमसी जैसे गुरु मिले वे प्रेम रस में मदहोश हो कर झूमते हैं रग के प्याले पीते हैं तभी तो निज पद" की पहचान होती है उसके लिये सबसे जरूर कोई वस्तु है तो वह है सूक्ष्म दृष्टि —

मतवाला झूमे मद भरिया हो जी रंग भर प्याला पीणा।
जीरे वीरे गुरु उगमसी मिलीया हो जी जिका मन किया झीणा॥[६७]

पर ये तो गुरु सही गुरु के मिलने की बात है न जाने वह मिलने तक कितनी घडिया कितने दिन/वर्षों या युग बीत जाए यह प्रतीक्षा की अवधि जितनी अधिक उतनी ही विरह व्यथा तीव्रतर उतनी हा वेदना अधिक। इसलिये उस आलम की प्रतीक्षा अपना प्रत्यय प्रिय मानकर रुपादे करना चाहती है। कहती है अजी आप कह तो गये थे दो चार दिन की ये आपके दिन कब समाप्त होंगे? यहा तो युग पर युग बीते जा रहे हैं मैं तुम्हारे इन्तजार में खडी खडी परेशान हो रही हू—

कैय ने मै गया था दिनडा दोय नै चार।
जुग ने चौथो रे कोई भव नै दूजो रे॥[६८]

अपनी व्यथा को प्रियतम के पास पहुचाने की लालसा क्योंकि कहने या बाटने

से ही वह पीडा कम होगी रूपादे के मन में एक बार विचार आता है चलो प्रिय को सारी बातें चिट्ठी में भेज देती हू। लेकिन पत्र पढकर रख दें तो वह किस काम का उसे गुणना भी तो चाहिये अर्थात् उसकी लिखी बातों पर कोई गौर तो फरमावें। वह समझती है कि पत्र तो भेज ही दें—

लिखू म्हारा सायबा कागदिया दोय नै चार
भणिया हुवो तो रे कोई गुणिया हुवो तो
स्वामी राजा वाच ले॥"[६९]

देखिये गुरु रूप भगवान। आलम को क्या उलाहना दिया है कारण यह है कि वह स्वय को उससे भिन्न मानती ही नहीं है। चाहे वह किसी भी रूप में प्रकट होना चाहे। आलम वैरागी वेष में आता है तो वह भी वैरागण बन जाएगी यदि वह जोगी के रूप में दिखाई देता है तो वह जोगण का वेष बना लेगी। आलम जिस रूप में उसे देखना चाहे जिस रूप में उससे मिलना चाहे वह रूप वह बना लेगी और हर रूप में उसे पहचान ही लेगी—

करू म्हारा सायबा जोगणिया रा रूडा वेस।
जोगण होय ने नै वैरागण होय ने रे जुग (जग) सारो ढूढ लू॥[७०]

उसके स्वागत में हार गूथने हों तो वह "मालण" बनने को तैयार है – मेरे साहेब मैं मालण का भी वेश कर लूगी पर आप आइये तो सही—

करू म्हारा सायबा मालणियारा रूडा वेस।
मालण होय ने नै फूल मालण होय नै रे गूथू हर रै सेवरा।[७१]

पता नहीं आलम कब आयेंगे रूपादे सरोवर के तीर पर खडी है। लगता है कभी वे पश्चिम से आयेंगे तो पश्चिम किनारे आती है तो घडी में उत्तर की ओर मुह कर लेती है। न जाने वे कहा गये हैं और किधर से आयेंगे?—

ऊभी म्हारा सायबा रे राम सरोवर तीर
नैण सरोदे रे कोई बेण सरोदे
हर थारी बाट जोवो जियो आलम राजा रै
कोई उतर धरा में कोई पिछम धरा में
कालिंगे ने मार लेनो।[७२]

कभी तो रूपादे इतनी व्याकुल हो परब्रह्म या सैंया से अपने इतने तादात्म्य का अनुभव कर उसे अपने जैसा ही हाड मास का शरीर धारी मानती है। भगवान उसके लिये हीरों का और लाखों का व्यापारी है उसे हीरों से नहीं उसके व्यापारी से ही काम है वह खडी खडी उसकी प्रतीक्षा करती है उसकी राह पर आखे लगाये बैठी रहती है—

अब घर आवो म्हारा हीरा रा व्योपारी
अब घर आवो–
अब घर आवो म्हारा लाखा रा व्योपारी
ओ ऊन्डोडी जोवू थारी वाटडी॥[७३]

फिर उस व्यापारी को तरह तरह के प्रलोभन देती है गाय दुह कर उसके दूध से तुम्हारे पैर धोऊंगी क्योंकि तुम थके हुए होंगे भैंस दुह कर गुड मिलाकर तुम्हारे लिये खीर बनाऊंगी—

भैंस दुवाडू ओ थारी पूरडी ओ व्योपारी
माय गुडली रदाडूली खीर रे॥[७४]

मसूरी खाड डाल कर चावल बनाऊंगी लपसी बनाऊंगी जिसमें नारियल फोडकर खोपरा डालूंगी पतली रोटिया बनाऊंगी लेकिन तुम आवो तो सही—

चावल रदाडू थारे ऊजला माय मसूरीया खाड रे।
लपसी रदाडू थारे सोलमी माय लिलरिया नारेल रे॥[७५]

और तो और आप का आसन भी ऊचा लगाऊंगी लेकिन मेरी प्रतीक्षा की सीमा की भी कोई हद है तुम्हारे स्वागत के लिये मैंने इतनी सारी तैयारी की उसका क्या होगा इसलिए अब विलम्ब न करो अब विरह मुझसे सहा नहीं जायेगा—

अब घर आवो म्हारा हीरा रा व्योपारी।

यह हीरों का व्यापारी और कोई नहीं रूपादे का सैंया है इस विश्व का पालनहार है जीवों का मुक्तिदाता है जिसके आने से मछली रूप जीव के मुह से बालू रेत निकल जाती है उसका अज्ञान नष्ट हो जाता है वह भवसागर के पार लग जाता है। वह उसको अपने से अभिन्न मानते हुए साक्षात् पुरुष रूप में उसकी सेवा करना चाहती है। ऐसी सेवा कि प्रसन्न होकर वह वापस न जावे। किन्तु फिर भी उसकी इतनी व्याकुलता के बावजूद सैंया हीरों का व्यापारी नहीं आता है। तब फिर से धैर्य रख कर कहती है कोई बात नहीं नहीं आये तो मैं भी नहीं हारूंगी। लम्बी विरह वेदना और चिर प्रतीक्षा के अभ्यास ने उसे ऐसा बना दिया है कि प्रतीक्षा करते करते वह थकती कभी नही। आगन्तुक के शकुन देखने का उसे अभ्यास हो गया है। उसे हर युग में हर काल में इसी तरह सताया है यही हर भव का मेला है यही हर युग का मेला है क्योंकि उस प्रिय से मिलना इतना सहज नहीं—

भव भव मेळो रे कोई जुग जुग में मेळो रे मेळे गरबे देवरे रे॥

रूपादे भले ही नाथ परम्परा से किसी न किसी रूप में जुडी हो ऊपर दर्शाया गया गुरु का स्वरूप केवल उगमसी भाटी या अन्य किसी शरीरधारी गुरु तक सीमित नहीं रखा जा सकता क्योंकि गुरु और आलम में वह कतई भेद मानना स्वीकार नही

करती है। नार्यो की गुरु भक्ति को वह आलम भक्ति तक पहुचा पायी साथ ही उसने परतत्व और गुरु के भेद को भी पूर्ण रूप से जाना भी है-उसकी कृपा से ही उसे "निज पद की पहचान हुई है गुरु से परम गुरु वही आलम है वह साई है अल्ला है भगवान है। उसको यह परमेश्वरवाद की अवतारणा यद्यपि नई नहीं है फिर भी भक्ति के सदर्भ में उसका अनन्य महत्व है।

रूपादे की अभिव्यक्ति के आलम या सैंया या परम गुरु यदि सही रूप में देखें तो वह परब्रह्म की अवस्था के द्योतक हैं। रूपादे का इस विषय में अपना अनुभव है। सारा दृश्यमान और अदृश्यमान यह चराचर जगत् किसने बनाया इसे कोई तो बनाने वाला हो और जो भी होगा वह बडा अद्‌भुत कारीगर होगा। उसका "कमठाणा" (निर्माण) देखकर ही आप अनुमान लगा लें कि वह कितना बडा कारीगर होगा—

हा रे वीरा जिण कारीगर जगत घडयो हो जी
जिण रो अजब कमठाणो।[७६]

वही सबके बीच विद्यमान है कण-कण में रज रज में व्याप्त है और तुम सारे ब्रह्माण्ड में घूम कर खोज कर लो उसके सिवा दूसरा कोई नजर नहीं आएगा।—

सोई बिराजे सब रे बीच में हो जी देखो अधर ठहराणो।
हा रे वीरा सगळो ब्रह्माण्ड फिर देख लो हो जी
दूजो कोई नीजर नही आणो॥[७७]

वह सबके साथ है सबके बीच में सर्वत्र समाया है लेकिन मिलता किसी को नहीं है केवल उसी को मिलता है कि जो स्वय उसमें मिल जाये। देखिये कितनी बडी बात कितने आसान शब्दों में कही है वहीं उसका अनुभव करने के लिये दृष्टि चाहिये। वह स्थूल इन्द्रियों का विषय नहीं अन्तर्दृष्टि चाहिए जिसके लिए भगवान् के प्रति समर्पण और भक्ति का मार्ग है इस मार्ग पर चलना कायरों का काम नहीं है। परब्रह्म का अनुभव किसे होगा जिसे वेदान्त में "सोऽह" बताया है लगभग इस स्थिति तक पहुचने वाले को ही वह मिल सकता है। सर्वसग परित्याग करो न करो मन को शुद्ध रखो तब वह आपको मिलेगा। रूपादे कहती है—

हा रे चारो मेळो रेवे पण नहीं मिळे हो जी
एडो चतुर सयाणो।
जिण पायो जिण पावियो जी

जो कोई मिळे सो उणमें मिळे हो जी
आप कहीं आणो ना जाणो॥[७८]

उस परमतत्व को कहीं भी आने जाने की जरूरत नहीं और वह जाए तो कहा जब वह सब में समाया है। जो सत् के मार्ग पर चलेगा जो उसमें मिलकर तदभिन्नत्व

का अनुभव करेगा उसे ही वह मिलेगा। फिर प्रश्न आता है उस परब्रह्म का क्या सम्बन्ध है इस शरीर से ? तब रूपादे कह उठती है यह काया एक नगरी है। इसमें सोने के महल हैं उन पर चादी के छज्जे लगे हुए हैं और इसके अन्दर जो जो तत्व या परब्रह्म का प्रतिबिम्ब रूप आत्मा है वह अपनी अमृतता को जानता है—

मायलो जाणै या अमर म्हारी काया हो जी

और इसीलिये सोने के महल और चादी के छज्जे वाली काया नगरी पर वह निर्बाध राज करता है—

सोने हदा महल रूपै हदा छज्जा हो जी
राज करै काया नगरी को राजा॥[७९]

जब यह महल ढह जाता है तो नगरी के राजा ने यदि परब्रह्म को पहचान नहीं लिया है तो वह राजा वह जीव फिर बिलखता फिरता है फिर उसकी मुक्ति नहीं होती है—

ढह गया महल बिखर गया छाजा हो जी
बिलख रह्यो काया नगरी को राजा॥

इस राजा को क्यों बिलखना पडता है क्योंकि आत्मस्वरूप स्वय के सच्चे अविनाशी रूप को *नहीं जानता है और न जानने की चेष्टा ही करता है। और यही तो सबसे* बडी आवश्यकता है। जीव माया मोह में फसा हुआ अपने रूप को नहीं पहचानता है। यह मेरा तुम्हारा कायादि आसक्ति यह सारा माया जाल व्यर्थ है। इसकी व्यर्थता को समझना चाहिये और यह तुम्हारा अपना फैलाया हुआ जाल है किसी को इसके लिये दोष देना व्यर्थ है—

हरि वीरा जाल सभी यह आपरो हो जी दोस कवन को दीजे।
आप समझ लेवे आपने हो जी मन मायलो पतीजे॥[८०]

चूकि जीवाश की समझ सीमित है सकडी है इसलिए वह अपनी खुशी से अपनी इच्छा *से ही दीन हुआ है दरिद्र हुआ जो अपने स्वरूप को पहचान नहीं पाता है* अनेक प्रपच रचता रहता है और बार बार गोते खाता रहता है बाहर निकल ही नहीं पाता—

हा रे वीरा अपणी खुशी से दीन भयो हो जी नाना परपच रचाया।
मन मायलो मान्यो नहीं हो जी फिर फिर गोता खाया।[८१]

उपनिषदों में बार बार एक वचन आता है स एक आसीत्। सैच्छत्। एकोऽह बहुस्याम्। देखिये कितने सरल शब्दों में अभिमानी जीव को जो बार-बार गोता खा रहा है रूपादे उसके मूलस्वरूप का स्मरण कराती है अरे वह मात्र *अपनी इच्छा से अनन्त* हुआ *सारे काम न करते हुए भी* उसने कर लिये सारा ब्रह्माण्ड उसने रचा आखिर ये

सारा खेल है तो उसी का रचा हुआ और तुम उसके अश हो अशी तो वह है—

हा रे वीरा अपनी इच्छा से अनन्त भयो हो जी नाना करम कर लीना।
खेल रच्यो इच्छा मीयने हो जी अखिल ब्रह्माण्ड रच दीना॥ [८२]

तुम हो तो उसी के अश पर शिकार हो रहे अपने ही बाण के। हरिण भी आप और पारधी भी आप - इसलिए एक होकर अद्वैत होकर चलो द्विधाभाव किसी काम का नहीं—

एक होय जद चालसी हो जी दोय रया अलुझावै।
हा रे वीरा आप हिरण आप पारधी हो जी आप ही जाल बिछाया॥ [८३]

इस द्विधा भाव से मुक्त होना मुक्ति के इच्छुक व्यक्ति के लिये पहला काम है इसके लिये पहले वह अपने मन को अपने वश में रखें। वह सुख दुख दोनों से विगत हो जाय उसे सुख में हर्ष नहीं हो और न ही विपत्ति या दुख में दुख की अनुभूति हो दोनों में समभाव रखने का उसे अभ्यास करना चाहिये। परन्तु प्राय लोग जब सुख में होते हैं तो ब्रह्मज्ञानी होकर फिरते रहते हैं और दुख में रोना शुरू कर देते हैं वह ब्रह्मज्ञानी नहीं वह गीता का स्थितप्रज्ञ नहीं हो सकता रूपादे का कहना है तुम वास्तव में ब्रह्मज्ञानी सच्चे स्थितप्रज्ञ बनो—

सुख में ब्रह्मज्ञानी रहे दुख में देवे रोय।
भाई रूपा यों कहे भलो कदेई न होय॥
दुख ने दुख समझे नही सुख सू हरख न होय।
रूपा कहे ससय नहीं जीवत मुक्ति जोय॥ [८४]

परन्तु जीवन्त मुक्ति का मार्ग बडा ही कठिन कटीला और अप्रशस्त है इस के लिए मान वैभव सत्ता धन ईर्ष्या सब कुछ छोडना पडता है। तभी तो रूपादे ने इस मार्ग पर चलने के इच्छुक अपने पति मल्लीनाथ से कहा यह पथ यह मार्ग खडग की धार यह असि धारा व्रत है इसका आपसे निभना मुश्किल है—

कहे रूपा सुणो माल जी कोई गूगा ने भेद नही देणा।
खरतर धारा खाडा री चलणा थासू सैल नही जावै सहणा॥ [८५]

परन्तु यदि मनुष्य किसी अप्राप्य के लिये मन में ठान ले तो पृथ्वी पर स्वर्ग बना देगा। विश्वामित्र के द्वारा नये स्वर्ग के निर्माण की कथा आपने सुनी ही होगी। जो बुद्धि से प्राप्तव्य नहीं है जहा शक्ति काम नहीं देती जहा ज्ञान भी निरर्थक होता है वहा काम आता है विशुद्ध मन का विशुद्ध काया का समर्पण।

रूपादे ने विशुद्ध मन की शक्ति को नारी का ही एक उदाहरण देकर समझाया है अपने मन को रूप सौन्दर्य की ओर आकृष्ट मत होने दो तुम सच्चे साम्ब को याद करो। क्योंकि रूप तो काच है—

रूपा कहे रे भाईयों और रूप रलै ज्यों काच।
रूप लाभ में मत रलो ढूढो साहब साच॥[८६]

जिस नारी का मन शुद्ध है किसी के देखने का उस पर कोई असर ही नहीं होगा तो उसके लिये पर्दे की क्या जरूरत? कभी सिंहनी ने भी पर्दा किया है सिंहसुता को कोई डर नही उसे कौन बाघ सकता है? जिसके मन में कोई विकृति आती ही नही उस पर आवरण किस लिये?

पड़दे में वे रेवसी जिंटे जगरो डर।
सिंहसुता चवडी फिरे कान न खावे कोय॥[८७]

कहती है इस मन को वश में रखने से ही वह शुद्ध रहेगा आप अपनी चाल हंस की रखिये, आचरण में कौवे की भ्रष्टता न आने दें उससे आपकी दृष्टि आपका मन शीतल होगा तभी आप साधु कहलायेंगे सच्चा साधु ही लाखों लोगों के जीवन को सुधार सकता है—

धीमा चाले हंस ज्यू, कहे कोकिल ज्यू बैन।
काग भ्रष्ट पण ना करे सीतल ज्यारा नैन॥[८८]

यह दृष्टि निश्चित ही दिखाई देने वाले नयनों की नहीं मनुष्य के अन्तर्मन की है जो स्थूल रूपों से परावर्तित होकर सूक्ष्म के दर्शन करती है। शुद्ध मन का निवास शुद्ध शरीर है। इसमें सोने के महल हैं उस पर चादी के छज्जे लगे हुए लेकिन यह कब तक जब तक उसमें आत्मा का निवास है यह सरोवर है कुवा है जो धस जाएगा तो इस पर पानी भरने वाली पाच पनिहारिया बिलखती रहेंगी इसलिए इस शरीर के लिये माया मत जोडो उसे विशुद्ध रखो उसे भक्ति सोपान के मार्ग का क्रमण करने दो—

एक तो कुवो ये तो पाच पणियारी रे
पाणी तो भरे वे तो पाचो न्यारी न्यारी रे।
ढस गयो कुवो टूट गई नेजा रे
बिलखती फरे वे तो पाचो न्यारी न्यारी रे।
थाडा रे जीवा रे खातिर काई माया जोडी रे॥[८९]

यों तो नाथ परम्परा में शरीर का महत्व अत्यधिक है क्योंकि उन्हें इसी शरीर में सहस्रार चक्र का भेदन करना होता है पर रूपादे शरीर को नश्वर मानती है तुच्छ मानती है। फिर भी शरीर होगा जब तक ही भक्ति हो सकेगी इसलिए विशुद्ध काया का उसे आग्रह है नाथों की कायासिद्धि का नहीं कायाशुद्धि का है और काया की शुद्धता का सबसे बड़ा साधन है ब्रह्मचर्य इन्द्रिय निग्रह और मन का वशीकरण। इसलिए सबसे पहले भक्तिमार्ग की ओर झुकने वाले अपने पति को वह उपदेश देती है हर नारी को भोग्या की दृष्टि से मत देखो पराई नारी को अपनी माता मानो। उसे अपनी बहन समझो

अनादि युग की यही वाणी है यह तत्व चिरन्तन है नित्य है—

ए जी रावळ माला पराई बेटी को
जननी कर जाणना
ताकु बेनी रे कही ने बुलाना हे_
ऐ जी ए तो बोल्या छे
अगम जुगनी वाणी रे। ए रावळ माला_[९०]

समाज को पथ भ्रष्ट करने वाली नैतिक दुराचार में फसाने वाली नारियों पर भी रूपादे ने व्यग्य किया है और अपने पति को खास कर चेतावनी देती है ऐसों को दूर से ही नमस्कार करना अच्छा होता है पास में जाना खतरे से खाली नहीं है—

ए जी रावळ माला भखर नारी रे वाकु सग नह करना।
ए जी ताकु हाथ जोडी ने दूर रहेना हो रावळ माला॥[९१]

इसलिए रूपादे उन्हें काया सुधारने का उपदेश देती है साधु हो जाओ और अपनी काया को सुधारो स्थूल प्रवृत्तियों को छोडो सूक्ष्म दृष्टि रखो—

रावळ माल हुय जावो साध सुधारो थारी काया।
हुय जावो साध चौगोडे मारग चालो हो जी॥[९२]

यह काया तो कूड काठ की बनी है आती जाती रहेगी अपने मन को डिगने मत दो एक बार आप फिसल गये और काया का स्वाद चख लिया तो जनम भर पछताना पडेगा—

काया में कूड काठ में करोती हो जी वा तो आवत जावत रेवै।
मालजी रूप देख ने मन ने मत डिगावो थारो फल चाख्या पछतावो॥[९३]

तालर" खेत में बीज बोकर तुम्हें क्या मिलेगा कोई फसल थोड ही हाथ आयेगी काया तो है कूपली मन है कस्तूरी—

काया कूपली ने मन कस्तूरी जी।

तुम्हारे शरीर में यह शक्ति है कि विष को अमृत बना दें। यदि शरीर को शुद्ध रखोगे तो मन रूपी कस्तूरी अपनी सुगन्ध दसों दिशाओं में बिखेर देगी—

नीम जखा रो नीमोलो वे री मीठी हो जी विष अमृत कर डारो।[९४]

इस रास्ते चलोग तो ही इस अथाह ससार सागर को पार कर सकोगे अशुद्ध शरीर और विकृत होने वाले मन से यह सम्भव नहीं—

ओ ससार अथग जल भरियो हो जी वेरो तेरूण्डो पार न पायो।[९५]

इस मर्म को समझ कर हृदय में विशुद्ध प्रेम रखते हुए जो अपने मन को वश में कर ले ब्रह्मचर्य बनाये रखें और अपनी दृष्टि को बाह्य निरपेक्ष - अन्तर्मुखी बनावे

वह ही भक्ति मार्ग पर चले उसी को गुरु पार लगा सकते हैं। किसी कार्य के लिये जैसे कर्तव्य का विचार किया जाता है वैसे ही अकर्तव्य का भी विधि का भी और निषेध का भी। नाथों की चर्चा में प्राय अनुयायियों के लिये जिन दो शब्दों का प्रयोग होता है वे हैं निगुरा और सगुरा शब्दश इनका अर्थ है गुरु कृपा रहित और गुरु कृपा सहित रूपादे के अनुसार गुरु ही ब्रह्म है उसका अमरापुर में वास है अत गुरुकृपा का अर्थ यहा भगवत्कृपा है। रूपादे ने इन्हीं से मिलते-जुलते दो शब्दों का प्रयोग किया है नुगरा और सुगरा वैसे तो लोक भाषा और लोक व्यवहार की दृष्टि से नुगरा का अर्थ है दुष्ट अकृतज्ञ अशालीन और सुगरा का अर्थ ठीक इसके विपरीत। इन पर विचार करें तो एक दृष्टि से रूपान्तरित अर्थ भी ठीक है क्योंकि जिसे गुरु की कृपा प्राप्त होगी उसका आचरण और व्यवहार "सुगरा" जैसे ही रहेगा जिसे गुरुकृपा नहीं होगी वह नुगरा निगुरा होने से नुगरा। रूपादे ने इन दोनों के बारे में बहुत कुछ कहा है और अपने अनुयायियों को उसका कठोर उपदेश दिया है नुगरों का सग मत करो सुगरों का सग करो। वह अपना अनुभव बता रही है मैंने जिसे तोता समझकर पिंजरे में बैठाया वह कौआ निकला जिसे मैंने साधु समझा वह ढोंगी निकल गया—

सुवो सुवो जाण मैं तो पिंजरे बैठायो
करमा रे प्रताप सू ओ हाडो निकल आयो रे।
साधु साधु जाण मैं आगणे जिमायो रे
करमा रे प्रताप सू ए ढोंगी निकल आयो रे॥[९६]

आर तो और जिसे मैंने हीरा मानकर अपनी अगूठी में जडाया वह भी काच निकल गया। इसलिये ससार के लोग जो सत्य असत्य उचित अनुचित साधु असाधु में अन्तर नहीं कर पाते उन्हें वह "भोली आत्मा" मानकर ताकीद देती है नुगरों का सग मत करो—

मत कर भोळी आतमा तू नुगरा रो सग रे
नुगरा रे सग सू ओ पडे भजन में भग रे॥[९७]

अगर अमरापुर जाना है मोक्ष पाना है तो सुगरों से स्नेह करो वे ही तुम्हारी मदद कर सकते हैं। सुगरों के साथ रहोगे तो भव को वश में कर लोगे तुम्हारी बोली कोयल सी होगी चाल हस वाली होगी आचरण में शुद्धता रहेगी और तुम साधु कहलाने योग्य बनोगे तब तुम्हें दीन हीन नहीं बनना पडेगा तुम दाता बने रहोगे। इसलिए सुगरा और नुगरा का अन्तर और उनकी सगति से होने वाले लाभ हानियों को गिनाते हुए वह सुगरा बनाने के लिए प्रयत्न करना चाहती है क्योंकि सुगरा ही भक्ति के मार्ग पर चल सकता है इसलिए नुगरों के सग को स्पष्ट शब्दों में मना करती है—

नुगरा से किसा सनेह म्हारा वीरा रे नुगरा माणस म्हाने मत कियो।
सुगरा से करणा सनेह म्हारा वीरा रे सुगरा माणस म्हाने नित मिलो॥[९८]

"बगुला तो मिट्टी खाता है उससे कौन स्नेह करेगा हंस मोती चुगता है तो हंस से ही स्नेह करिये। छोटे छोटे नदी नाले बरसात में सूख जाते हैं इसलिये उसी समुद्र से स्नेह करो जो हमेशा हिलोरे लेता है। कौए को कौन चाहता है कोयल सभी को अच्छी लगती है। इसलिए रे लोगों तुम साधुओं से स्नेह करो क्योंकि वही सबद" के पारखी होते हैं—

साधा से करणा सनेह म्हारा वीरा रे साध सबद का पारखी॥

यहां "सबद का पारखी से कदाचित यह प्रतीति हो सकती है कि नादब्रह्म को जानने वाले योगी की ओर इशारा किया गया सम्भव भी है परन्तु मैंने सबद उपदेश उचित अनुचित का उपदेश स्वीकार किया है वैसे भी कई स्थानों पर रूपादे पर नाथों का प्रभाव उपलक्षित होना कोई असामान्य बात तो नहीं है। अस्तु।

सुगरा सगति का अर्थ है सत्सगति और सबद के पारखी साधुओं की सगति कहलायेगी सन्त सगति या सन्त समागम। सन्त समागम में भजन है नामस्मरण है समर्पण है भक्ति है सब कुछ है। इसलिये रूपादे बार बार कहती है मेरे भाइयों जागरण में पधारो गुरु वहीं प्रकट होंगे। तुम्हारे भवसागर के सारे दुख दूर होंगे सारे दारिद्र्यका नाश होगा तुम्हें चारों ओर से केवल सुख ही सुख मिलेगा तुम्हारे त्रिविध दुख आधि भौतिक आधिदैविक और आध्यात्मिक तीनों तापों का नाश होगा—

भव दुख भागे रे थारा भय दुख भागे रे
चालो म्हारा भाईडा रे आपा सत रे जुमले माय
मिलने गास्या हे उठै मिलने गास्या रे।
तीनू दुख मेटा रे चालो आपा गुरु रे दरबार
मन नै समझास्या हे मायले ने समझास्या हे॥[९९]

सत समागम में ही तो मन पवित्र होगा और दृष्टि स्थूल से सूक्ष्माभिमुखी होगी सत सगति ही केवल सत्य का ज्ञान करा सकती है—

जी रे वीरा सगत करी साचे सत री हो जी म्हाने साच बताया।[१००]

कहते हैं हम पहले कुछ भी तो नहीं जानते हैं व्यर्थ की बकवास करते रहते हैं पाण्डित्य की प्रौढि का प्रदर्शन करते रहे लेकिन जब समझ गये तो हमारी बोलती बन्द हो गयी हम गुरु के सामने झुक गये निरभिमान हो गये—

समझ्सा नही बड बड बक्या हो जी सबद कया मन आया।
समझ गया जद चुप हुया चरणा में सीस नवाया॥[१०१]

सत सगति है ही ऐसी जो व्यक्ति को आत्मबोध करा देती है वह तो समुद्र है अथाह समुद्र जिसमें स्वाती के बूंदों से मोती बनते हैं तो वे महंगे क्यों नहीं बिकेंगे—

जी रे वीरा सग ही मोती नीपजे समदा सीप रळाया।

जो व्यक्ति ससार से निरभिलाष हो गया ममता छोड दी मन स्थितप्रज्ञ हो गया आशा समाप्त हो गयी सत सगति से ऐसे व्यक्ति के अन्तरमन में उजाला हो जाता है उसे चारों ओर सूर्य ही सूर्य दिखायी पडते हैं यही नाथों की घट में उजाला करने की बात है। रूपादे भी घट में उजाला चाहती है किन्तु भक्ति और समर्पण के बल पर। वह कहती है कि यह सत समागम रूपी समुद्र समता का समुद्र है यहा कोई भेदभाव नहीं कोई जाति नहीं वर्ण नही उच्च नहीं और नीच नहीं। इसमें हर "सुगरे" व्यक्ति के लिये प्रवेश सुलभ है। इस समता के समुद्र में तुम स्नान करो सबदरूपी मसाला लगा दो आपके जन्म जन्मान्तर के पाप कर्म धुल जायेंगे आपको ब्रह्म के अलावा कोई नजर नहीं आयेगा अपने अन्तरमन को प्रकाशमान बनावो तब कहीं जाकर जनम मरण के चक्र से तुम्हें मुक्ति मिलेगी—

जी रे मीरा समता समद में मनडो धोवियो हो जी
सब्द मसाला लगाया।
मन धुप करम सब गल गया हो जी
दूजा निजर नहीं आया॥
कैवे रूपा माय जागिया हो जी
आवण जावण मिटाया॥[१०२]

भक्ति मार्ग का जो अनुयायी हो गया उसमें और अन्य भक्तों में क्या भेद रहता है? रूपादे कहती है स्त्री पुरुष में भी कोई भेद नहीं है क्योंकि दोनों के अन्दर चैतन्य तत्व तो एक ही है—

नर नारी माय एक है कोई दूजा मत जाणो॥

और इसीलिये वह मल्लीनाथ जी में वासना नही आत्मा के दाम्पत्य भाव का दर्शन करना चाहती है मेरे लिये ससार में बाकी सब लोग या तो पिता हैं या पुत्र मेरे स्वामी तो आप हैं एक आप की कृपा और दूसरे जिसने पैदा किया है उसकी कृपा चाहिये इसलिये मैं आप दोनों को हाथ जोडकर विनती करती हू मुझे इस भव सागर से पार उतार दो—

कहे रूपा हो मालजी मन में धारो धीर
आप धणी सिर रूपदे और सब बाप ने बीर
एक तुम ही करतार हो एक है सरजनहार
दोया ने कर जोडवू, कर दीनों भव पार॥[१०३]

"मुझे आपकी कृपा पहले चाहिये क्योंकि दीनबन्धु भी उसके बिना प्रसन्न नहीं होगा मैं आपसे कहीं दूर नहीं जा रही हू, जा भी नहीं सकती क्योंकि मेरा आपका आत्मिक सम्बन्ध है वह कभी नहीं टूटेगा आप विश्वास रखिये—

दीन बधु परमेस सो था बिन राजी न होय।

इण सू मैं अरजी करू थासू हटू न कोय॥

किन्तु रूपादे का उद्देश्य केवल मल्लीनाथ जी को भक्तिमार्ग पर प्रवृत्त करना तो है नहीं उसे देश बल्कि सारे विश्व के दीन दुखिया को जिन्हें कोई स्वीकारना नही है उन को भक्ति की ओर प्रवृत्त करना ही उसका लक्ष्य है। उसका सारा समर्पण व्यष्टि के लिये नही समष्टि के लिये है। किन्तु उसमें शर्त यह है कि जो व्यक्ति स्वेच्छा से इस मार्ग पर चलना चाहे उसे वह अपने साथ लेकर चलेगी। इसलिये उसका कहना है- जो समझना चाहता है मेरे भाइयों उसे समझाना मेरा फर्ज है कर्तव्य है जो मुझसे समझना चाहेगा उसे मैं जरूर समझाऊगी। भटके को शरण में आय को मार्ग दिखाना अपना काम है वह मैं न करू तो कौन करेगा—

सुणो म्हारा भाईडा रे
अपणो जग माही ओ हीज काम
समझ ने समझासा हे
निज देश दिखासा रे
लासा गुरा री सैन में हे॥[१०४]

ऐसे सब लोगों को गुरु चरणों में लाकर बैठाना और उन्हें गुरुकृपा स इस मार्ग में प्रवृत्त करना उसका धर्म है कर्म है उसके उपदेशों का मर्म है। फिर कहती है- निन्दकों से क्या डरना? जैसा कबीर ने कहा है—

निन्दक नियरे राखिये आगन कुटी छवाय।

"जो हमारी निन्दा करने वाले हैं हम उन्हें भी समझा देंगे। अपन प्रम के बल पर हम उनको अपना बना लेंगे यों निन्दकों को अपना बनाते बनाते हमारा कोई शत्रु ही नहीं रहेगा तब हमें सभी लोग अपने हितचिन्तक ही नजर आयेंगे—[१०५]

निंदक ने ई लेसा सुध"
अपणो बणासा हे
अपणो बेरी न दीसे कोय
सब रा सहणा है कुछ सुणना ने करणा रे।[१०६]

कोई कुछ भी कह दें तो उसे सुन लो वापिस जवाब मत दो या फिर सब सहन करते जावो न सुनो न कहो निंदक अपने आप थक कर तुम्हारी शरण में आयेगा। ससार में सब तरह के लोग हैं - पापी हैं तो पुण्यवान भी सज्जन हैं तो दुष्ट भी वीर हैं तो कायर भी। हमें पापी का पुण्यवान बनाना है उसे पुण्यवान् बनाकर अपने साथ रखना है किसी हालत में उसे जाने नहीं देना है—

पाप्या ने म्हारा भाईडा रे पुनवान कर लेवो सग माय।
जावण ना देवा हे साचो सेन लखावा हे॥[१०७]

क्यों कि हमे सत् के मार्ग पर चलने वालों की गुरु की सेना तैयार करनी है जग में पाप पुण्य होते रहते हैं जीवको अपना निज रूप बताकर उसे पार लगाना है उसे जन्म मरण के चक्र से मुक्ति दिलानी है उसे जब तक निजरूप निज पद की पहचान नहीं होगी तब तक वह भटकता रहेगा—

जग में पुन अर पाप जीव तिरासा हे निज रूप बतासा हे।

अगर हम थोडा सा भी किसी को प्रेरित कर पाये और उसका झुकाव हमारे भक्ति मार्ग की ओर हुआ उसके जीव को आत्मा को यों मुक्ति से वंचित नहीं रखेंगे—

हाथ में आयो हे आयो जीव अब खाली न जाय।
आये ने तिरावा हे जग सू पार लगावा हे।

महाराष्ट्र के प्रसिद्ध सन्त तुकाराम जो बहुत बाद में (१७वीं शती में) हुये, मानों रूपादे की ही विश्व-बन्धुत्व की भावना को अभिव्यक्त करते हुए से लगते हैं—

जगाच्या कल्याणा संताच्या विभूति देह कष्टविती उपकारे॥

रूपादे जिस मार्ग पर चली वह भक्ति का मार्ग है उसे वह सत् का मार्ग कहती है और बार बार यही कहती है सत् का मार्ग मत छोड। रूपादे के द्वारा दी गयी चेतावनियों की चर्चा पहले भी हुयी है जो भी इस मार्ग पर चले वह सच्चे मन से चलें असत्य अधर्म और बुराई तो उसके पास फटकनी ही नहीं चाहिये।

वह कहती है अरे तुम जब पैदा हुए थे तब भगती का कौल लेकर आये थे वह दिन तुम आज भूल गये—

गरभवास में कौल कर आयो थने औंधे मुख भगती कमाई।
वा दिन की सुधि भूल गयो रे नकट्या लाज नहीं आई रे॥[१०८]

और अब पचों में बैठकर सरे आम झूठ बोल रहे हो और बता रहे हो जैसे तुम कुछ जानते ही नहीं। साधु धरम करम छोड दिया दुनिया भर की बुराई अपने पल्ले बाध ली—

पचों में बैठ भाई झूठ मत बोल रे मत कर निंदरा पराई।
करम धरम तूने एक किया नाही अरे मत बाधे पल्ला ने बुराई रे॥[१०९]

इस कीचड में तुम नहीं फसते सत्रह ढोंग नहीं रचाते और सत् के मार्ग पर चलते तब कब के वैकुण्ठ पहुच गये होते खाली गेरूए कपडे पहनने से क्या हुआ भक्ति की भावना तो तुम्हारे मन में जागृत हुई नहीं तुम्हे क्या पता मुझे ऐसी बातों से कितनी पीडा होती रहती है जो सत् असत् का भेद नहीं जानते आपस में "स्वारथ" की छुरियां चलाते हैं यह मेरी व्यथा मैं किसे सुनाऊ—

हा रे वीरा किण ने केऊ रे भेद नहीं जाणे रे जी।

ए तो स्वारथ री छुरी चलावे किण ने केऊ रे॥[११०]

रूपादे की बेलमें मुख्य जो जागरण का प्रसग है वह आप पढ चुके हैं। वह बार-बार भक्तों से जमले में चलने का भजन गाने का भक्ति समर्पण का आग्रह करती है। लेकिन यह देखती है कि इसमें समर्पण भावना से कम लोग आते हैं दिखावटी या ढोंगी ही अधिक हैं। जागरण में पाट पर लम्बी लम्बी ज्योति लगाते हैं बाहर सब तरफ उजाला करते हैं किन्तु अपने मन का अंधेरा नहीं हटा पाते या हटाना ही नहीं चाहते—

ए तो लम्बी जोत लगावे रे
बाहर परकास उजालो नाहीं माही रे जी॥[१११]

तदूरे और मजीरे लेकर जोर जोर से भजन गाते रहते हैं गला फाड़-कर चिल्लाते रहते हैं नारियल और धूपमे की प्रसादी करते हैं। इनका भरमाया मन स्थिर नहीं होता अरे ये सब करने से क्या होगा अन्दर वाले भ्रम को हटाओ मन को ज्ञान से आलोकित करो तब तो सत संगति का लाभ वरना वृथा ही अपनी रात काली कर रहे हो—

ओ तो होडा होड सू गावे हो बाजे तदूर मजीरा गहरा रे।
या रो मायलो भ्रम नहीं जावे हो ए तो विरथा रात गमावे हो॥

फिर वह भक्तों को रामदेव का उदाहरण देकर कहती है कि भाई। जैसा विलक्षण कार्य उन्होंने कर दिखाया उसका अनुसरण करो जैसे बन सकते हो तभी पार लग सकते हैं और किसी को पार लगाने की बात तो बहुत दूर है।

ऐसे ढोंगी कपटी छल प्रपच रचने वाले जो लोग भक्तों की भीड में इकट्ठे होते हैं नुगरों का सघ बनाते हैं उससे रूपादे को कभी-कभी बडी उदासीनता का अनुभव होता है—

फूलों जैसो प्रेम हमेशा कोनी रहेला रे
झूठोडे री बात बटाऊ बीरो कहेला रे।[११२]

नीम के पेड को गुड से सीच दो तो वह मीठा तो नहीं बनेगा? कोयल को दूध से नहलाने पर भी वह काली की काली ही रहेगी कच्चे धागे को थोडा खींच लो टूट जायेगा। बरसाती नदिया कब सूख जाय क्या भरोसा। तब उसे ऐसा अहसास होने लगता है इनको बनाने में जरूर भगवान की भूल हो गई है क्योंकि साधु की कर्कशा स्त्री या सरसों की सुदरता को देखकर यही लगता है कि भगवान भी कभी कभी भूल कर लिया करते हैं—

साध रे घर सखणी हुल रे घर नार रे।
रोईडे ने रूप दीन्हो भूल गयो किरतार रे॥[११३]

रूपादे की वाणियों अथवा पदों में अभिव्यक्त भक्ति भावना को लेकर कभी किसी

को उसके सगुण उपासक होने की शका होना भी स्वाभाविक है जैसे गुरु के मार्गदर्शन में सम्पन्न होने वाले जागरणों / जमलों में जो गणेश आदि देवताओं को निमन्त्रण देने की परम्परा का रूपादे ने भी निर्वाह किया उसे लोकाचारमूलक ही मानना चाहिये। परन्तु अन्यत उपात सावरिया या गिरधर की पुकार अथवा हरि की विरह व्यथा से पीडित स्वरूप की भी इस दृष्टि से समीक्षा की जानी चाहिये कि कहीं वास्तव में सगुण रूप भी उसे रिझाता तो नहीं है?

उगमसी भाटी के सान्निध्य में आयोजित रात्रि जागरण से वापस लौटते हुए जब सामने मल्लीनाथ जी को वह देखती है तो असमजस में पड जाती है। तब वह गिरधर को पुकारती है—

एक घडी थू म्हारै सामैं झाक गिरधर म्हारा रे
अबला है आरोधै बेगो आव गिरधर म्हारा रे॥

और इस रचना में द्रौपदी की लाज तुमने कैसे रखी पाण्डवों को जलने से कैसे बचाया इसका गिरधर को स्मरण कराते हुए विनती करती है इस बार मुझे भी सहायता करो मेरी थाली में बाग लगा दो तब भगवान् भक्त की पुकार से द्रवित हो उठते हैं और रूपादे की थालो में बाग लगा ही देते हैं—

आयो रे आयो रूपादे री बेल
गिरधर म्हारा रे
सोने री थाली में बाग लगाविया॥[११४]

परन्तु सोने की थाली का बाग तो अशाश्वत है अनित्य है रूपादे उससे सन्तुष्ट नहीं होती वह अपने भावों की थाली में बाग लगाने के लिये सावरिया को पुकारती है—

म्हारी भाव री थाली में बाग लगाय दो भगवान्॥[११५]

इससे लगभग स्पष्ट हो जाता है यह शखचक्र पद्मधारी विष्णु या सुदर्शन चक्रधारी गिरधर की बात नहीं कही जा रही है क्योंकि रूपादे जिस हरि के वियोग में बावरी वैरागण बन जाती वह सावरिया ब्रह्माण्ड का पुरुष है उसका सैंया है परब्रह्म है अनन्त और सर्वत्र व्याप्त है इसीलिये उसकी प्रतीक्षा करते करते रूपादे "बावरी हो गयी है—

जोऊ जोऊ रे सावरिया थारी बाट
वैरागण हरि री बावरी रे नाव री।[११६]

परन्तु वह जानती है यों भले कितने ही वैरागी बनो "बावरे" बन जाओ विरहव्यथा सहे बिना तो हरि की प्राप्ति होने वाली नहीं है। वह अपने साथियों को कहती है मैं तुम्हारा भी हरि से मिलन करा दूगी लेकिन मेरी तरह तुम भी विरह व्यथा सहन करो

विरह के गीत गावो क्योंकि विरह में गीत गाने से उस व्यथा से तुम्हें मर्मान्तक वेदना होने पर वेदना से तुम्हारा हृदय शुद्ध होने पर तुम्हें भी हरि मिलेंगे—

गावो म्हारा भाईडा रे आपों विरह रा गीत
हरि मिल जावे है जिणसू हरि मिल जावे है।

रूपादे हरि के प्रेम की श्याम के प्रेम की दीवानी हो गयी है। उसका जग से क्या लेना देना वह श्याममय है और श्याम उसे मिल गये है और जगत्, कोई उससे अलग थोडे हो है मैं श्याममय हो गयी तो सारे ससार में व्याप्त हो गई—

साचो प्रेम म्हारो स्याम सू जगसू किसडो हेत
जग म्हासू अलगो नही मैं हू जग रे माय।

और जिसका श्याम से प्रेम हो जाय जिसे श्याम मिल जाय उसे पर्दे की क्या जरूरत जो श्याममय हो गयी उसे कहा तक बाध दोगे। ससार मुझसे अलग नही मैं ससार से अलग नहीं मुझे किसी का भय नही पर्दे में वे रहें जिन्हें डर है—

पडदे में वे रेवसी जिहिं जग रो डर होय।

हरि गिरधर सावरिया या श्याम जिससे मिलने के लिये वर्षों युगों तक प्रतीक्षा करनी पडती है जिसके विरह में आप तडप तडप जाते हैं इस तडप या व्यथा के गीत बनते हैं और जिसकी प्रतीक्षा करते करते आप बैरागी हो जाते हैं बावरे हो जाते हैं जो सर्वत्र व्याप्त है और जिससे मिलने पर आप भी ससार की सारी वस्तुओं/व्यक्तियों में व्याप्त हो जाते हैं वह गिरधर या हरि आज तक क्या किसी पार्थिव रूप तक सीमित रह सका है जिससे मिलकर कोई व्यक्ति उसकी तरह घट घट में व्याप्त हो जाय। इसलिये रूपादे के हरि या सावरिया में आप भले ही सगुण रूप के दर्शन कर लें कम से कम उसे तो यह रूप अभिप्रेत नहीं है। यदि सही दृष्टि से इनको देखें तो आपको सहज ही स्पष्ट होगा कि रूपादे के सावरिया या हरि कबीर के गोविन्द या हरि से कतई भिन्न नहो है। वह सगुण से निर्गुण से भी अतीत है निरजन है यही वेदान्त का परब्रह्म है साख्यानुयायियों का पुरुष है योगियों का ब्रह्माण्ड के गगन शिखर पर स्थित ब्रह्माण्डपुरुष है यही वह तत्व है जिसके वर्णन में बहुत शास्त्र बनाये गये अनेक दर्शनों का विकास हुआ फिर भी उसका वर्णन नेति नेति इस तरह का नही वैसा नही इसी प्रकार से करना पडता है। यही वह तत्व है जो सबमें व्याप्त है परन्तु मिलता उसी को है जो स्वय उसमें मिल जाता है।

दर असल रूपादे के पदों अथवा रचनाओं की विगत पृष्ठों में की गयी चर्चा से ऐसा प्रतीत होने लगता है कि रूपादे पर नाथ गुरुओं अथवा उनकी परम्परा के जो सस्कार थे उनसे वह सर्वथा मुक्त नही हो पायी है और इसका एक कारण यह भी सम्भव है कि मारवाड में तत्कालीन धार्मिक परिवेश में जैसा हमने देखा है सर्वत्र नाथों का ही बोलबाला रहा है इसलिये तो कभी वह यहा तक अनुभव करती है कि ब्रह्माण्ड

पुरुष के गले में सोने के तार में लटकी हुई वह सेली है[११८] तो दूसरी ओर निराकार निर्गुण परब्रह्म को उपास्य मानकर स्वय का उससे अद्वैत भाव स्थापन करना चाहती है। कभी वह जीव परमात्मा की एकता का अनुभव कर स्वय को सारे ससार में व्याप्त रूप में देखती है तो कभी स्वय उसकी प्रतीक्षा में खडी खडी न जाने कितने युग बिता देती है। वह परब्रह्म उसका सैंया है उसका आलम है उसका प्रियतम है अब उसका नामकरण वह कुछ भी कर दे श्याम गिरधर हरि या सावरिया।

एकेश्वरवाद को वह पुरजोर शब्दों में स्वीकारती है और कहती है कि सारे ब्रह्माण्ड में तुम घूम आओ उसके अलावा तुम्हें कोई नजर नहीं आयेगा आत्म परमात्म की चिरन्तन एकता और गुरु की महिमा का वह खुलकर बखान करती है किन्तु उसका गुरु पद केवल मार्ग दर्शक तक सीमित नहीं है। वह उसी में उस ब्रह्माण्ड पुरुष का दर्शन करती है, नाथों की तरह ही वह मनुष्य की स्थूल प्रवृत्तियों को अन्तर्मुखी बनाना चाहती है।

परन्तु एक नाथ की दृष्टि में और रूपादे की दृष्टि में मूलत एक महत्वपूर्ण अतर है रूपादे का समर्पण भाव केवल गुरु तक ही सीमित नहीं है असल में उसका समर्पण इस ससार रूपी "कमठाणा" के आश्चर्यकारक कारीगर सृष्टिकारक शक्ति के प्रति है। उसकी दृष्टि में गुरु योग के बल पर पिण्ड में सहस्रार चक्र का भेदन कर गगनशिखरस्थ पुरुष की अनुभूति तक पहुचाने वाला नहीं बल्कि ससार के लाखों लोगों का कल्याण करने वाला होता है यह काम एक नाथ योगी कभी भी नहीं कर सकता है।

उसका समर्पण भाव और निराकार सर्वत्र व्याप्त अनन्त ईश्वर के प्रति भक्ति भावना उसे नाथों सिद्धों और योगियों से एक दम दूर लाकर खडा कर देती है। तब ही तो वह प्रेम को भक्ति का आधार मानती है। उसका प्रेम अमर है क्योंकि वह श्याम या सावरिया से है वही उसका सैंया है और वह उसकी पुजारिन न जाने उसके स्वागत में क्या क्या तैयारिया कर कभी उत्तर में खडी होती है तो कभी पश्चिम में खडी होकर उसकी बाटडी जोरती है।

भक्ति में ढोंग किस काम का? भगवे कपडे पहनकर रात रात जागरण में लम्बी ज्योति लगाने वाले तम्बूरे और मजीरे पर जोर जोर से भजन गाने वाले और चूरमे की प्रसादी पाकर भगवान् को प्रसन्न हुआ मानने वाले ढोंगी साधुओं की उसने खूब भर्त्सना की है कहती है उनका मन शुद्ध नहीं है मन को शुद्ध करने के लिये सयम चाहिये और बाह्यप्रवृत्तियों को अन्तर्मुखी बनाये बिना मन का विकृति रहित होना सर्वथा सम्भव नहीं है। मन के साथ काया की शुद्धता भी चाहिये और काया के शोधन के लिये उसे पवित्र रखने के लिये हमारे में नैतिक जागरूकता और उसके प्रति निष्ठा के बारे में कुछ अधिक कहने की जरूरत भी नहीं।

यों तो नैतिक बोध लगभग सभी सन्तों का प्रतिपाद्य है योगियों के लिये तो वह परम आवश्यक है अन्यथा उनका पिण्डपात होता है परन्तु उस नैतिक बोध का प्रारभ

रूपादे चाहती है हर आदमी अपने घर से करे। इसलिये खास कर अपने स्वामी को ही उसने इस विषय में विशेष उपदेश किया है पराई नारी को अपनी बहन समझो बेटी समझो उसे बेन कह कर बुलावो। जो लोग स्वार्थ मे अन्धे होकर आपस में छुरिया चलाते हैं उससे रूपादे को होने वाली वेदना अपार है अनन्त है।

वेद और स्मृति विरोधी बहुसख्यक जनता के नाथों की ओर झुकाव की चर्चा हम पहले कर आये हैं साथ में यह भी कटु सत्य निवेदन करना चाहते हैं कि नाथों का योग सर्वसामान्य के लिये सुलभ नहीं था इस बात का अनुभव निश्चय ही रूपादे ने ही कबीर से पहले किया था। इसलिये उसने इन लोगों मे भक्ति की ओर रुझान पैदा करने का प्रयास किया और उन्हें सत् के मार्ग पर चलने के लिये प्रेरित किया और वह भी प्रेम से स्नेह से। उन्हें बार-बार वह याद दिलाना चाहती है कि तुम "भगती" का कौल कर आये थे लेकिन उसे अब भूल गये हो। तुम्हारी भक्ति और समर्पण तुम्हें भगवान तक पहुचा देंगे उसी से तुम्हारे कर्मों का नाश होगा बार-बार जन्म लेने का चक्कर मिट जाएगा इस दुस्तर भवसागर को उसी की कृपा से पार कर सकोगे।

उसके मन में किसी भी व्यक्ति के लिये कोई पक्षपात नहीं सभी उसके अपने हैं उसका सभी में समभाव है, जो व्यक्ति जागरण में चलना चाहता है उसे ले जाना पथप्रदर्शन करना उसका काम है। वह कहती है यह तो मेरा काम है और लोगों से भी यह अपेक्षा करती है कि किसी भी प्रकार का सकोच या सशय मन में मत रखो। अमीर गरीब उच्च-नीच शासक-शासित सभी बराबर हैं। रूपादे का आग्रह है कि समता के समद में मन को धो लो तुम्हें सब अपने लगने लगेंगे। समता समुद्र में मन धोने से वह शुद्ध-बुद्ध सशय रहित होगा और उसका कारण भी है कि सभी जीव उसी एक ही परमात्मा के अश हैं जिसने इस सृष्टि की रचना की है किन्तु मनुष्य के मन का आवरण उसे इस बात का ज्ञान नहीं होने देता कि उसमें और अन्य व्यक्तियों में कोई भेद है। मन का आवरण हटेगा तभी वृत्तिया अन्तर्मुखी होने लगेंगी मन का शुद्धीकरण होना शुरू होगा।

जिसका मन शुद्ध हुआ जिसकी अन्तर्दृष्टि शुद्ध हुई उसके लिये पर्दे की क्या जरूरत है। शुद्ध दृष्टि और शुद्ध मन वाली औरत सिंह सुता हो जाती है ससार उसका कुछ भी नहीं बिगाड सकेगा। परन्तु नारी के सम्बन्ध में उसने एक बात बहुत स्पष्ट रूप से कही है कि उसका समर्पण पहले उसके पति के चरणों में होना चाहिये। उसकी मान्यता है कि "सरजनहार" भी पति समर्पण के बिना प्रसन्न नहीं होगा और यह समर्पण निश्चय ही मानसिक है क्योंकि रूपादे पति पत्नी में आत्मा के दाम्पत्य भाव का अनुभव करती है और इसीलिये वह यहा तक कह गयी कि स्त्री पुरुष में पति पत्नी में कोई भेद नहीं है। उनकी आत्मा का दाम्पत्य भाव अमर रहता है आवश्यकता होती है अपनी अन्तर्दृष्टि से उसे खोजने की उसका अनुभव करने की।

सुख और दुख में मन को स्थिर रखकर वह स्वय अपने लिये मोक्ष नहीं चाहती केवल स्वय की जीवन्मुक्ति की वह अभिलाषिणी नहीं है वह सारे ससार को मुक्ति दिलाना चाहती है यहा रहने वाले या तो उसके भाई हैं या बच्चे हैं या पिता समान हैं। वह अपने निंदकों को सुधारना चाहती है इसलिए सब कुछ सहन करती रही है उसे तमाम पापियों को पुण्यवान् बनाना है हर जीव को पाप पुण्य के बीच उसके स्वरूप की निज पद की पहचान करानी है। सारे ससार का कल्याण करने के लिये वह समर्पित है कृत सकल्प है कटिबद्ध है।

नाथों की दुष्कर योग साधना में प्रवृत्त होने वाले और "अकाल सन्यासियों की सख्या में वृद्धि करने वाले बहुसख्य लोग जब स्वय को उस साधना के लिये असमर्थ पाने लगे ऐसे समय में रूपादे ने उनका भक्ति की ओर रुझान करने का प्रयास प्रारभ किया उन्हें नुगरा से सुगरा बनाना शुरू किया। उन्हें जन्म मरण का भय दिखाकर सत् के मार्ग पर चलने के लिये प्रेरित किया। उन्हें बार बार स्मरण कराया वे एक ही परमात्मा के अश हैं इसलिये सभी समान हैं चाहे वह किसी जाति का हो किसी पेशे का हो चाहे वह स्त्री हो या पुरुष हो भगवान् के दरबार में सब समान हैं। समाज के अधिकाधिक लोगों को उसने इस मार्ग पर चलने के लिये प्रेरित किया उनमें भक्ति और प्रेम की ज्योति जलाकर। समर्पण और भक्ति के बल पर उसने कहा कोई भी व्यक्ति "जीवन्मुक्ति पा सकता है उसके लिये और किसी ज्ञान की नहीं स्वय को जानने की जरूरत है अपने स्वरूप को पहचानो। उसने पर्याय से सारे ससार का हित करना चाहा है उन्हें अलख के पद तक पहुचाना चाहा है जो भी उसे मिल गया वह उसका अनुयायी होता गया जो जो वर्ण विरोधी थे जो आश्रम विरोधी थे उसके समर्थक हो गये। शास्त्र और सनातन हिन्दू धर्म ने जिन उपेक्षित तिरस्कृत दलित और शोषित समाज का स्वीकार नहीं किया उस वर्ग को रूपादे ने अपने गले लगाया वह उनमें घुल मिल क्या गयी वह उनकी हो गयी। उसने स्वय के मोक्ष या मुक्ति की उतनी परवाह नहीं की जितनी हजारों लाखों लोगों के उद्धार की। योगी केवल अपना उद्धार करता है सन्त लाखों लोगों का जीवन सुधार कर समाज को शुद्ध विवेकशाली नीतिमान्, सुजन और सहृदय बनाता है। इसीलिय "रूपादे रूपादे से सन्त रूपादे" हो गयी।

आज जिन क्षणों में रूपाद पर विचार करने का हमें सुअवसर मिला है उस समय को देखते हुये रुपादे के आदर्शों का अनुकरण हमारे लिये और अधिक महत्त्वपूर्ण हो गया है। समाज के शोषित और दलित और पिछडे वर्ग के उद्धार के लिये मात्र आरक्षण कर सन्तुष्ट होने की शासक-वर्ग की प्रवृत्ति के लिय रूपादे चुनौती है। वह मारवाड की स्वामिनी थी मल्लीनाथ स्वामी थे। लेकिन सत्ता और भोग को छोडकर उन्होंने दलित उद्धार का जो आदर्श प्रस्तुत किया क्या वह हमारे लिये अनुकरणीय नहीं है ? इसीलिये रूपादे के गुरु उगमसी भाटी कह गये हैं—

जिण करणी मालो रूपादे सीझा।
ओ पथ थे हलावो म्हारा भाइडा॥ [१११]

सन्दर्भ

१ ऋग्वेद १ /१२९
२ वही १/१६४
३ द्विवेदी ग्रन्थावली भाग ४ पृ २०९
४ वही पृ २ ७
५. नाथ और सन्त साहित्य पृ ५१
६. द्विवेदी ग्रथावली पृ २०६
७ रिपोर्ट मर्दुमशुमारी राज मारवाड पृ २४१ ४६
८. वही पृ २४६ ४८
९ वही पृ २४८ ५१
१० वही पृ २५२
११ वही पृ. २५३
१२ कास्ट्स एण्ड ट्राइब्स आफ राजस्थान, पृ ५८
१३ परि २/१७
१४ परि २/१३/५७
१५. परि २/१२/६७
१६. मरुभारती जुलाई १९८० पृ ५४-५६
१७ चारण साहित्य का इतिहास पृ २६
१८ वही पृ ५६
१९. मरुभारती जन. ६४ मेघवालों के मृत्युगीत
२ परि १/३६
२१ वही २/१७
२२ माधव ग्रन्थावली पृ १५ १७ २३
२३ कास्ट्स एण्ड ट्राइब्स आफ राजस्थान, पृ. ५६
२४ नाथ और सन्त साहित्य, पृ २
२५. वही पृ ४ ५
२६ ि्वेदी ग्रथावली पृ २२३
२७ नाथ और सन्त साहित्य पृ २७५
२८. द्विवेदी ग्रथावली पृ २४६
२९ नाथ और सन्त साहित्य पृ ३९ ९९
३० द्विवेदी ग्रथावली पृ २२९
३१ वही पृ २३०
३२ वही पृ. २१७
३३ वही पृ २२१
३४ नाथ और सन्त साहित्य, पृ ३१५
३५. द्विवेदी ग्रथावली पृ २३९
३६. नाथ और सन्त साहित्य, पृ २६९
३७ वही पृ ३ ६
३८ वहा पृ ३४१
३९ वही पृ ३४३ ४४
४ वही पृ १९९ २००
४१ वही पृ २०१
४२ वही पृ २०६ २०७
४३ नाथसिद्धों की बानिया दे. पृथ्वीनाथ
४४ परि २/१८/१८
४५ वही १/२४
४६ वही २/१८/२५
४७ वही २/१२/टेर
४८ वही २/१८/२
४९ वह. २/१८/२३
५० वही २/१२/११
५१ वही २/१३/४३
५२ वही २/१२/५२ १४/७०
५३ वही २/१४/९७
५४ वही २/१२/२
५५. वही २/१३/५८
५६. वही २/११ (उगमसी कृत)
५७ वही २/२
५८ ि्वेदी ग्रथावली पृ ३५६ ३५८

५९ परि १/२/१

६० वही, १/१/१

६१ वही १/१/४

६२ वही १/३/१

६३ परि १/९/२

६४ वही, १/४/१

६५ वही १/१६/१ २

६६ वही १/१६/३ ४

६७ वही, १/१६/५

६८ वही, १/२१/१

६९ वही, १/२१/४

७ वही, १/२१/३

७१ वही १/२१/५

७२ वही, १/२५/१-५

७३ वही १/७/१

७४ वही, १/७/२

७५ वही, १/७/३ ४

७६ वही, १/१३/३

७७ वही, १/१३/४

७८ वही १/१३/४-५

७९ वही, १/३०/३

८ वही, १/१४/१

८१ वही, १/१४/३

८२ वही, १/१४/३

८३ वही, १/१४/४-५

८४ वही १/१०/२ ३

८५ वही, २/१३/४८

६ वही, १/११/१

७ परि १/११/२

८ वही, १/१ /४

९ वही, १/५/४

९० वही १/९/५

९१ वही १/९/४

९२ वही, १/१९/१

९३ वही १/१९/३

९४ वही १/१७/५

९५ वही १/१९/२

९६ वही १/६/२ ३

९७ वही, १/६/१

९८ वही १/२४/१

९९ वही १/१८

१ ० वही १/१५/१

१०१ वही १/१५/१

१०२ वही १/१५

१०३ वही १/१२

१०४ वही, १/१७

१०५ वही १/१७

१ ६ वही १/२८

१ ७ वही १/१७

१ ८ वही, १/२७

१ ९ वही, १/२७

११० वही, १/२

१११ परि २/१

११२ वही १/२९

११३ वही १/२९

११४ वही, १/२३

११५ वही १/२१

११६ वही, १/२६

११७ द्विवेदी ग्रंथावली पृ. २६६

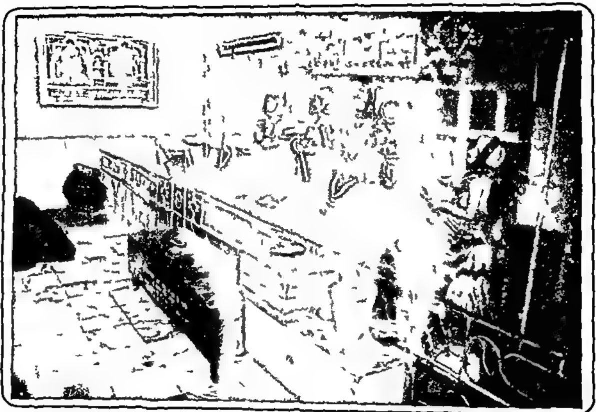
११८ परि १/२९

११९ वही २/११

◆◆◆



रूपादे का पाळया तिलवाड़ा



जसल तारल का समाधि समीप म मल्लीनाथ रूपादे और जेसल तोरल की मूर्तिया अजार (कच्छ भुज)

परिशिष्ट - १
(रूपादे की रचनाए)

(१)

सिमरू देवी सगत सारदा गुणपत लागू पाव गजानद देवा हे जी ॥
सतगुरु आया पावणा अरमर बरसे मेव हीरा जल लागा हे जी_॥

हे ऊडा जल री माछली रे मुख में बालु रेत
अथग जल भरिया हे जी_॥ सतगुरु आया पावणा_

बैठो कालु कीर जल में जाकी जाल हिमाजल
हाल्या हो जी_। सतगुरु आया पावणा_

आमी सामी मदर मालिया बिच में तरबीणी
बालो घाट मालिक थारे सरणे हो_जी ॥
सतगुरु आया पावणा।

गोळी लगाई गुरु ग्यान री रे कायर भाग जाय
सूरा नर हठमा आवे हो_ जी सतगुरु आया पावणा_।
राणी रूपा री विणती गावो नी माजल रेण।
जमा में हालो हो_ जी ॥

सौजन्य रेखा सोनार्थी,
भारतीय लोक कला मडल उदयपुर

(२)

हालो ये नगर री सथा गुरु बदावो हाला गुरा ने वदावा माणक मोतिया
प्रेम रा निसाण वण वाप्या मारो सैया आलम जी आया है प्यारा पामणा ॥हालो_

पहला जुगा में प्रलाद आया राणी ये रतनादे काकड बाधिया ॥हालो-
दूजा जुगा में राजा हरिचद आया राणी तारादे काकड बाधिया ॥हालो-
तीजा जुगा में राणा जठल आया राणी द्रोपदी काकड बाधिया ॥हालो-
चौथा जुगा में राजा बलीचद आया राणी ये सज्या दे काकड बाधिया ॥हालो-
चारों जुगारा मगल राणी रूपा गाया
मोंचा हरता नावा बारबार॥

सौजन्य रेखा सोनार्थी,
भारतीय लोक कला मडल उदयपुर

(३)

देवरा में देव मकाजी अल्ला जुवाला में साई
खडक सम्ब भाई आप विराजे
राम जहा देखू साई जागो म्हारा जूनी कला रा साई
भाड पडी भगता रे हेले भीड पडीया सादा रे॥
हेले आवो सपट मेहवे साई, म्हारा जूनी कला रा साई।
भड ठठ मालजी कोपीया कठे गिया ओ रूपा राई॥
बागा में गई राणा फूलडा लो भाई फुलडा वो चुन चुन लाई॥
जागो म्हारा जूनी कला रा साई॥
पेलोडो बाग दुदाजी रे मेडते दूजो मडोवर माई है।
तीजोडो बाग वासगजी री बाडीया
चौथो मेवा में नहीं जागो मारा जूनी कला रा साई॥
झुठाली राणी झूठ मत बोल रावळ बोले ये काई।
एक धारू वटे जमो जगायो देखीया जमा रे माई।
जागो म्हारा जूनी कला रा साई॥
माला री अणी से सालू खीचीयो फूल बिखर गया ताई।
नाक फोड नात माल दे ढाल बदूक चरणा में मेलीया
पावा तो आ लगाया ताइ जागो म्हारा जूनी कला रा साई॥
नाक फोड राणी नथ जो घाल दे खो (सो) चौया करो जग रे भाई।
म्हारा जूनी कला रा साई॥
आगे सत अनेक उबारीया एक माल रो कोई दोई

कर जोडो राणी रूपादे बोले सत अमरापुर ताई।
जागो म्हारा जूनी कला रा साई॥

(४)

सतगुरू मारी नाव हा रे धिन गुरु म्हारी नाव
भरोसे आपरे हालो हो_ सतगुरु म्हारी नाव॥

पहला जुगा में पैलाद आया लारे रतना दे नार
राम रे लारे रतना दे नार।

राणी रतनादे नेम झेलिया राम रे
पाच करोड वारा लार भरोस आपरे_॥

दूजा जुगा में हरीचद आया
लारे तारा दे नार राम रे लारे तारादे नार।

राणी तारादे नेम झेलिया
सात करोड वारी लार राम रे सात करोड वारी लार।
भरोसे आपरे_ _॥

तीजा जुगा में जेठलु आया
लारे दोपदा नार रामरे लारे दरोपदा नार।

राणी दरोपदा नेम झेलिया नौ करोड वारी लार
राम रे नौ करोड वारी लार। भरोसे आपरे _ _॥

चौथा जुगा में बलीचद आया
लारे सजादे नार रामरे लारे सजादे नार॥

राणी सजादे नेम झेलिया बारा करोड वारी लार।
राम रे बारा करोड वारी लार॥ भरोसे आपरे_ _ ।

पाचा हाता नवाबखा
बोलियो रूपादे नार।
राम रे लारे रूपादे नार।

राणी रूपादे नेम झेलिया
तेंतीस करोड वारी लार राम रे तेंतीस करोड वारी लार॥
भरोसे आपरे _ _ ॥

सौजन्य रेखा सोनार्थी,
भा लोकमडल उदयपुर

बोली ए रूपाँ रे बाई उगमजी री चेली ए।
गुरा रे परताप सूआ अमरापुर में खेली ए॥

सौजन्य   प श्रीवल्लभ घोष,
सुगध गली ब्रह्मपुरी जोधपुर

(७)

अब घर आवो म्हारा हीरा रा बोपारी
ओ अब घर आवो।
अब घर आवो म्हारा लाखा रा बोपारी
ओ ऊबोडी जोऊ थारी बाटडी॥

गाय दुवाड़ू थारे चालरी ओ बोपारी
दुधा धोवाड़ुली पाव रे॥
अब घर _॥

भैंस दुवाड़ू थारे मूरडी ओ बोपारी
माय गुडली रदाहुली खीर रे॥ अब घर_।

चावल रदाड़ू थारे ऊजला ओ बोपारी
माय मसुरीया खाड रे ॥ अब घर_।

लापसी रदाडु थारे सोलमी ओ बोपारी
माय लिलरीया नारेल रे॥ अब घर_।

पोली पोवाड़ू थारे पातली बोपारी ओ
हरीया मूगा री दाल रे॥ अब घर_।

ऊचा रलाऊ थारा बैठणा बोपारी ओ
तेवन तीस बतीस। अब घर_ _ ।

तुलसा रे कीया रे राणी रूपा देव बोटी रे
माटी ने उगमजी री चेली रे॥
अब घर आवो म्हारा हीरा रा बोपारी_।

सौजन्य   रेखा सोनार्थी,
भालोकमडल उदयपुर

(८)

सेवो ले सुडालो रामा गुणपति देव। सेवो ले सुडालो हो जी रे॥
माता रे कहीये जेना पारवती पिता सकर देव। सेवो ले_

ध्रव ने सिंदूर तमने सेवा चढे
कठे फूल के रो माला॥ सेवो ले_

केडे रे कटारी बाकडी
हायमा त्रिसूल फरसी वालो॥ सेवो ले_

कान मा कुडल एने जगमगे
माथे मुगट मोतोवालो॥ सेवो ले_

कहे रे रूपादे सुनो भव गगा
तमे प्रथम पाटे पधारो॥ सेवो ले_

सौजन्य वीरसिंह हरिसिंह चौहान 'गिरिराज'
४५ दिग्विजय प्लॉट जामनगर

(९)

अे जी रावल माला ! आदल खोजो तो माइलाने आणजो हो रे हो जी।
अे जी रावल माला ! ग्यान रे हीणा वाकु गुरु नव करना
अे जी सुरती वीना कैसा चेला हो! रावल माला॥
अे जी रावल माला ! कोई दीन दाता ने कोई दीन भीवा हो रे
अे जी कोई दीन बालुडा ने वैसे रो! रावल माला॥
अे जी रावल माला ! पारकी वस्तु मागी नह लेना रे।
अे जी अरथ सरे तो पाछी देना हो! रावल माला॥
अे जी रावल माला ! भखर नारी रे वाको सग नव करना।
अे जी ताकु हाथ जोडी ने दूर रहेना। हो रावल माला।
अे जी रावल माला ! पराई बेटी को जननी करी जाणना।
ताकू बेनी रे कहीने बुलावना हो! रावल माला॥
अे जी रावल माला ! गुरुने प्रताप सती रूपादे बोलीया।
अे जी अे तो बोल्या छे अगम जुगनी वाणी रे॥ हो रावल माला_।

सौजन्य भुरभा जीवनसिंह राठौड़
जामनगर

वाणी रूपादे जी की

(१०)

बात करे परब्रह्म री पैंड देय एक नाय।
रूपा कहे रे भाइयों किण विध स्याम मिलाय॥

सुख में ब्रह्मग्यानी रहे दुख में देवे रोय।
बाई रूपा यों कहे भलो कदेई न होय॥

दुख ने दुख समझे नही सुख सू हरख न होय।
रूपा कहे ससय नही जीवत मुक्ति जोय॥

सतसगी सीधा बजे और मन जो उलटो होय।
औरों रे एक जूत है वारे पडसी दोय॥

धीमा चाले हस ज्यू, कहे कोकिल ज्यू बैण।
काग भ्रसटपण ना करें सीतल ज्यारा नैण॥

आप तो सुधरया क्या भला लाखों दिया सुधार।
कहे रूपा उण सतरो मैं सेवक बारबार॥

मानपदसग्रह भाग ३, पृ १०५

(११)

रूपा कहे रे भाइयों ओ रूप रुले ज्यों काव।
रूप लोभ में मत रुलो ढूढो साहब साच॥
पडदे में वे रेवसी जिहि जग रो डर होय।
सिंह सुता चवडे फिरे काल न खावे कोय॥
सिंहणी बधी जो ना बधे बाधे किता दिन रहेत।
साचो प्रेम म्हारे स्याम सू, जग सू किसडो हेत॥
जग म्हासू अलगो नही मैं हू जग रे माय।
फिर पडदो किण बात रो ओ अचरज मन आय॥
मन में तो पडदो नहीं अग पर पडदो होय।
रूपा कहे रे भाइयों ओ गुण ता करे न कोय॥

मानपदसग्रह भाग ३ पृ १०६

(१२)

कहे रूपा हो मालजी मन में धारो धीर।
आप धणी सिर ऊमरे और सन बाप ने बीर॥
एक तुम हो करतार हो एक है सरजनहार।
दोया ने कर जोडवू कर दीजो भव पार॥
दीन बधु परमेस सो था बिन राजी न होय।
इण सू मैं अरजी करू थासू इदू न कोय॥
रूपा सत सू बीणवे सत राखो जग माय।
सत सू आगे ई ऊबरिया फिर ऊबरे पल माय॥

मानपद्‌संग्रह भाग ३ पृ १०६

(१३)

हा रे वीरा नर नारी माय एक है हो जी
कोई दूजा मत जाणो ॥ नर नारी.. ॥टेर॥

हा रे वीरा सत रे मारग कोई हालिया हो जी जिके जाणे पियाणो।
कायर काम नहीं जाणसी हो जी भूला ही भरमाणो॥

हा रे वीरा जिण कारीगर जगत घडयो हो जी जिण रो अजब कमठाणौ।
सोई बिराजे सबरे बीच में होजी देखो अधर ठहराणो॥

हा रे वीरा सगलो ब्रह्मड फिर देख लो हो जी दूजो कोई निजर नी आणो।
जिण पायो जिण पावियो हो जी सूतो नीद जगाणो॥

हा रे वीरा मेलो रेवे पण नहीं मिले हो जी
जो कोई मिले सो उण में मिले हो जी आप कहीं आणों ना जाणों॥

हा रे वीरा गुरु उगमसीजी भेंटिया हो जी उलझ्यों ही सुलझाणो।
बाई रूपादे री बीनती हो जी ओ ही साचो परियाणो॥

मानपन्‌सग्रह भाग ३ पृ १०६

(१४)

हा रे वीरा जाल सभी यह आपरो हो जी दोस कवन को दीजे।
आप समझ लेवे आपने हो जी मन मायलो पतीजे॥

हा रे वीरा अपणो खुसीसे दीन भयो हो जी नाना प्रपच रचाया।

मन मायलो मान्यो नही होजी फिर फिर गोता खाया।

हा रे वीरा समय सेरी है साक्डी होजी जिण में दोय नहीं मावे।
एक रोय जद चालसी होजी दोय रया अलुझावे॥

हा रे वीरा अपनी इच्छा से अनत भयो होजी नाना करम कर लीना।
खेल रच्या इच्छा मायने होजी अखिल ब्रहाड रच दीना॥

हा रे वीरा आप हिरण आप पारधी होजी आप ही जाल बिछाया।
है तो आप दूजा करे होजी खेल विकट यह पाया॥

हा रे वीरा गुरु रे उगमसी जी भेंटिया होजी जाल निजर जद आया।
बाई रूपा ओलख्यो आपने होजी जाल सभी निमटाया॥

- मानपदसग्रह, भाग ३ पृ १०७

(१५)

जी रे वीरा सगत करी साचे सत री हो जी
म्हाने साच बताया।

सगत करी साचे सत री हो जी॥टेर॥
जी रे वीरा समझ्या नही बड बड बक्या हो जी

सबद क्या मन आया।
समझ गया जद चुप होया हो जी
चरणा में सीस नवाया॥

जी रे वीरा सग ही मोती निपजे हो जी
समदा सीप रलाया।
स्वाति बूद रो सग कियो हो जी
मूगे मोल बिकाया॥

जी रे वीरा मन मुडदा ममता मरी हो जी
आसा री सीर सुकाया।
घट में उजाला हुय रया हो जी
चहु दिस सूर उगाया॥

जी रे वीरा समता समद में मनडो धोवियो हो जी
सबद मसाला लगाया।
मन धुप करम सब गल गया हो जी
दूजा निजर नहीं आया॥

जी रे वीरा गुरु रे उगमसीजी भेटिया रा जी
मायते रे माय जगाया॥
केवे रूपा माय जागिया हाजी
आवण जावण मिटाया॥

मानपदसग्रह भाग ३ पृ १०७ १०८

(१६)

जी रे वीरा ज्यारे मन में विरह नहीं हो जी
ज्यारो धूड़ सो जीणो।
ज्यारे मन में विरह नहीं होजी ॥टेर॥

जी रे वीरा ऊमर भेख सुहामणो होजी
गेरू सू रग लीनो।
आप अगन में जलियो नही हो जी
होय रयो मति हीणो॥

जी रे वीरा विरह सहित साधु होया हो जी
जिका सिर धर दीनो।
मरणे सू डरिया नहीं हो जी
मग में मारग कीनो॥

जी रे वीरा विरह होय भारत लड़या होजी
पाछा पग नहीं दीना
मतवाला झूमे मद भरिया हो जी
रग भर प्याला पीणा।

जी रे वीरा गुरु उगमसी साधु मिल्या हा जी
जिका मन कीया सीण।
बाई रूपारी वीनती हो जी
परगट निज पद चीणा॥

मानपदसग्रह भाग ३ पृ १०८

(१७

सुणो म्हारा भाइडा रे अपणो जग माही ओ हीज काम।
समझ ने समझासा हे निज देस दिखासा रे।
लासा गुरा री सैन माही हे हा ॥टर॥

चालो म्हारा भाइडा रे आपा सतरे जुमले माय।
जागने जगासा हे आसी ज्याने मारग ले जासा हे॥

सुणो म्हारा भाइडा रे निंदक ने ई लेसा सुधार।
अपणो वणासा हे अपणो माय रलासा हे॥

जग में म्हारा भाइडा रे अपणे बैरी न दीसे कोय।
सब रा सहणा हे कुछ सुणना ने कहणा हे॥

पाप्या ने म्हारा भाइडा रे पुनवान कर लेवो सग माय।
जावण ना देवा हे साची सैन लखावा हे॥

किसो म्हारा भाइडा रे जग में पुन और पाप।
जीव तिरासा हे निज रूप बतासा हे॥

हाथ में आयो हे भायो जीव अब खाली न जाय।
आये ने तिरावा हे जग सू पार लगावा हे॥

गुरुजी उगमसी हे मिल्या म्हाने मगडे रे माय।
ओ काम सिखायो हे निज देस दिखायो हे॥

बोलिया रूपादे हे मालजी रे घर री नार।
मन माही म्होरे हे जग ने पार उतारे हे॥

मानपदसग्रह भाग ३ पृ १०८ १०९

(१८)

थै मानो म्हारा भाइडा रे समझने चालो म्हारा लाल
भव दुख भागे रे थारा भव दुख भागे रे।
मिलाऊ सुदर स्यामसू रे हा ॥टेर॥

चालो म्हारा भाइडा रे आपा सत रे जुमले माय।
मिलने गास्या हे उठे मिलने गास्या हे॥

तीनू दुख मेटा रे चालो आपा गुरा रे दरबार।
मन ने समझास्या हे मायले ने समझास्या हे॥

भाया नुगरा मत रहीजो रे रहीजो गुरारा सपूत।
कपूत पणो त्यागो रे कपूत पणो त्यागो रे॥

नुगुरा पुरुसा रा रे भाई तज दीजो सग।
थाने कठ लगावे हे थाने कठ लगावे हे॥

गावो म्हारा भाइडा रे आपां विरह रा गीत।
हरि मिल जावे हे जिण सू हरि मिल जावे हे॥
केवे यू रूपादे रे थाने सत रा बेण।
बेण म्हारा सुणजो हे भव पैला तिरजो हे॥

मानपदसग्रह भाग ३ पृ १०९

(१९)

रावल माल हुय जाव साध सुधारो थारी काया हो जी।
थाने बार बार समझाऊ म्हारा थोरी कथा।
हुय जावो साध झीणोडे मारग चालो हो जी ॥टेर॥
मालजी ओ ससार अथग जल भरियो हो जी
वैरो तेरूडो पार न पायो॥ रावल–
मालजी साबू माय ताव सायर बिच बेडी हो जी।
वैने कुण उतारे पेलै पार॥ रावल–
मालजी काया में कूड काठ में करोती हो जी।
वा तो आवत जावत रैवे ॥ रावल–
मालजी रूप देख मत मन ने डिगाओ हो जी।
वैरो फल चाख्या पछतावो॥ रावल–
मालजी काया कूपली ने मन कस्तूरी हो जी।
वा पर जतणा रो ढकण दीजे॥ रावल–
मालजी पैले री नार जननी कर जाणो हो जी।
वैने बैनड कहे बतलाओ॥ रावल–
मालजी पैले री वस्तु माग कर लीजे हो जी।
काम सरिया पाछी दीजे॥ रावल–
मालजी नुगरे माणस रो सग मत कीजे हो जी।
वो तो आप डूबे नै डुबावै॥ रावल–
मालजी वालर खेत बीज मत बोवौ हो जी।
वैरो हासल हाथ नहीं आवे॥ रावल–
मालजी घर री खाड कडकडी लागे हो जी।
गुड चोरी रो मीठो॥ रावल–

मालजी नीम जखारो नीमोली वेंरी मोठी हो जी।
विस अमृत कर डारो॥ रावल–

मालजी रूपे हदी नाद सोने हदी सैली हो जी।
बोलिया रूपादे ठगमसो री चेली॥ रावल–

– मानपदसग्रह भाग ३ पृ ११८

(२०)

हा रे वीरा किण ने केऊ रे
भेद नहीं जाणे रे जी।
अे तो स्वारथ छुरिया चलावे रे लालजी।
किण ने केऊ रे ॥टेर॥

हा रे वीरा सारी सारी रात अे जुमा रे जगावै जी।
अे तो लबी जोत जगावे रे लालजी।
बाहर प्रकास उजालो नाहीं माही रे जी।
अे तो व्रथा ही रात गमावे हो लालजी॥

हा रे वीरा मागे नारेल चूरमा चूरे रे जी।
अे तो होडा होड सू गावै हो लालजी।
बाजे तदूरा मजीरा गहरा रे जी।
थारो भायलो भ्रम नहीं जावै हो लालजी॥

हा रे वीरा सिध रामदेव भाई म्हारे मेळो रे जी।
अे तो कूडा कलक लगावै हो लालजी।
रामे री करणी जगत सू न्यारी रे जी।
कोई करे तो पार हो जावै हो लालजी॥

हा रे वीरा परचे पीर परसे सोई होवै रे जी।
अे तो बिन परस्या किम पावे हो लालजी।
बोलिया रूपादे ठगमसी री चेली जी।
समझे जिके नर आवै हो लालजी॥
किण ने केऊ रे भेद नहीं जाणे रे जी॥

– मानपदसग्रह भाग ३ पृ १११

रूपादे की वाणी
(२१)

हर थारी बाट जोवा ओ निकलक राजा
बेगेरा थे धरै पधारजौ रग डोर डारी बाधी।
म्हें सत वचना री बाधी

हर थारी बाट जोवा ओ
आलम राजा बाट थारी जोवा ओ ॥टेर॥

कैय नै थै गया था दिनडा दोय न चार
जुग नै चौथो रे कोई भव नो दूजो रे
अरे सामी राजा बरतियो ॥ १ ॥

करू म्हारा सायबा जोगणिया रा रूडा वेस
जोगण होय नै ने वैरागण होय ने रे
जुग सारो ढूढ लू ॥ २ ॥

करू म्हारा सायबा मालणिया रा रूडा वेस
मालण होय नै रे फूल मालण होय नै रे
गूथू हर रै सेवरा ॥ ३ ॥

लिखू म्हारा सायबा कागदिया दोय नै च्यार
भणिया हुवौ तो रे कोई गुणिया हुवौ तो
स्वामी राजा वाचलौ ॥ ४ ॥

करू म्हारा सायबा घोडले जीण पिलाण
उत्तर धरा में रे कोई पिछम धरा में रे
कालींगे ने हरलो ॥५॥

ऊभी म्हारा सायबा सरवरिये री पहली तीर
नैण सरोदे रे कोई नैण सरोदे रे
हर थारा साजोयाा ॥६॥

बोलीया रूपादे मालजी रै घर री नार
भव भव मेलो रे कोई जुग जुग मेलो रे।
मेला गरव देवो रे ॥७॥

सौजन्य डा. सोनाराम विश्नोई,
बाबा रामदेव पृ ४५२ ५३

(२२)

पावर बीज रा जमो दिरावौ रूडा रूडा साध बुलावौ।
रावल माल हुय जावो सुधारै थारी काया ॥टेर॥

ऊडा ऊंडा नीर अथग जळ भरियो।
तेरूडा नै थाग नहीं आयो ॥१॥ रावळ-

मालजी सालर खेत बीज मत बोवो
ज्यारौ हासल हाथ नहीं आवै ॥२॥ रावळ-

मालजी काया कूपली मन कस्तुरी
जरणा ढाकण दीजौ ओ राज ॥३॥ रावळ-

रूप देख मायले नै मती डिगावो
ज्यारा गुण देख्या पिछतावो ॥४॥ रावळ-

खारो नीम नींबोली मीठी
पेरी पेरी रस न्यारौ ओ राज॥५॥ रावळ-

काया में कूड काठ में करोती
आती जाती रेवै ओ राज ॥६॥ रावळ-

म्हारै माइडा री नार आगणिये में ऊभी
ज्याने बहनड कह बतलाओ ओ राज ॥७॥ रावळ-

नुगरै माणस रौ सग मत कीजौ
वौ तो आप डूबे औरा ने डुबावै ओ राज ॥८॥ रावळ-

मालजी खाड कडकडी लागै
गुड चोरी रौ मीठौ ओ राज॥९॥ रावळ-

रूपे हदी नार सोने री सैली
बोलिया है रूपादे उगमसी री चेली ॥१०॥ रावळ-

सौजन्य डा. सोनाराम विश्नोई,
बाबा रामदेव पृ ४५३ ५४

(२३)

अेक घडी यू म्हारै सामो भाळ गिरधर म्हारा रे।
अबला रै आरोधै बेगो आव गिरधर म्हारा रे॥ टेर॥

आयौ रै आयौ सिरियादे री वेल गिरधर म्हारा रे।
जलतोडी नाहवा में मिनिया उबारिया ॥ १ ॥

आयौ रै आयौ पहलादे री वेल गिरधर म्हारा रे।
जलतोडी होली में पहलादे ने तारिया ॥२ ॥

आयौ रै आयौ टींटोडी री वेल गिरधर म्हारा रे।
भरिया रे भारत में इडा तारिया ॥३ ॥

आयौ रै आयौ पाडवा री वेल गिरधर म्हारा रे।
लाखा रै महला में पाडु तारिया ॥४ ॥

आयौ रे आयौ द्रोपदा री वेल गिरधर म्हारा रै।
कोई भरी रै सभा में चीर बढाविया ॥५ ॥

आयौ रै आयौ रूपादे री वेल गिरधर म्हारा रै।
सोने री थाळी में बाग लगाविया ॥६ ॥

गावै रै गावै रूपादे रावळजी रै घर री नार।
सुणिया नै साभळिया भव जळ उतर्या पार ॥७ ॥

सौजन्य डा. सोनाराम विश्नोई,
बाबा रामदेव पृ ४५४

(२४)

मदी मदी दिवले री लोय म्हारा बीरा रै दिन की उगाळी हरीजन मिळ्या ॥टेर ॥
सुगरा से करणा सनेह म्हारा वीरा रै सुगरा माणस म्हानै नित मिळो।
नुगरा से किसा सनेह म्हारा बीरा रै नुगरा माणस म्हानै मत मिळो ॥१ ॥
बुगला से किसा सनेह म्हारा बीरा रै वन मैं बसै माटी भखै।
हसला से करणा सनेह म्हारा बीरा रै हसला तो मोती चुगै ॥२ ॥
डोबलडया सै किसा सनेह म्हारा वीरा रै बरसता सूकी रैवै।
समदा से करणा सनेह म्हारा वीरा रै समद हमोला से रह्या ॥३ ॥
कागा सै किसा सनेह म्हारा बीरा रै काग कुलाटा कर रह्या।
कोयल्या सै करणा सनेह म्हारा बीरा रै कोयल टहूका कर रही ॥४ ॥
साधा से करणा सनेह म्हारा वीरा रै साध सबद का पारखी।
रूपादे गावै उमगजी री चेली म्हारा बीरा नै म्हारै गरवा को अमरापुर वासो ॥५ ॥

सौजन्य मनोहर शर्मा,
शोधपत्रिका भाग ५ अंक ४

(२५)

ऊभी म्हारा सायबा रे राम सरोवर तीर
नैण सरोदे रे कोई बैण सरोदे।
हर थारी बाट जोवो जियो आलम राजा रे ॥टेर॥

कह ने गया था रे दिनडे री रे दोय ने चार।
कोई जुग ने चौथो रे कोई भव ने पहले रे ॥२ ॥
ऊभी म्हारा_ _

करू म्हारा सायबा रे मालण रो रूडो भेस।
फूल मालण होय ने रे गूथू हरि रे सेवरो रे॥३ ॥
ऊभी म्हारा_ _

करू म्हारा सायबा जोगण रो रूडो भेस।
जोगण होय ने बैरागण होय ने हर थाने दूढ लेवू ॥४॥
ऊभी म्हारा_ _

लिखू म्हारा सायबा रे कागदिया रे दोय ने चार।
कोई लिखिया गुणिया होवो तो रे कागज म्हारो बाच लीजो ॥५ ॥
ऊभी म्हारा _ _

करू म्हारा सायबा रे घोडलिये जीण पिलाण।
कोई उत्तर धरा में कोई पिछम धरा में कालिंगे ने मार लेवो॥६ ॥
ऊभी म्हारा _ _

बोलिया "रूपादे रावळ जी रे घर री नार।
जुग जुग मेलौ रे हर गरवा देवरे जियो ॥७॥
ऊभी म्हारा _ _

सौजन्य - सुरजाराम पवार

(२६)

जोऊ जोऊ रे सरवरिया थारी बाट
बैरागण हर रे नाव री ॥टेर॥

डींगी डींगी रे सरवरिया थारी पाळ
आवतडा दिस दोय जिणा।
एक म्हार धर्मिया रा वार
दुजोडा म्हारो स्याम धणा ॥१॥

लागो लागो रे भादरवे रो महीनो
मास रूणेचे मेळो हद भरे।
चढिया चढिया रामदेव जी बावो
आप भगता रे कारण आविया ॥२॥

लागो लागो रे आसोज रो महीनो
मास जूझाले मेलो हद भरे।
चढिया चढिया गोसाई बावो
आप भगता रे कारण आविया ॥३॥

लागो लागो कातो रो महीनो
मास कोलायत मेळो हद भरे।
चढिया चढिया परमेसर मुनी
आप, भगता रे कारण आविया ॥४॥

फूली फूली फूलोंरी फूल माल
बागा में चपो केवडो।
बोलिया रूपादे जी आप
सता रे दरसन आविया॥

जोऊ जोऊ रे सावरिया थारी बाट
बैरागण हरि रे बावरी॥

सौजन्य सुरजाराम पवार

(२७)

गुरा रा लाडा बाडी थारी फुलडा सू छाई ॥टेर॥
इण रे बाडी में थारे मरवो रे मोगरो
चदन रो पेड सवाई।
आवेगा कोई सत पारखी
ओ भर भर छाब लुटाई ॥१॥

पाचा में बैठ भाई झुठ मत बोल रे
मत कर निंदा पराई।
करण करम सूने एक किणी नाही
अरे मत बाध पल्लाने बुराई रे ॥२॥

गरभ वास में कौल कर आयो
थने औध मुख भगती कमाई।

वा दिन की सुधि भूल गयो रे
नकटा लाज नही आई रे ॥३॥

पहली करी जैसी अब तू करतो रे
बैकुठा मे जातो म्हारा भाई रे।
सत के सरणे राणी रूपादेजी बोली
यो सत अमरापुर ले जाई रे ॥४॥
गुरा रा लाडा ― ― ―

सोजन्य चोथमल माखन"
केन्द्रीय विद्यालय न १ उदयपुर।

(२८)

घडी पलक म्हारे सामो भाल गिरधर म्हारा रे।
सामो भाल अबला रे सरोदे बेगा आवजो रे ॥टेर॥
आयो आयो पाडवा री बेल सावळ म्हारा रे।
लाखा रे महला मेंऊ पाडू तारिया रे ॥१॥
आयो आयो धने भगत री बेल सावळ म्हारा रे।
बोया रे तुबा ने मोती निपजिया ओ भगवान् ॥२॥
आयो आया प्रहळादे री बेल सावळ म्हारा रे।
बळती रे होळी मेंऊ प्रहल्वादे ने तारियो ॥३॥
आयो आयो सरियादे री बेल सावरा म्हारा रे
बळता रे न्याव मेंऊ बच्चीया तारिया ॥४॥
आयो आयो नरसिह भगत की बेल सावळ म्हारा रे।
माहेरो भरियो रे छप्पन क्रोड रो रे भगवान् ॥५॥
आयो आयो द्रौपदी री बेल सावळ म्हारा रे।
भरी रे सभा में चीर बढावियो रे भगवान् ॥६॥
बोलिया रूपादे रावळजी रे घर री नार।
म्हारी भाव री थाळी में बाग लगाय दो भगवान् ॥७॥

(२९)

फूलों जैसो प्रेम हमेसा बानी रहेला रे।
जुठाड री बात बताऊ बीरो कहला रे ॥टेर॥

कड़वा कड़वा नीम गुड सीचीया मीठा नही होवे रे।
दूधा धोया कोयला कदे नही ऊजळा होवे रे॥१॥
काचो तातण तागो लियो तणियाऊ पहली टूटे रे।
ओछे थळरो नाडिया भरियाऊ पैली सूखे रे॥२॥
साध रे घर सखणी ठुळ रे घर नार रे।
रोइडे ने रूप दीन्हों भूल गयो किरतार रे॥३॥
सोने केरी तार ने रूपा केरी सेली रे।
बोलिया रूपादे गुरु ऊगमसिंघ री चेली रे॥४॥

सौजन्य सुरजाराम पवार,

(३०)

मायलो जाणै या अमर म्हारी काया हो जी ॥टेर॥
जळ बिच जलम्या ऊपर बस आकासी हो जी।
वा बिच जोग बताओ अविनासी॥१॥
धन जोबन बादळवा री छाया हो जी।
थोड़े से जाणै खातर काई जोड़े माया॥२॥
सोनै हदा महल रूपै हदा छाजा हो जी।
राज करै काया नगरी को राजा॥३॥
ढह गया महल बिखर गया छाजा हो जी।
बिलख रह्यो काया नगरी का राजा॥४॥
लोहै की जजीर में जकड बाध्यो हाथी हो जी।
अत समै कोई सत न साथी ॥५॥
अेक कूवै पर पाच पणिहारी हो जी।
अेक नेजू सैं भरै न्यारा न्यारी॥६॥
सूख गयो नीर सूकण लागी बाडी हो जी।
बिलखी फिरै पाचू पणिहारी॥७॥
सीतळ बृछ की सीतळ छाया हो जी।
राणी रूपादे हरी गुण गाया॥८॥

सौजन्य डॉ मनोहर शर्मा,
परम्परा भाग १५ १६

(३१)

पैला जैसी प्रीत सदा ई कोनीं रयसी रै।
नैम धरम थारा छाना कोयनीं रयसी रै॥
बेठोडे री बात बटाऊ बीरो कयसी रै।
गुळ सू कडवो नीमडो किण विध मीठो होय रै।
दूधा धोया कोयला ऊजळा नीं होय रै।
काचे तातण ताणो तणियो ताण्या पैला टूटे रै।
साध रै घर सखणी फूहड रै घर नार रै।
रोइडे ने रूप दियो भूल गयो किरतार रै।
सोनें हदी नाळ रूपा हदो सैली रै।
कय गया रूपादे बाई उगमसी री चेली रै।

सौजन्य - प दीनदयाल ओझा,
परम्परा भाग १५ १६ पृ २३१ ३२

(३२)

सोना चादी री ईंट पडाऊ मदरियो म्हारे धारू रै आगणे।
आगणिये पधारो गरुवा देव थाने मोतीडा बधाऊ ॥टेर॥

कुकू केसर की गार गळाऊ
मदरियो निपाऊ म्हारे धारू रै आगणे ॥१॥

बागा मायलो चनण मटाऊ
मदरियो किरडाऊ म्हारे धारू रै आगणे ॥२॥

सुरे गायरो घिरत मगाऊ
जोत जगाऊ म्हारे धारू रै आगणे ॥३॥

समदा माहलो सीप मगाऊ
मदरिये चौक पुराऊ म्हारे धारू रै आगणे ॥४॥

बाई रूपारी बिनती सरणे आयो ने सोरा राख धारू रै आगणे।
आगणिये पधारो गरुवा देव थाने मोतियाऊ बधाऊ॥५॥

- सौजन्य सुरजाराम पवार,

(३३)

ऊडा ऊडा नीर अथग जल भरिया
जठे तेरू रो थाग नही लागे ओ रावळ माल।
हो जावो साध सुधारो थारी काया
समझावे थाने रूपा बाई ॥टेर॥

पडोसिय री नार आगणिये ऊभी
जिणने बेटो कह बतलावो ओ रावळ माल ॥१॥

तालर देख बीज मती बोवो
हासल हाथ नही आवे ओ रावळ माल ॥२॥

घर में गगा घर में जमुना
नाडोलिये क्यों नहावो ओ रावळ माल ॥३॥

कहे बाई रूपा ऊगमसिंह री चेली
सता रो अमरापुर में बास ओ रावळ माल॥४॥

सौजन्य सुरजाराम पवार

(३४)

नर नारी माय अेक है कोई दूजो मत जाणो।
सत रे मारग कोई हालिया जिके जाणे पियाणो॥१॥

कायर काम नहीं जाणसी भूला ही भरमाणो।
जिण कारीगर जगत जडियो जिणरो अजब कमठाणो ॥२॥

सोई बिराजे सब रे बीच में देखो अधर ठहराणो।
सगळो ब्रह्माड फिर देख सो दूजो नजर न आणो ॥३॥

जिण पायो जिण पावियो सूतो नींद जगाणो।
भेळो रेवै पण नहीं मिळै अेडो है चतर सयाणो ॥४॥

ओ कोई मिळै उणमें मिळै आप ना आणो जाणो।
गुरु उगमसी भेटिया उलझ्यो हा सुलझाणो ॥५॥
बाई रूपादे री विनती ओ ही साचो परियाणो॥

सौजन्य दीनदयाल ओझा,
सत सुधासार मूमल प्रकाशन जैसलमेर पृ १३

(३५)

ज्यों रे मन में विरह नहीं ज्यों रे धूहड सो जीणो।
ऊपर भेस सुहावणो गरू सू रग लीनो ॥१॥
आप अगन में जळियो नहीं होय रयो मति हीनो।
विरह सहित साधु हुवा जिका सिर अर दीनो ॥२॥
मरणे सू डरिया नहीं मग में मारग कीनो।
विरह होय भारत लन्या पाऊडा पग नही दीना ॥३॥
मतवाला झूमे मद भरिया रग भर प्याला पीणा।
गुरु ऊगमसी साचा मिल्या जिका मन कियो झीणा ॥४॥
बाई रूपादे री विनती परगट निज पद चीणा।

साजन्य प दीनदयाल ओझा

(३६)

सुणले आगडली सुणले पाछडली
सुणलो बचली पणियार पाणी पावो जी।
कणीरो की जैथारो बेवडो ऐ सुदर
कणीरी कीज थारी डोर सुणता जावो जी।

सोना रूपा रो म्हारे बवडो ऐ पछी
लाल रेसम री है डोर केवता जावो जी।
काची रे माटी रो थारो बेवडो ऐ सुदर
सण न सुतळिग री डोर सुणता जावो जी।

थारा रे घडा रो पाणी लागणो ऐ सुदर
पीरतडा मर जाय सुणता जावो जी।
कणो री कीजे थारी चूदडी ऐ सुदर
बाई थारा जोबनिया रा मोल केता जावो जी।

लाला तो जडी म्हारो चूदडो रे पछो
लाख जोबनिया रो मोल सुणता जावो जी।
घास घूसरी चुदडी ऐ सुदर
फूटी कोडी रा थारो मोल सुणता जावो जी।

आगे जाइने पाछो नाळियो रे पछी
कई कई आवे म्हारा लार केता जावो जी।

गाडो जो भरिया लाकडा रे पछी
रेवाडी हाडी म्हारी लार सुणता जावा जी।

दूगर चढी नै नीचे देखियो ओ पछी
दाडा पोयरिया रा लोग गाडी पडियो जी।
म्हारा गेलारा नवसर हार लूटया जावो जी।
आगे जाई ने नीचे मेलियो रे पछी

भोग मागे राण देता जावो जी।
बाई रूपा री या विनती रे
सत अमरापुर पाया जावो जी॥

सौजन्य डा. महेन्द्र भानावत,
मरुभारती मेघवालों के मृत्यु गीत जनवरी १९६४

(३७)

वारी जाऊ ख्यालीडा वारी रै म्हारी काया ए बीरा वारी रै
थारा करवलिया पिलाण आपा जुमलै चाला रै॥टेर॥

ऊटा के गळ घूघरा रे म्हारा बीरा
घुडला कै रेसम डोर जिवडा वारी रै,
भारी जाऊ ख्यालीडा वारी रे म्हारी काया रा बीरा वारी रै
थारा करवलिया पिलाण आपा जुमलै चाला रै॥१॥

घुडला कै घमसाण सै रे म्हारा बारा
चढो अलखजी की जान जिवडा वारी रै
वारी जाऊ ख्यालीडा वारी रै म्हारी काया रा बीरा वारी रै
थारा करवलिया पिलाण आपा जुमलै चाला रै॥२॥

सायीडा का डेरा बाग में म्हारा बीरा
गुराजी का जुमलै कै माय जिवडा वारी रै
वारी जाऊ ख्यालीडा वारी रै म्हारी काया ए बीरा वारी रै
थारा करवलिया पिलाण आपा जुमलै चाला रे॥३॥

सायीडा ने दूध र तापसी म्हारा वीरा
गुरा जी नै गुपळी खीर जिवडा वारी रै
वारी जाऊं ख्यालीडा वारी रै म्हारी काया ए बीरा वारी रै
थारा करवलिया पिलाण आपां जुमलै चाला रे ॥४॥

साथीडा नै ओढण कामळी म्हारा बीरा
गुराजी नै भगवा भेस जिवड़ा वारी रै
वारी जाऊ ख्यालीडा वारी रै म्हारी काया ए बीरा वारी रै
थारा करवलिया पिलाण आपा जुमलै चाला रे ॥५॥

बाई रूपादे की बीनती म्हारा बीरा,
गुराजी के अवछळ राज जिवड़ा वारा रै
वारी जाऊ ख्यालीडा वारी रै म्हारी काया ए बीरा वारी रै
थारा करवलिया पिलाण आपा जुमलै चाला रे ॥६॥

(३८)

थे मानों म्हारा भाइडों रे समझ ने चालो म्हारी लाल
भव दुख भागे रे मिलाऊ सुन्दर स्याम सू रे हा ॥टेर॥

चालो म्हारा भाइडों रे आपा सत रे जुमले माय
मिल ने गास्या हे ठठे मिल न गास्या हे ॥१॥

तीनू दुख मेटा रे घालो आपा गुरा रे दरबार
मन समझास्या हे मायले नें समझास्या हे ॥२॥

भाया नुगरा मत रहीजो रे रहजो गुरारा सपूत
कपूतपणो त्यागो रे ॥३॥

नुगरा पुरसा रो रे भाई तज दीजो सग
थाने कठ लगावे है थानें कठ लगावे है ॥४॥

गावो म्हारा भाइडों रे गावो विरह रा गीत
हरि मिल जावे हे जिण सू हरि मिल जावे है ॥५॥

केवे यू रूपादे रे थाने सत रा बैण
वैण म्हारा सुणजो हे भव पैला तिरजो हे ॥६॥

(३९)

मैं थानें बूजू भोली काया काई थे कमायो जी।
नुगरा से बिणज कर थैं रतन गमायो जी॥

आयो आमो जाण मैं तो आगणिए चुहायो जी।
करणी हदो कूडो यो तो आक नीसर आयो जी॥

माना माना जाण मैं तो हार तो घडायो जी।
करणी हदा कूडो यो तो पातळ नासर आयो जी॥
मोती मोती जाण मैं तो नथ में पुवायो जी।
करणी हदो कूडो यो तो पाथर नासर आयो जी॥
हसो हसो जाण मैं तो मोताड़ा चुगायो जी।
करणी हदा कूडो यो तो काग नीसर आयो जी॥
गावै बाई रूपादे उगमसी री चेली जी।
गरवा के परताप सैं मैं अमरापर में खेली जी॥

(४०)

आरे कायानो हिंडोलो रचीयो
जगमजगी झाला खाय रे मायला
चेती चालो भाई आ।
चेती ने चालसो तो पार लगी जाशो
आ भवसागर नी मायरे मायला
चेती चालो भाई जी_आरे कायानो
काया वाडीनो किल्लो सुहाशे
आरा फरक आयर मायला चेती चालो भाई रे
आरे कायानो_
काया माडीनी हई गई तैयारी
शुकन करमाया भाई रे मायला
चेती चालो भाई रे_आरे कायानो
बालपन बचपन मा खोयो
भर जोवन नी मायरे मायला
चेती चालो भाई रे_आरे कायानो
बुढ्ढो थीयो तारे माला पकडी
शी गत थाय जीव तारी रे_मायला
चेती चालो भाई र_ आर कायानो
आरे मारगडे अनेक नर सोध्या
तालौ राणी साध केवाणा रे मायला
चेती चालो भाई रे_आरे कायानो

गुरु प्रतापे रूपादे बोल्या
मालदे ने विनती सुनाई रे_मायला
चेती चालो भाई रे_आर कायाना

साजन्य श्री कान्तिलाल जाशी
आकाशवाणी भुज

(४१)

पीर मारी अरजुरे दाद मारी अरजुरे
हे सुणो ने पीर तमे रामदेवजी हो.हो जी.हो
पीर तमे राखी रे गोवोळीया नी लाज पीर रामा रामा
घनमारे वाछरू चराव्यारे हो.हो जी.हो
पीर मारी अरजुरे_
पीर तमे राखी रे नरसिंहानी लाज पीर रामा रामा
हारतो आप्यो हार्थो हाथमा रे.हो.हो जी.हो
पीर मारी अरजुरे_
पीर तमे राखी रे सुधन्वानी लाज पीर रामा रामा
तेल रे कडाथी उगारीयो रे हो.हो जी.हो
पीर मारी अरजुरे_
पीर तमे राखीरे रूपाबाई नी लाज पीर रामा रामा
आव्या रे सकट ता उगारीया रे हो.हो जी पीर मारा

साजन्य श्री कान्तिलाल जाशी
आकाशवाणी भुज

(४२)

हुकम हीदवा पीर लजीया राखजो
नर नकलगी अवतार लजीया राखजो
हुकम हीदवा पीर_
लजीया राखरे तमे पाडवोनी लाक्षागृहनी माय लजीया राखजो
लजीया राखरे तमे नरसैयानी मायरोनी माय लजीया_
लजीया राखीरे तम प्रहलाद केरी स्तभमा कीधो वास
लजीया राखजो

मानो साना जाण मै तो हार तो घडायो जी।
करणी हदा कूडा यो तो पीतळ नीसर आयो जी॥
मोनी मोनी जाण मैं तो नथ में पुवायो जी।
करणी हन्दे कूडो यो तो पाथर नीसर आयो जी॥
हसो हसा जाण मैं तो मोतीड़ा चुगायो जी।
करणी हदा कूडा या तो काग नीसर आयो जी॥
गावै बाई रूपादे उगमसी री चेली जी।
गरवा के परताप सैं मैं अमरापर में खेली जी॥

(४०)

आरे कायानो हिंडोलो रचीयो
जगमजगा जाला खाय रे मायला
चेती चालो भाई जी।
चेती ने चालसो तो पार लगी जाशो
आ भवसागर नी मायर मायला
चेती चालो भाई जी_आरे कायानो
काया वाडीनो किल्लो लुटाशे
आँख फरके जायरे मायला चेती चालो भाई रे
आरे कायानो_
काया वाडीनी हुई गई तैयारी
शुकन करमाया भाई रे मायला
चेती चालो भाई रे_आरे कायानो
बालपन बचपन मा खोयो
भर जोवन नी मायरे मायला
चेती चालो भाई रे_आरे कायानो
बुढ्ढो थीयो तारे माला पकडी
शी गत थाय जीव तारी रे_मायला
चेती चालो भाई रे_ आरे कायानो
आरे भारगडे अनेक नर सीध्या
नालो राणी साध केवाणा रे मायला
चेती चालो भाई रे_आरे कायानो

गुरु प्रतापे रूपादे बोल्या
मालदे ने विनती सुनाई रे_मायला
चेती चालो भाई रे_आर कायानो

साजन्य श्री कान्तिलाल जोशी
आकाशवाणी भुज

(४१)

पीर मारी अरजुरे दाद मारी अरजुरे
हे सुणो ने पीर तमे रामदेवजी हो_हो जी_हो
पीर तमे राखी रे गोवोल्वीया नी लाज पीर रामा रामा
वनमारे वाछरू चराव्यांरे हो_हो जी_हो
पीर मारी अरजुरे_

पीर तमे राखी रे नरसिंहनी लाज पीर रामा रामा
हारतो आव्यो हार्यो हाथमा रे_हो_हो जी_हो
पीर मारी अरजुरे_

पीर तमे राखी रे सुधन्वानी लाज पीर रामा रामा
तेल रे कडाघी उगारीयो रे हो_हो जी_हो
पीर मारी अरजुरे_

पीर तमे राखीरे रूपाबाई नी लाज पीर रामा रामा
आव्या रे सकट ता उगारीया रे हो_हा जी पीर मारा

साजन्य श्री कान्तिलाल जोशी
आकाशवाणी भुज

(४२)

हुक्म हींदवा पीर लजीया राखजो
नर नकलगी अवतार लजीया राखजो
हुक्म हींदवा पीर_

लजीया राखरे तमे पाडवोनी लाक्षागृहनी माय लजीया राखजो
लजीया राखरे तमे नरसैयानी मायरानी माय लजाया_
लजीया राखीरे तम प्रल्हाद केरो स्तभमा कीधो वास
लजीया राखजो

लजीया राखीरे तमे भवाणाराना नोभाडानी माय लजीया
लजीया राखीरे तमे सुधन्वानी तेल कडाथी माय लजीया
लजीया राखीरे तमे रूपाबाईनो माणके चोक नी माय
लजीया राखजो_

सौजन्य श्री कान्तिलाल जोशी
आकाशवाणी भुज

(४३)

तारो जुनो रे अवसरीयो घेराजो रे राहोल माला
जागो रे तमे जगना जुना जुना जोगी रे मालदे
जीहो मालदे घरे रे छोडाने आपणे पगे नव चालवा रे मालदे
तमे घोडले बेसीने घरे आवो रे_राहोल माला
जागो ने तमे_

जीहो मालदे सापुना घरमा माला चोरी नव करना रे
वस्तु जोइती मागी लेना रे राहोल माला_
जागोने तमे_

जीहो मालदे पर रे स्त्रीनो माला पालव न पकडना रे
ऐने बेनडी रे करी ने बोलावीये राहोल माला
जागोने तमे_

जीहो मालदे कडे रे कललसाहेब सुणो राहोल माला
तमे रूपादे ना कर्या हवे मानो रे राहोल माला
जागोने तमे_

सौजन्य कान्तिलाल जोशी
आकाशवाणी भुज

(४४)

जागीने जुओ रे जेसल राजा मत सुवो
मत करो काई नींदरडी छे प्यारे हा_जागीने_
पेला पेला जुगमारे नळराजा सीधीयारे_
पाँच करोड देव ने वळीया रे हा_जागीने
बीजा बीजा जुगमारे बलीराजा सीधीयारे
आठ करोड देव ने वळीया रे_हा_जागीने_

त्रीजा त्रीजा जुगमारे हरिशचद्र राजा सीधीयारे
नव करोड देव ने वळीयारे_जागीने_
चोथा चोथा जुगमारे प्रह्लाद राजा सीधीयारे
बार करोड देव ने वळीयारे हा_जागीने_
ऊगमसीह नी चेलीरे रूपाबाई बोल्यारे_
मारा सतोनो अमरापुरमा वासरे_जागीने_

सौजन्य श्री कान्तिलाल जोशी
आकाशवाणी भुज

(४५)

व्रत रहीए अमे अकादशीना
राम राम नव उच्चरीये
जेवा जेना भाग्य हशे ने
तेवा फळ तेने मळशे
व्रत रहिए अमे अकादशीना_

सुरज सामे जे एढा डडाडे
पाणीया कोगळा जे करशे
इ करणीना सरज्यो पाडशे
पखाल पाणी इ भरसे
व्रत रहीए अमे एकादशीना_

माथु गुथावीने सैंथाओ पुरसे
रातना आरीसे जे जोशे
इ करणीना सरज्या वड वादरा
उधे माथे इ लटके
व्रत रहीए अमे एकादशीना_

पचमा बेसीने जे खोटु बोले
खोटी शाखुए जे पुरसे
इ करणीना सरज्या गधेडा
कुभार मारी इ भरसे
व्रत रहीए अमे एकादशीना_

अन्नदान देवे भूमिदान देवे
वस्तोना जे दान करे

इ करणीना सरज्या कनैया
पालखीयुं मा इ करशे
व्रत रहीए अमे अकादशीना—

हुकमा हाले हुकमा महाले
हकनी कमायु जे करशे
कहे रूपादे तम सुनोरे मालदे
करणीना फळ एने मळशे
व्रत रहीए अमे एकादशीना—

सौजन्य श्री कान्तिलाल जोशी
आकाशवाणी भुज





मल्लीनाथ व राणी रूपादे सुमेर म्यूजियम जोधपुर



मल्लीनाथ व राणी रूपादे देवताओं की साल मंडोर

परिशिष्ट - २
रूपादे-मल्लीनाथ विषयक अन्य कवियो की रचनाए

(१)

हो पैळाद सिंवरे हो राज पहला रे जुग में
राणी रतनादे नार वारा सग में॥
थारो मेळो भरे महाराज अमरापुर में
थारी जोत जले महाराज रक रा घर में॥हो जी॥

हो हरिचद सिंवरे हो राज दूजा जुग मैं
राणी तारादे नार वारा सग में ॥थारो मेळो-

हो जैठळ सिंवरे हो राज तीजा जुग में
हो राणी द्रौपदा नार वारा सग में ॥थारो मेळो-

हो बळीचद सिंवरे हो राज चौथा जुग में
हो राणी सजादे नार वारा सग में ॥थारो मेळो-

हो मालजी सिंवरे हो राज मेवागढ में
हो राणी रूपादे नार वारा सग में ॥थारो मेळो-

साजन्य रेखा सोनार्थी,
भारतीय लोक कला मडल उदयपुर

(२)

ठाइ—

आ पथ कोनीए बताड्वी रावळ माला
बनी जाव साधु सुधारा तमारी काया॥

धर पर धरणी धरणी पर बस्ती
अेक दिन प्रथवी परले जो जावे ॥ रावल-

किया जुगमा मडप रच्या किया जुगमा मेला।
किया जुगमा लगन लखाणा ॥ रावल-

सतजुग मा मडप रच्यो दुवापुर में मेळा।
तेताजुग में लगन लखाणा ॥रावल-

घरनीं खाड तमने लागे खारी
चोरी नो गोळ मीठो लागे॥ रावल-

भाईला ओ नीतरी आ तमे मातु करी मानो
अेन तमे बेनी कही बोलावो॥

कत रे कताबसाह सुनो रावळ माला
रूपादे राणी ना कह्यो मानो॥

सौजन्य मुरभा जीवनसिंह राठौड़
४५ दिग्विजय प्लाट नई जेल के पास जामनगर

(३)

ठोड-

पादरनी पनीहारी पूछू मारी बहेन
अे वा घर तो बताओ जेसलपीर ना॥
घुघरीया रो झायलो रूपला कमाड
अे वा फली आ बच्चे रे पारस पीपळो रे॥ हो जी-

टोडले काई सोपारीना झाड
अे वा चौक बचारे चपो रोपीयो ॥हो जी-

घरे रे आव्या छे मे मिलबान
अे वा साधु ने घरे रे सत परोढ ले॥

आवो मारा मींदरा मिलबान
अे वा पाछली पछीत पीरना बैसडा रे।

सतो अे काई कीधा छे सनमान
अे वा दुधेघी पखाळीया सतना पाहीलीया॥

सती राधे चोखलीया रा भात
अे वा हतन प्रीते भोजन कराव्या रे॥

बोल्या छे काई तारल सती नार
अे वा साचो रे समागम मारा सतनो ॥

मल्लीनाथ अजार (कच्छ) जाने पर जैसल से मिलने गये थे तब वे जैसल के घर का पता पूछते हैं वह यह प्रसग है।

सौजन्य मुरमा जीवनसिंह राठौड़

(४)

आ पथ कोने रे जताव्यो रे रावळे मालो
बनी जाव साघु सुघारो तमारी काया रे॥

घर ऊपर धरती ने धरती ऊपर वसती रे
अेक दिन प्रळय हो जावे रे॥रावळे मालो-

किया जुगमा मडप रचिया किया जुगमा मेला रे
किया जुगमा लगन लखाणा रे ॥रावळे मालो-

सतजुग मा मडप रचियो द्वापर मा मेला हो जी
त्रेता जुग में लगन लखाणा रे॥ रावळे मालो-

कहे रे कतीबसा सुनो रावळ माला रे
तमें रूपा द ना कहिया माना रे॥रावळ माले-

सौजन्य वीरसिंह हरिसिंह चौहान, जामनगर

(५)

जाडेजा रे- वचन सभाळो पेला जाग जो रे
ताळ रे तबुरो सतीना हाथ मा

सती करे अलख नो आराध॥
जाडेजा रे- -

जाडेजा रे - मेवाडे थी मालो रूपा
आलीया आव्या वचन ने काज॥

त्रण दिवस अने त्रण घडी
सुरो (?) हो तो जाग॥जाडेजा रे

जाडेजा रे- मालो ने रूपादे
पारख पेढीये रे
पहोरे पहोरे हीरा हीरा लाल जाडेजा रे।

चोरी नव राखी हो जी।
अे जी खरी वस्तु लेजो
तमे मागो रे रावळ माला॥

अे जी मालदे मनमा छे मेळने
कमरमा छे काती रे
अे जी छूरे काती काठी
आपण मळीये रे रावळ माला॥

अे जी मालदे बार बार
मेघ वरसे अम्रत धारा।
अे जी आपणे अनगत
पाणी नवगत पीए॥ हो रावळ_

अे जी मालदे डोळा ते जळना
पान नव करीये
अे जी आपणे निरमळ निरे
नित्य नाहीये। हो रावल_

अे जी मालदे दळ करो दरियाने
मन करो होडी रे।
अे जी आपणे सतने
तुबडे तरी जइये ॥ हो रावळ_

अे जी मालदे तन हुदा तालानो
अक्कल हुदी कुची रे
अे जी आपणे ठाबर ठाकण
न दीजिये हो रावळ_॥

अे जी मालदे कहे रे कतीबसा
सुनो जूना जोगी मालदे।
अे जी आपणे भजन करी
भवजळ तरीये॥ हो रावळ माला_

सौजन्य भुरभा जीवर्नसिंह राठौड़, जामनगर

(९)

कच्छथी जेसल ठगा बोली अने मेवाडे मालदे आराधे।
मुरी ना मत्या मुनीवरा भोम आवी आपो आप रे॥

माले रे जेसळ ने पूछीयु रे अने आपणे हुई ओळखाण रे।
हाथ दई पजा मळव्या थायतीया सिद्धना सघात॥कच्छथी–

घरे जु त्या घोरीन में कूवे कडवा नीर।
आराधे अम्रत हुवा अे माला घरे राणी रे। कच्छथी–

सावरे सानारी बारगी माही बैठा रूपादे राणी॥
माडया मेह वरसाव्याइ तोरळ काठी राणी॥ कच्छथी–

जेसले वावी पारस पीपळी अने माले वावी (जाळ)।
डाळीओ ब्रहाडे पहोंची ने मूळ तोडाया पाताळ॥कच्छथी–

धनवे डुडा रे सतों अे पग धरिया सो अे लीयो विसामो।
रामदेव पीरना आराधनो जाम्यो भजननो जामो॥

परबत पारखरमा कालडी कोराणी जुग जुग रहेगे पीपळी पुराणी।
सतिया अे सत रोपिया बोल्या तोरळदे वाणी॥

सौजन्य – मुरभा जीवनसिंह राठोड़, जामनगर

(१०)

देवायत पार ने माटी उगमसी जेने मेघ धारवा नी ओळखाण।
साभळो मालदे तमे वाणी रे मारा साचा साहेबनी ओळखाण रे॥

मेघ धारवाने घरे ज्यारे पाट मडाव्या तेंदी बोलाव्या रूपादे राणी रे।
चद्रावळी अे चारो आदरियो सूता रे मालदे ने जगाडयो॥

उठो उठो ने माला पहेरो ने मोजडी आज राणी ये राजने अभडाव्या रे।
तीयाथी रावळ मालदे चाल्या आव्या मेघ धारवाने दुवार॥

आपणे आगणे आयो कोई नुगरो ज्योतु जाखी दरसाणी रे।
मेघ धारवाने घरे आराध मडाणो आराधे मोजडी उतारो रे॥

तीयाथी रावल मालदे चाल्या रूपादे री मोजडी चोराणी रे।
त्याथी रूपादे चाल्या आव्या अवळी बजारूमा रे॥

साकडी गेरीमा मालदे मल्या तमे क्यारे गयाता ववारु।
व्रत रे राजा मारे अेकादसीना फुलडा वीणवाने गियाता॥

आपणी गेरीमा नहीं फुलवाडी रे ढोळने उमळे पाणी रे।
झडप दइने मालदे अे छेडो ताणीयो पाणीमा फुलवाडी डेराणी रे॥

भागी प्रात ने हुआ अजवाळा राणी पथडो तमारो बताओ।
दोइ कर जोडी ने मेघ धारवो बोल्या थई मारा साचा साहेबनी ओळखाणी रे॥

सौजन्य - सुरथा जीवनसिंह राठौड़ जामनगर

(११)

अगम बाग सिंचावो वनमाळी काई काई वसत निपावो म्हारा भाइडा।
नदी निवाण रो नीर खळकियो जद बिडलौ रो सनाई म्हारा भाइडा॥

साचा म्हारा वीराजी ये हीरारो बिणज करो
साचे सायबाजी ने ये घ्यावो काया थारी अमर हुवै भाइडा॥

बिडले री खबर मगावौ वनमाली निरमळ भग हलावो।
तिरगटी रा मौल अमीरस भरिया सो पीवै ज्याने पावो म्हारा भाइडा॥

सुखमण सरवरिये रा पाव सुवटिया मोतीडा रो चूण चुगावो।
जिण करणी मालो रूपादे सीझा सो पथ थे हलावो म्हारा भाइडा॥

सतडे री बाड सजोरी खेती खरसण साच कमावो।
काई धूला बपरावो म्हारा भाईडा॥

पोवा ऊगत रा हीरा हीरा बिणजो रतन अमोलक पावो।
दोउ कर जोड उगमजी बोले हीरा रो बिणज हलावो म्हारा भाइडा॥

- मरुभारती, जुलाई १९७८
वर्ष २६, अक २, पृष्ठ ५२

(१२)

रूपादे री वेल
(डा. बदरी प्रसाद साकरिया सग्रह)

घर धारू रै धरणीधर आप परिहरिया पूरबला पाप।
अहकार जग रह्यौ अलाप जग आरधियौ जपवा जाप॥ टेर॥

भजौ राम वदन नहा व्यापै पापरी वेलडी परण गुरु कापै।
बीच सनीचर जमारी जोड हेत रा हीरा लेसा लोड॥१॥

रजवत सजवत राज रह प्रेम नहचळ नूर धणीरो नेम।
मनभर लाक मुनीजन मेघ विसणू साध तेडावौ नेग॥२॥

औरम सौरम पूरब दिस पाट औसर मौसर वैरारी हाट।
घट मौरत सोना रा घाट मोड कळस धर मेळू माट ॥३॥

कह उगमसी धारू आव धूप कळस नै गवळी लाव।
गुरु उगमसी धरिया हाथ पूरिया कळस नै पाव सपात ॥४॥

पीर पंडित मिळिया पहैलोय किसन किसन कहै सब कोय।
दूहा पढती दुहू कर जोय हुकम धणी रा सिमरण होय ॥५॥

औसर मौरत वार सुवार चहु दिस गावै मगळचार।
कह मेघ धारू परपम पाव आव सकै तो रूपादे आव ॥६॥

मो भरतार चलौ नरनायक खोटा फिरै खजीना खायक।
आडौ पौळियौ पोढू पायक इतरे सकट सजै न वायक ॥७॥

चेतन होय चतुरभुज चालै पकडी साच झूठ मत झालै।
पोळिया ने परम गुरु पाळै राणी रूपादे जमा में मालै ॥८॥

बाई रूपा ऊभा मैला मझार म्हे जावा देवरै दुवार।
बारै आवो अबै बासक व्याळ आप पोढै रावळजी री साळ ॥९॥

साभळै वचन सजिया सिणगार रद बेहद हीरा नग हार।
लछण बतीसा लीधा लार बाद साद नह कीधी वार ॥१०॥

बाई रूपा ऊभा पोळा मझार घडीक नैणा नींद निवार।
रूपा जपै हरी रा जाप खिडकी खोली हरी आपो आप ॥११॥

पोळ पाटरा जडिया तास रूपा सिंवरे अलख अविनास।
वेळ कावडी सिमरण हाथ खुलिया ताग से एकण साथ ॥१२॥

वेळा कुवेळा कहा सू आवत किणरी नार कहा जावत।
केप सरै डाकण कैवावत अळगी निकळ नैडी न आवत ॥१३॥

साम सदरै वायक सारू मोटा धणी रो लेजौ धारू।
रावळ माल री अनूप नारी अधिक अभिमान भूप अधिकारी ॥१४॥

प्यारा वायक कुण नर पेलै सत गुरु साहिब है थारे बेलै।
अधराता रा मैल जु मेलै सतगुरु वायक कोइयक झेलै ॥१५॥

बाई रूपादे आवो माही माणक चौक मोतिया वधाही।
जोत पाट रो निरमळ नूर रूपा रा वायक बाबो राखै हजूर ॥१६॥

दीपता दीपक देव दुवार बौत बगसिया बाई पौतर वार।
मिळता मिळता की मनवार सकळ सताने सदाजी सार ॥१७॥

बाई पंडिया किसनरै सासै मन भर लोक जु घणा विलासै।
मळ सादका कनकरै कासै चारू वात उपनिया वासै ॥१८॥

चेतन हुई चद्रावळ बाळ जाय जगायौ रावळ माल।
जागौ मारू मेवै रा माल राणी गई रिंचिया रै चाल ॥१९॥

नार नहीं माल निपट निकावल जोर बक सकिया बोहो रावळ।
साभळ वचन चढाया चावळ रजपूताणी जगायौ रावळ ॥२०॥

अे था सपूती थू पडपूती कूडा दोस लगावै दूती।
दिवलै जोत जगामग जूतो राणी तो रगमेला सूती ॥२१॥

राणी चद्रावळ चलावै चाल भोळा रावळ मन भोपाळ।
सौझौ राणीरा औराने साळ जठै राणी महीं बैठी उठै वागै है ताळ ॥२२॥

बार बार कहू राणी मानै नहि वाचा मेर सुमेर सिरक जावै पाछा।
भुयग न झेलै धरणी रो भार जद जाणू राणी गाखारै बार ॥२३॥

सीता कहीजै सतवती नार चालीगी दस कधरै द्वार।
जद तो भुयगम मायै भार सात समद नहि लोपी कार ॥२४॥

सळखेरौ सुतन हिंदूपत थान मो धण मोसू मती कर मान।
अमख भाखे नै मेटे म्हारा आण भोमू भाण ॥२५॥

वळवळ वाता कहू विचार अेकल रावळ
धारू रै धोकै उठै धणीरा पाय
सर मारू अक्खर ।
सारू मैं धणी नै ॥
न राखै थारै
छोडीनै
बैसता अेकण
रंग में
।
॥३

खमा
पाछा आवो

आया मालजी दाण हयाण क्रोध उपायौ जग परवाण।
मनसा रो मालो मनसा रो माण पवग गगाजळ माड पिलाण ॥३३॥

नाई करमतिया बेगो रे आव घोडो गगाजळ बारे रो लाव।
आपा जावा राणी है लार राणी पूगी रिखा रै बार ॥३४॥

चढिया माल दुहाई फेरी सोधौ सैर चहूंधा सेरी।
हद बेहद हलोहळ हेरी वरसै पावस रैण अधेरी ॥३५॥

वैतै माल कियौ आलोच भरै पावडा मन मैं सोच।
चोरी विना चलाया घोजा रावळ माल मगाया मोजा ॥३६॥

नाई करमतिये मत्ता कीना देख घाळनै साच पती ना।
पगा प्रमाणा पाटरा मीना दीनानाथ पगा तल दीना ॥३७॥

सुहाग भाग सीलवत चेली महासती मन मैं नहिं मैली।
परसै पाव गुरारी चेली अधराता री जाय अकेली ॥३८॥

मार मार करे ना ऊभो माल हाथ खडग हथ वासै ढाल।
ग्याता काळ आया हो आज पगला भवरा तो जाणौ राज ॥३९॥

बिन परमोद बकौ किण बेई सूता लोक सुणैला सोई।
बिना खून विणासौ देही म्हानै मार पिछतावौला वैई ॥४०॥

फिट थारी माता फिट थारी जात अकरम करम कमाया थै रात।
सग रमिया औरा रै साथ तुरत मौत है म्हारै हाथ ॥४१॥

धिन म्हारी माता धिन म्हारी जात सुक्रत काम कमाया रात।
सग रमिया साधारै साथ तुरत मौत म्हारी थारै हाथ ॥४२॥

कूड कपट कर छळिया म्हानै अधराता रा चलिया छानै।
करता नाथ हुवौ थारै कानै काटू सीस वरू हर हानै ॥४३॥

विना बाग मैं रही विराज अजब फूल विण लाई आज।
काई क थारै काई म्हारै काज झूठी होऊ तो मारो राज ॥४४॥

नगर नराणौ निपट निकासौ घडियक तोळो घडियक मासौ।
नहिं मानू हासी नहिं मानू हासौ सावदू साळू नै पलौ करो पासो ॥४५॥

हर (हरणाकुस) कियौ हैरान पैळाद सतायौ सत थारौ जाण।
केहर रूप हुवौ उण काम जिका वेळा म्हारै सत गुरु राम ॥४६॥

त्रेता जुग तारादे तारी हारियौ हरचद तिया नहिं हारी।
उण साधा री सरबदा सारी जिका वेळा म्हारो कुञ्जबिहारी ॥४७॥

मद कीचक दुस्सासण दाणू, सती द्रौपदानै लगौ सपाणू।
वधिया वसतर नै विधा वखाणू, जिका वेळा परम गुरु जाणू ॥४८॥

बावन रूप हुवौ गिरधारी भौम सकळप ले कर झारी।
पीठ मापने देह वधारी बळ रै द्वारै चौकी धारी ॥४९॥

परचा सू पातसा पातरियो खाती करमती कियौ ज्यू करियौ।
धवळ धार नै करवत धारियौ उण सत राजा रणसी तिरियौ ॥५०॥

साचा सेवग सालौ सूरो पडदे मिल्यौ परम गुरु पूरौ।
उण भायारा पूरया मनौरा दुक्रत काट किया हरि दूरा ॥५१॥

सवन करू नमाधू सीस थैं तारीया क्रोड तैंतीस।
अरघ देऊ उगै दिन ईस जपिया झट आवौ जगदीश ॥५२॥

"रूपा" रटे हृदय रवराय साची सूरत सबद रै माय।
देव अधार करा अरदास परम गुरु आयो परकास ॥५३॥

सागै ही सब है सैलाण सोन सिंघासन भळकै भाण।
फळी मनोरथ इण परमाण रच रूपा नैं आयौ रहमाण ॥५४॥

थाट पाट री भरियो थाळ चोखा चावळ रेसमी दाळ।
सावदू साळू नै करौ सभाळ माय महकी फूला री माळ ॥५५॥

डागळ पान रेसमी डोरा कळ कूपळिया राधिजै कोरा।
सिरै माणक नैं साव बिजोरा सिरै गगाजळ हुवैसि सोरा ॥५६॥

सपूताणी थू रजरी राय बडा भगव थारा बाप ने माय।
मेहं खडग पिय लागे पाव गरवा भणी म्हनैं पथ बताव ॥५७॥

थे भला नैं हू भूडी भरतार अत सिरजी हू थारी लार।
परम जोत नर सापे पार औ पथ जु खाडे री धार ॥५८॥

अणभेदू दुबध्या रा देव भूडा भला मत भाखो भेव।
आरभ देख लगावू टव थे कैसा ज्यू करसू सेव ॥५९॥

बरडौ गगाजळ पाडल गाय फेर कवर जगमाल बढाय।
राणी चद्रावळ बड नार जद पिय आयौ देव दवार ॥६०॥

वरडिया गगाजळ दिन सो बीजे आगू दफ्तर लिख लिख लीजे।
अलख लखौ तौ और ध्रम कीजे पात सुपाता पग धोय पीजै ॥६१॥

कान कुडल छुरिया घाल माय लियौ मेवै रो माल।
सेलो सींगी सुणाई सौथ मामे राव रतनसी रा हाथ ॥६२॥

जीवौ गगाजळ विलम न करियौ सूर तेंतीसा रौ ध्यान नु धरियौ।
साचा मनोरथ साचा हीया जै जै कार गगाजळ जीया ॥६३॥

चद्रावळ थै अपछर छलिया हेत हियाळी हित कर मिळिया।
अवगुण गळिया बौहो रग भिळिया रावळ माल रूपादे मिळिया ॥६४॥

बाजी नौबत बटी बधाई परचा री परताग्या पाई।
जागी जोत ने जमो जगाई वधियौ धरम मेवा रै माई ॥६५॥

सुरग भवन थी आयो साई अणत कळा बापे अणत उपाई।
पाप करम रै पैंडे नहीं पाई गत री औदो लियौ गुसाई ॥६६॥

नाथ निरजण अगम अपारा सिमरौ सता सिरजणहारा।
अपणा धणी सही कर जाणौ जलम मरण भव डर क्यू आणौ ॥६७॥

समत चवदै सौ सीकार गुण चालीसौ वरस विचार।
उज्जळ बीज सनीचर वार चैत भयो परचौ परवार ॥६८॥

सकळ केळा सत गुर रै सारै बौहो नामी बाबो आप उबारै।
मलीनाथ वरदे अलक उबारै धिन पाचू जगदीस जुहारै ॥६९॥

सकलयिता - अगरचद नाहटा

(१३)

भाटी हरिनन्द कृत
रूपादे जी री वेल

माल मेहवै राजवी सलखावत सिरदार
वनरावाली डीकरी घर माला रै नार॥

धर धारू रा पाव धराण पलटा पाप धरम थपाण।
जूना जोगी आया पूगी पूगी आस परम गुर थाई।[१]
भूगा सतगुरु जग परवाण॥

रावळजी नूझै राजपदमणी कहौ म्हारौ मानौ।
धण्या हेत सू मानो म्हारौ महर दयार[२] कर मानो॥१।

बीज सनीचर रा जमा जागिया कायम कळस थपाणा।
चनण चौक पूरिया चोखा मोतियारा मडप मडाणा॥

---

१ शोध पूगिया सवरम गुर थाई
२ मया बर आया

हो रावळजी बूझै हैं थानै ॥२ ॥

उगमसी देवायत आया आयौ मोकळ राणा।
हडबू पीर रामदेवजी आया पच थपियां[३] पीरा रा ॥
रावळजी बूझे है थाने हो राजपदमणी ॥३ ॥

पार पगनर काबर[४] आया अल मईद कपिराव।[५]
धारूजी रै घरै धरण[६] धूणी धुकाणा म्हैल मोट मिटाणी[७]
॥हो रावळजी_ ॥४ ॥

धारू मेघ धणी रा वायक जाय रूपा ने देणा।
गुरु उगमसी पाट पधारिया ज्यांरा दरसन करणा॥
हो रावळजी_ _ _ ॥५ ॥

आज रो भाण भलो ऊगो धारू म्हाने दरसण देणा।
किण दिन थारै अलख री पूजा किण दिन धूणी धुकाणा॥
हो रावळ जी_ _ ॥६ ॥

ओघट घाट जडीजे वीरा सैंठा[८] जोग किसै विध उतराणा।
हर प्रणाम गुरा नै म्हारा कैणा हरि मिळै तो मिळाणा॥
हो रावळ जी_ _ ॥७ ॥

साचै मतै पधारो बाई रूपा डिगमिग मन क्यूं डरणा।
जोवा बाट पधारो बाई बेगा नैम झाल निज तिरणा॥
हो रावळजी _ _ ॥८ ॥

ताखा कवर नै आगै दै काई[९] रूपा काले कथ ओढाणा।
महला तणी थे लो नीं रखवाळी म्हैं जुमले जगत मिलाणा॥
हो रावळजी _ _ ॥९ ॥

राणी नै सुपनौ आयो रावळगज[१०] भूल गई राणी।
महला में सुरत मिलाणा॥
झालर सख छतीसा बाजा मरदग ताळ[११] बजाणा।
हो रावळजी _ ॥१० ॥

---

३ कपि राजा
४ धूणी धुरभी धुकाणा
५ म्हेल मार (ल ?) मिटाणा
८ सेठ (सम है ?)
ताखा वैवर नै आगेदै बाई
रावळ गज भूल गई
११ थाळ बजाणा

सज सिणगार जमा ने किया बाई तैयारी मोतिया थाळ भराणा।
अेक जडीजे दूजी उघडे[१२] (म्हारा) गुराजी रा वचन फिराणा।
रावळजी बूझै- - ॥११॥

खुल गया ताख जड गया ताळा कसा माहू उसा खुलाणा।
चेतन कियो विरज पोळियो (जिणे) हाथों में हाथ झिलाणा॥
रावळजी बूझै - - - ॥१२॥

पहरण देऊ पावरो झाझर हार टिकावट वोने।
पद[१३] अमोलक देऊ मूदरो, वीरा छानी राखजो म्हाने॥
रावळजी बूझै- - ॥१३॥

ठण घर जनम इसे घर आया जावौ जठै जुग मानै।
थारी तो लिजिया आलम राखसी म्हारी लिजिया थानै॥
हो रावळजी बूझै- -॥१४॥

रूपा महला सू उतरे ठमठम पाव धरे।
बाईरा जाझर बाजणा पछे सारे ही सहर जगेह॥
हो रावळजी बूझै- -॥१५॥

घणे जतन सू बाई जमै पधारिया इदक राख ऐ मानै।
पाट खोलने बाई पाये लागिया (जणे) निवण करी सारा सता नै॥
हो रावळजी बूझै- - ॥१६॥

दाता तणा दवारे आया सुनमें सुरत मिळाणा।
पाच पदम गुरा रै पाये मेलिया (जणे) बाई ने सत वचन केवराणा॥
हो रावळजी बूझै- - ॥१७॥

रूपा वायक

जतर मजीरा वीणा वाजिया सखरा[१४] भजन सुणाणा।
चेतन हुई चदरावळ राणी (जणे) महला में माल जगाणा॥
हो रावळजी बूझै- - ॥१८॥

गह में नार गोमती बोले चुगली चाल हलाणा।
चिंतविया सो परा विया बाई रग में रग भराणा॥
हो रावळजी बूझै- -॥१९॥

---

१२ शोध अगडे।
१३ शोध पदम
१४ शोध सरवण।

वदती वाद धणी रै आगे नित दुख देती म्हाने।
माल जगाय नै रात हलाय दो कूंदै मरजाद वानै॥
हो रावळजी_ _॥२०॥

चदरावळ जाय माल जगावै उठो मालजी निमाणा।
पाली नहीं रै थारी घर री पदमणी काई कार्ड राज कमाणा[१५]।
हो रावळजी_ ॥२१॥

झूठी राणी क्यू झूठ बोलै कूड कपट क्यू कहणा।
राणी तो सूती म्हारै रग महल में हुवै किस विध जाणा॥
हो रावळजी _ _ ॥२२॥

रावळ मान्न आपरी दुवाई हू अखम न केऊ अग्याना[१६]।
राणी तणौ थे महल जोवावो ज्योंरी पारखा लेणा॥
हो रावळजी_ _॥२३॥

कर दीपग नै महल जोवाया सेहजा वासग[१७] भखाणा।
महल छोडनै मेघा घर जणै मालजी गुस्से भराणा॥
हा रावळजी _ _ ॥२४॥

दूसरी[१८] बार मालजी चढिया रग माहि रीस भराणा।
अेक घाव में सोलह टुकडा इसडा फाग खिलाणा॥
हो रावळजी बूझै_॥२५॥

मालजी वणा मेलिया मिसरू पागी लग पूगाणा।
पागी जाय मोजडी लायो जडी लाल हीरा से॥
हो रावळजी _ _॥२६॥

दिवलै जोति सावि अवि मोलूं उसराणा।
सोच करो सिंवरो साहिब नै ।॥
_॥२७

सौं सेहू, गुरु हनकार
अ म्हारै सो कोई

पात झाल नै ऊभी पदमणी मागे सीख घरा नै।
पार लगी तो गुरु पाय लगसू, (न्हीं तो) याद राखजो म्हानै॥
हो रावळ जी- -॥२९॥

सदा सुरगी है[२०] बौहरगी ताव नहीं लागै तोने।
थारै बुलाऊ पिरथी रो पाळक पालजी रा पायकडा नै पाले॥
हो रावळजी - -॥३०॥

उगमसी हरिदास दाखै म्हारो सरग लोक में सूना।
मोची बैने मोजडी लाईजे हीरों पन्ना सू।[२१]
हो रावळजी- - ॥३१॥

अळी गळी दरवाजा रोकिया[२२] रूपा अरज करै अनदाता।
म्हानै सगाई (ज)[२३] माल मिळाणा॥
हो रावळजी- - ॥३२॥

जाझर पहर भला रळकाया दई मरण क्यू डरणा।
डर जर टाक माल ने मेळो म्हारा साई आगै साच भराणा॥
हो रावळजी- - -॥३३॥

काढ तरवार नै भुजा कीधी आधी हर हीदू कोपाणा।
म्हानै मारिया रो विड़द राज नै पाप दोख सो थानै॥
हो रावळजी - - ॥३४॥

काळी काठळ बीज चमक्कै खळ-हळ नीर खळाणा।[२४]
गरठ अरठ इद्र ज्यू गाजै ठमकत पाव धराणा॥
हो रावळजी- -॥३५॥

इद्र बरसै नै रैण अधारी बिना बरण क्यू बहणा।
मालजी तणा बाधिया मारग थानै जाव किस विध देणा।
रो रावळजी- -॥३६॥

खतरी तणी खोय दी राणी अकरम काम कमाणा।
महल छोड नै गया मेघा घर (म्हारी) डीठी लाज लजाणा॥
हो रावळजी- - ॥३७॥

---

२० शोध सदा सुहागण है
२१ शोध जड़ी लाल हीरों से
२२ शोध रोकिया के पश्चात् सिरेई चौक रोकाणा
२३ शोध सागेई (ज)
२४ शोध नीर रख लाणा

अवरण सत्ररण मे भळा बैठिया जीमत देखिया मैं नैणा।
नर नै नार सेंफळौ बाजै उसडा ओढ अवरणा॥
हो रावळजी_ _॥३८॥

बाग न बाडी कोई चपो न मरवो न कोई बाग सेवाणा।
अेक बाडी मडावर कहीजै जिणरा दूर रहे पयाणा॥
हा रावळजी_ _ ॥३९॥

सिखर फूलडा म्हे हाथै चीणिया जाय चप ले चुग लेणा।
लाई रीझ राज रै ताई मै सुख सायो थानों॥
हो रावळजी_॥४०॥

जद गरजत तत से गिरियौ बळ टूटो बरडाणा।
चकर चलाय महाफद काटो विनत वार नही करणा॥
हो रावळजी_ _ ॥४१॥

जद पेहळाद होळी में हरियो उलख आट उबराणा।
वा विरिया म्हारै आण पहूती साम सत ले चढणा॥
हा रावळजी_ _॥४२॥

सुरै सालै सत जडिया दिवाना हरी खोलिया बदो खुलाणा।
वा सता थे बाहर पधारिया जो घोडलै[२५] पाव धराणा॥
हो रावळजी_ _ ॥४३॥

खीवड मेघ थापना थापी रिणसी जमा जगाणा।
गढ दिलडी में थे परचो दीन्हे जणै फूला माट भराणा॥
हा रावळजी_ _॥४४॥

डागळ पाव वणिया पाळिया रा झाल गगाजळ झीणा।
काची काच बणी कणहण री मूरज फूल महकाणा॥
हा रावळजी_ _ ॥४ ॥

मातिया रा आखा नै सम्व विजारा सवा लाख हीरा।
मरको माळ थाळ थट भरिया अणद किया मन भाणा॥
हो हा रावळजी_ _॥४६॥

नरै मालना सुण राणी रूपा थारा पूजू विद सदवाना।
इण पथ में ले जाओ पदमणी थ रहिया घणा दिन छाना॥
हा रावळजी_ _॥४७॥

---

१ शा। बगौ ॥५ ॥

कहे रूपा सुणो मालजी, कोई थूळा ने भेद नहीं दणा।
खरतर धारा खाडा री चलणा थासू सेल नही जावे सहणा॥४८ ॥

आप कहो म्हे पहली सुणियौ मुख सू ना नहीं कहणा।
रावळ माल अनड वर[२६] जायो (तो) सेवा री _ (आण)_ घलाणा॥
हो रावळजी _ _ ॥४९ ॥

रूपा अरज करै अनदाता गुरा आप कहो ज्यू कहणा।
रावळ माल अलख पद लागा।[२७]जका नै जमै किण विध लेणा
हो रावळजी_ _ _॥५० ॥

गुरा वायक

पाडल गाय गगाजळ छोडो ओ'लो सूपियो थानै।[२८]
राणी नै चदरावळ बिडदो (जद) लेवा पथ में म्हानै॥[२९]
हो रावळजी_ _॥५१ ॥

पाडल गाय गगाजळ छोडो जद लेवा पथ में थानै।[३०]
चदरावळ राणी नै बिडदो ओ लो सूपियो थानै॥[३१]
ओ रावळजी_ _॥५२ ॥

पाडल गाय गगाजळ छोडो कवर कियो बिडदा नै।
राणी नै चद्रावळ बिडदो मालजी भगवा भेख भगाणा॥
हो रावळजी_ _॥५३ ॥

कर पडदा रटिया परमेसुर अगरधूप ओखाणा।[३२]
पडदा तणो दयापति राखे (जणै) जावे माल मुरडाणा॥
हो रावळजी_ _॥५४ ॥

पाडल गाय किवी हरी पैदा बिसियो घनै मिलाणा।
गह में नार गगाजळ घोडो पोहे में कीधा पिलाणा॥
हो रावळजी_ _॥५५ ॥

---

२६. शोध नर
२७ शोध म्टक नर लागा
२८. शोध कवर करो बिडदाने
२९. शोध जली लेवा पथ में थानै
३० शोध ओ ल्यो सूपियो थानै
३१. शोध (पण) लेवा पथ में म्हानै
३२ शोध अ'पाणा

करार कटा बध पात्र झुका थै मल्ला में मुळकाणा।
चदराळ रस सामी आवे सतिया रूप सालाणा॥
हो रावळजी_ _ ॥५६॥

राव रतनसी हाथ दिराणा काना में कुडल घलाणा।
राव पलट नै रावळ वैराणा जणै वा नरा लार बिकाणा॥
हो रावळजी_ _॥५७॥

राव रतनसी ठगमसी भाटी पीयौ प्रेम रस भाण।
हरि सरणै भाटी हरिनद बालै धिन धिन वा नरा नै॥
हो रावळजी थूझे_ _॥५८॥

सौजन्य - अगरचन्द नाहटा, मरुभारती

(बिलाडा निवासी चौधरी श्री शिवसिंह चोयल द्वारा मौखिक परम्परा के आधार पर सगृहीत। शोध पत्रिका भाग २ अक ९ में श्री घायल द्वारा दिये गये पाठ के आधार पर पाठान्तर दिये गये हैं।)

(१४)

रूपादे री वेल

रावळजी थूझे राज पदमणी मे(हे)र मया कर मानौ।
मानेतण केयौ मानौ डोर घणो री झालौ॥
यू सैंजाडे अमरापुर में माल्हौ॥टेर॥

(रूपादे का पूर्वजन्म)

दोहा— बेटे सू बेटी भली बेटी भली सपूत।
जे लालर नी जनमती अलसी जावत अगुत॥

अलसा [illegible] म्हारी वचन सभालौ मन में धीरज धारौ।
काठाय[illegible] घोडा लावौ चारण भाट चुकावौ॥१॥

लालर केवै बाबोजी सरग सिधावौ मन में धीरज धारो।
काठियावाड़ [illegible] घोडा लामू, कारज सारमू थारौ॥२॥

लालर धरियौ पागडै पाव भाला मळकियो है हाथ में।
भालै विलूबी चौसठ जोगणिया लालर सू बणिया लालजी पल में॥३॥

मारग [illegible] मिळिया मालजी मिळकर बात कराणा।
लालो म्हारो नाव अळसीजी रो जायौ कारज बापैजी रै आणा॥४॥

लारै चढी है कछवाह री बाहर द्रिवे नौपत डाको लागीयो।
लालजी सूता है दुसाळे खूटी खाच वड री साखा हेंवर बाधीयो॥५॥

ठाकरा थारा घोडा पाछा राखो खत्री खेलेला माणक चौक में।
लिया है हाथा में हरिया सैल भालो वो रोपियो बडलै रै पेड में॥६॥

नगन सरूपी न्हावण बैठा आडो न धरियो धागो।
केसर वरणा मोय परणीजो पाप निजर रो लागो॥७॥

सिंह रूप केकाणु दळिया नाहवण वणग्या थै नारी।
काठियावाड रा किंवाड भाग्या नहीं परणीजण री आसग म्हारी॥८॥

बिदरै बालै रै घरै जलम लेसू, रूपा ह्वैला म्हारो नाव।
चार पहर सिकार खेलसो आजो दूधवै गाव॥९॥

सात भाया री बैन लाडली मन में धीरज धारौ।
काठियावाड रा घोडा लाई चारण भाट चुकावौ॥१०॥

(रूपादे का जन्म)

राणी नै लागौ है पैलो मास सरवर न्हावण राणी सावरी।
लागौ है दूजौ मास मनडो गयो साठा सेलडी॥

राणी नै लागौ है तीजो मास मनडो गयो खारक खोपरा।
लागौ है चौथोडो मास मनडो गयो सूळा सोंखता॥

राणी ने लागौ है पाचवों मास मनडो गयौ सीरा लापसी।
लागौ है छठोडो मास मनडो गयौ कायै पान में॥
राणी नै लागौ सातवों मास मनडो गयौ लाडू घेवरा।

लागौ है आठवों मास मनडो गयौ खाटै बोरा में।
राणी नै लागौ है नवमो मास बिदरै वाले रै घरे जलमी धीवडी॥११॥

जलमी जलमी वार नै सुवार सोने री घडिया में बाई जलमिया।
बाजिया ओ वाजिया सोहन थाळ तावे रै पाये बाई जलमिया॥१२॥

कोरा कूडा कीया सिनान रेसम रै गदरा में बाई पोढीया।
जलमती रो है जसोदा नाव रूपा केय नै बाई नै बोलावीया॥१३॥

वाचिया वाचिया बामण वेद पुराण तेता जुगा रा वाच्या टीपणा।
भरियौ भरियौ मोतीडा रौ थाळ खानो रै भुआ जावणा॥१४॥

अरे खातो थू है म्हार धरम रो वीर पालणियौ घडे नीं वीरा फूटरो।

आवौ नी म्हारै धरम री बैण पालणियौ घड़ा चनण रूख रौ ॥१५॥

अवर बधै दिन रात रूपा बधै दिन में चौगणी।
अवर माडै ओरा नै साळ रूपा माडै हर री देवळी ॥१६॥

(विवाह)

मालजी केवै म्हारौ वचन साभळौ घोडै जीण मडाणा।
च्यार पौर सिकार खेलसा पाणा जाय दूधवै पीणा ॥१७॥

राजा तणा मानेती कहियै गरव घणो गोलणियाँ।
पूछ पकडने खेत पछाडियौ धरती पाव नीं धराणा ॥१८॥

लाटो किणरौ राज सहेली कठे खेत रा हाळे।
बाभो सा वनवास पधारिया, मन में ही घोडो ढाळी ॥१९॥

म्हारी रूपा मोय मोळाया मन रा जाण्या कीया।
साजडियै खरणाटौ बाज्यौ मूगडला चराया ॥२०॥

बरतण ले ओडी में धरिया मलकी राज महेली।
कान पकडनै दुआ दुआ कीया ऐसी राज सहेली ॥२१॥

विदरा सूता हुवौ तो थारै आवो रावळ माल बुलाणा।
थारै है रूपादे धीव मालजी रै सगपण थपाणा ॥२२॥

म्हैं टा घर कोलिया सिरदार थे राजविया रा डींकरा।
नहीं पूरवै थारै घुडला नै घास पाणी नीं पूरवा ॥२३॥

तोरण बाना दूधवै गाव घुडला पावा मेहवे जाय।
अरज सुणो म्हारी ठाकरा मालै नै थे कवर केवाय ॥२४॥

चार महीना चौमासौ कहिमे देव हरि रा पौढे।
गुरु उगवसी गया तीरथा पूगळ दी है पूठै ॥२५॥

रूपा तूटी क्यू नी पालणै री डोर मोटा घरा सू सीर घालिया।
म्हैं तो टींकिया छोटा सिरदार मोटा बनडा कदेई नीं टिकाय ॥२६॥

रावळ झुकायो महमद मोळियो हाथा में सिरोही तरवार।
बींद बण्या रावळ माल बाध्या हाथा पगा रै कावण डोरडा ॥२७॥

पेलै फेरे री माग मागो कन्या थानै देसा दायजो।
बाभोसा दो म्हाने पाडळ गाय गगाजळ धाडो हासलौ ॥२८॥

दो म्हनै ताखो नाग सेवा कावळियौ दो म्हनै दायजै।
दो म्हनै धारू मेघवाळ तोळी रौ तदूरौ दो दायजै ॥२९॥

रावळ माल रूपादे राणी हाल्या घरा नै जावै।
डीगा तोरण दीखे फूटरा सइया मगळ गावै ॥३०॥

(धारू के घर उगमसी भाटी के आने पर मेहवे मे जम्मे-जागरण का आयाजन)

घर धारू रै धरणीधर आप परहरिया पूरबला पाप।
ओंकार ले जपिया जाप जग आरभिया अजपा जाप ॥३१॥

भजो राम विघन नी व्यापै पाप री बेडी परम गुरु काटै।
आपणे गुरु नै सायब कर जाणौ सिंवरौ सता सिरजणहार ॥टेर पहली॥

घर धारू रै पाव धराणा पळटिया पाप धरम थरपाणा।
पूरी पाच परम गुरु थारी सता लग पूगा परियाण ॥३२॥

हाथ जोड उठै रिख धारू निवण करै सत गुरा नै।
भेळा रहता नित नित मिळता जुग बीत्यौ मिलिया नै ॥३३॥

रावळजी बूझै राजपदमणी मेर मया कर मानौ।
मानेतण केयौ मानौ डोर धणी री झालौ।
यू सेंजोडै अमरापुर में म्हालै ॥टेर दूसरी॥

गुरु ऊगमजी वचन भाखिया धारू मेघ बुलाणा।
गुरु ऊगमजी पाट बिराजै ज्यारा दरसण करणा ॥३४॥

ऊरब पूरब पिछम दिस पाट वसतुवाना बोहरे री हाट।
बधै भळै मोरत ओ ने रै घाट माड चौक पूराला पाट ॥३५॥

अजैपाळ गुरु सिमरथ सामी गुरु ऊगमजी धारू है बाभी।
इतर सता रौ कहौ कीजै जाय वायक रूपानै दीजै ॥३६॥

लेय नै वायक बूवौ मेघवाळ जाय ऊभौ रूपा रे दरबार।
भली करनै आयौ गुरा रा कोटवाळ बीज थावर रूडो है वार ॥३७॥

सुगरो माणस भेंटियो देह धार आज भळ ऊगौ काछ्य सुत भाण।
भला पाम्य दरसण दिया आज रिख धारू आण ॥३८॥

मो भरतार नरा रदो नायक आडा पाळिया पूनू पायक।
खोटा माल खजानै रा खायक इसडै सकट कोंकर झलू वायक ॥३९॥

कह रिख धारू सुणौ बाई रूपा वचन गुरा रै बहाणा।
जनम मरण रा सासा मेट दा निज नाव लेय तिराणा ॥४०॥

धारू मेघ धणी रा पायक वचन गुरां रा अब कैणा।
निवण सलाम सतगुरुजी नै कहिजे हर मिळावे तो मिळणा ॥४१ ॥

गरहर गरहर इदर गाजे मेह अधारी रात।
म्हैं कीकर आऊ रिख धारवा हू अबला री जात ॥४२ ॥

हुकम हुवैला तो दरसण करसा पूजा गुरां रा पाव।
गुरु चरणा दडौत कहीजे मीरा बेगै रो जाव ॥४३ ॥

नगर नारायणे सू रिणसी पधारिया खिवजी थारै साथ।
ज्यू अधरावा बाई एकला पधारज्यो थारी सावरौ राखै लाज ॥४४ ॥

कछ भुज सू जैसळ तोळो पधारिया सता नै मिणधार।
ज्यू अधराता एकला पधारज्यै सावरौ राखै लाज ॥४५ ॥

नगर रूणीचै सू रामदे पधारिया डाली बाई थारै साथ।
म्हैं जाऊ सतगुरु रै द्वार चार पौर म्हारी सैज रुखाळ ॥४७ ॥

ताखा नाग धरम रा नीरा केयौ म्हारौ करणा।
पाव परस नै पाछी आऊ उतर माल नै देणा ॥४८ ॥

सज सिणगार जमै में पधारै मोतिया थाल भराणा।
अेक जडीजे डोढी दूजी ठघडे गुरां रा वचन फळाणा ॥४९ ॥

हर रै द्वारै गुरा रै पायै रीते हाथ कवहु नीं जाणा।
होय सौ पाव मिसरी मगाय जाय सतगुरु नै चढाणा ॥५० ॥

वीरा रे हीर चीर गजमोतिया सिर पर कळस धरै।
बाई जमे में साच रै ठमठम पाव धरै ॥५१ ॥

रूपा रा जायर बाजणा सूतोडो सैर सुणै।
ओ पथ गरवा देव रो खोजीया सू खबर पडै ॥५२ ॥

रुणझुण रुणझुण जाझर बाजिया चौकीदार चेताणा।
आळस मोड नै उठै आधळौ झपकै ई चीर झलाणा ॥५३ ॥

डावै पग रौ जाझर देऊ हार टीकायत थानै।
रतन अमोलक देऊ मूदडो छदो राखजौ थानै ॥५४ ॥

केवै आधळौ सुणौ रूपादे जे दुख दैला थानै,
थारी पत उगमजी राखसी म्हारी लाज है थान ॥५५ ॥

केवै रूपादे सुणौ आधळा जे दुख दैला थानै।
थारां पत परमेसर राखसी म्हारी लाज है थानै ॥५६ ॥

अेडौ काई कोपियो किसन मुरार धाडो पडियौ पोळिया माय।
बाजना जाझरिया हीरा नगहार राणी लूटीजी सिरैबजार॥५७॥

सोवै काई गिरधारी थारी निद्रा परी निवार।
घडीक आईजै बाई रूपा रै भाव॥टेर॥

(धारू मघ के घर पहुचने तक हर कड़ी के बाद यह टेर गायी जाती है)

बाई रा बूठा दोनू नैण अेक सावण नै दूजौ भादवौ।
बाजियो है पगा में जाझर रो झणकार नख सख गैणो वापरै॥५९॥

पोळीया पोळा थारी परी निवार जमै जाणो है गरवा देवरै।
राणी पोळ खुलै परभात ताळा जडिया वीजळसार।
राणा कूची है मालजी रै हाथ खाल कढावै माय विस भरै॥६०॥

राणी लीयो सतगुरुजी रौ नाव कूची बणाई चिटु आगळी।
धरियौ ताळै पर हाथ बिना कूची ताळा झड पडिया॥६१॥

वगत विहूणी कठै सू तू आई किण री नार किये गढ जाइ।
रूप भरिया डाकण कैवाई आगी रह सती म्हारी नेडी मत आई॥६२॥

रावळ माल भूप इदकारी जिणरी कहिजू नरोपत नारी।
साचै गुरु रा नायक सारू झूठ बोलू तो मत उबारी॥६३॥

मिळता ई बोलै रिख धारू री नार मोडा कीकर आया हो रावळजा री नार।
था बिना बिलखौ साधूडा रौ साथ माथै आई है बाई माझल रात॥६४॥

गैली मेघवाली रिख धारू री नार म्हारै कहिजै सोकिया रौ साल।
आडा पोळीया अबखा घाटा इण सकट सू लाधिया भव जळ पार॥६५॥

पूगा बाई रूपा जमै मझार आगै जळता दीपक देवता रो द्वार।
सारा ई सता नै म्हारा जाजा है जवार लुळ लुळ लागै
बाई गुरा रै पाव॥६६॥

भजन

सोने रूपे री ईटा पडाऊ मिंदरियो चिणाऊ धारू थारै आगणियै।
आगणियै पधारो देवरो हर थानै मोतिया बधावै बाई रूपा॥टेर॥

कूकू केसर री गार गळाऊ मिंदरियो निपाऊ धारू थारै आगणियै।
नागा मायलो चनण वढाऊ मिंदरियो किडाऊ धारू थारै आगणिय॥

समदा मायला मोती मगाऊ चौक पुराऊ धारू थारै आगणियै।
सुरै गाय रौ घिरत मगाऊ जोतडली जिगाऊ थारै आगणियै॥

देस देस रा संत बुलाऊ जमो जगाऊ थारू थारै आगणियै।

खीर खांड पकवान मिठाई संता नै जीमाऊ थारू थारै आगणियै।

बाई रूपारी विणती सरणा में मोरी राख थारू थारै आगणियै ॥६७॥

वीणो बजावै रूपादे राणी मुख सू बोले इमरत वाणी।

मोढ अगूठो माल जगाया उठो माल नींद भरमाणा ॥६८॥

थारी मानेतण मेघवाळ्यां घर माल्है।

किण विध राजा राज कमाणा ॥६९॥

म्हारै नै रूपा रै गाढा हेत ज्यू बिछावै काटा रेत।

राणी सूती सुख भर सेज थारै उठै राणी ऊधा देखा ॥७०॥

ये मालजी आमिया ठामिया कुल छोडो कनक काबिया।

मानेतण राणी भूपा नै छोड मिळगी है भाभीया ॥७१॥

थे मालजी आमिया ठामिया कामण कीया भाभीया।

आपो सभाय हाथ सू साभीया भूपा नै छोड मिळगो भाभीया ॥७२॥

थे हा मालजी आमे सामे कामण कर दिया किनक रै कानै।

साच क झूठ जिको वचन आप सुणावो म्हानै ॥७३॥

कर दीपक नै जोया दलीचा माय बासग बभकाणा।

चेतन भई चद्रावळ राणी मालजी किरोध भराणा ॥७४॥

खमा खमा म्हारा कायम किरतारू मो अबला रा आधार।

राणी कामणगारी गई जमै रै माय सेजा सोवाण बासग नाग ॥७५॥

पल में राव दुहाई फैरी हद बेहद पलक में हेरी।

सोधवो राणी रा ओर नै साळ जठै राणी है रूपादे

बठै बाजे मृदग ताल ॥७६॥

केवै राजा सुणो सब साथ घोडे गगाजळ कर दो पिलाण।

वेगा लावो राणी रा सैलाण पाच गाव दऊ इनाम ॥७७॥

थे हो मालजी भोळा भरतार केयो नी मान्यो लिगार।

उण रो नीं जाण्यो विचार राणी गई जमै मझार ॥७८॥

गुरुजी मघली दिवलै री लोय कोई'क नुगरो आवियो।

गुरुजी गवळी खाई भर पेट पगरी मोजडी ले भागियो ॥७९॥

बाई रूपा री गमी मोजडी सोच भयो सता नै।

आरोदे सू आवै मोजडी पैरो बाई पगा में ॥८०॥

गयौ नुगरौ राज द्वारै चुगली झूठी खाई।
सत वचना सू पगरखो पडगो नुगरै रै खाक बिलाई ॥८१ ॥

हाथ जोड उठै रूपादे निवण करै सत गुरु नै।
पार लगा तो पाय लागसा नीं तो याद राखजो म्हानै ॥८२ ॥

केवै उगमजी सुण रूपा डिगमिग जीव नीं करणा।
जलम मरण रा सासा मेट दो निज नाव ले तिरणा ॥८३ ॥

गुरु उगमजी वचन भाखिया साच वचन ले इन्नै।
रामकंवर रुखवाळौ मेलू, पायकडा नै पालै ॥८४ ॥

केवै माल दुहाई फेरी रानै निवळी राणी किण सरी।
हद बेहद थारी पलकमें हेरी झूठी बात सुणू नी तेरी ॥८५ ॥

गई बागा बगीचा माय अजब फूल बिण लाई महाराज।
केई थारै केई म्हारै काज चोखा फूल लाई ओ राज ॥८६ ॥

बाग न बाडी राय न चपो न कोई बाग सिवाणे।
तीजौ बाग मडोर कहिजे अळगो दूर पियाण ॥८७ ॥

फिट थारी जरणी फिट थारी जात।
रमिया साधुडा रै साथ हमैं मरणो हुसी म्हारै हाथ ॥८८ ॥

धिन म्हारी जरणी धिन म्हारी जात सुकरत काम कमाया इण रात।
बोलिया खेलिया सतगुरुजी रै साथ
धिन मरणो हुवै रावळजी थारोडै हाथ ॥८९ ॥

त्रेता जुग में तारादे राणी हारियौ हरिचद दिरिया नीं हारी।
आ वळिया आवौ म्हारा कुजबिहारी मो अबळा री अरज निहारी ॥९० ॥

हट हिरणाकुस हारियौ जिणरै बळमियौ पैलादो जाम।
केसर रूप धारियौ जिण काज खभ फाड लीयो सभाळ ॥९१ ॥

दवाजुग में द्रोपदी नार दुरजोधन जुध कियौ हद पार।
दस हजार गज बळ घटयो चीर बढायो अपार ॥९२ ॥

कळजुग में राजा बळवत सीधो भूमिदान बामण नै दीनौ।
उण वळिया बावन रूप होय बळ छळ लीनौ।
आ वळिया म्हारा मोटा स्याम घडी'क आवै नीं बाई रूपा रै भाव ॥९३ ॥

खडग आकासा जीभ ताळवे धरती पाव लपटाणा।
केवै मल्लजी सुणो रूपादे ज्या पदे पग धरणा ॥९४ ॥

साळू सावट लीवी सभाळ चोखा चावळ रेसमी दाळ।
माय मेहकी फूला री फूलमाळ लुळ लुळ लागै मालजी रूपा रै पाय ॥९५॥

थारै गुरु रो राणी पथ बताय म्हैं ई चालसा उण रै लार।
थै हो मालजी भला भरतार अलख सिरजिया म्हानै थारै लार।
साचै गुरु रो पथ बताय तो आज धोका म्हैं गुरु रै पाव ॥९६॥

हर सिंवरै सिरजणहार थानै सिंवरै कोई सत विहार।
जिणरी गति कोई जगदीस सवारै, थिन पाचो जी जगदीस जवारै ॥९७॥

हाथ ज़ोड धणी अरज गुजारै आप तणै माल आवै सरणै।
भव तारण मोय लीजो ऊबारण सरगा सबद सुणेवा।
हर सरणै भाटी हरजी भणै काना कुडल घलेवा ॥९८॥

– *सौजन्य* डा. सोनाराम विश्नाई,
बाबा रामदेव पृ ४१९ २८

(१५)

मालेजी री महिमा

बधिया धरम बध्यौ एकायत
चनण चौकरा कलश थापनै
जमो जगायौ जणै पूजा चढाई अलख रै माड।
महिमा घणी माल रे मेळे ता मिलजो सुर नर क्रिरोड ॥१॥

सत्तरा भजन सभाळो साधो
कुबध भर मना डारो तोड।
साध देखनै थै तन मन अरपो
सिरख पथरणा सुरगी छोड ॥१॥
महिमा घणी– – –

सिंवरा बडा रिखा रा मारग
सिंवरा साध सतारी ठौर।
बीज सनीचर चैत रो मेळो
जाऊ भाण मिले कावडिया क्रिरोड ॥२॥
महिमा घणी– – –

कहै मालजी सुणो रूपा
गुण गावत आई दिल दौड।
सैदेई साहिबजी सू मिळसा

मिळसा मास दवादस माहि ॥४॥
महिमा घणी- -

अलख तणा आया परवाणा
मालजी निवण करै कर जोड।
जालम छोड जोळ में हालो
आणी जोत नहीं कोई और ॥५॥
महिमा घणी- -

मोहरत देखने मालजी चढगा
नीसाण घुराया घमघोर।
डेरा दिराया सहर रै काठै
जणो आरम अैसा इदर री जोड ॥६॥
महिमा घणी- -

चढ असवार साथ सोहिम क्नो
हाकिम निवण करे कर जोड।
कहो (नी) माल थे किसे गढ जावो
हुकम करो बाका राठौड ॥७॥
महिमा घणी- -

आया जठै उदै म्हें जावा
लादो नाव धरम री ठौड।
हेत कर सेवा कीवी सामरी
कट गया पाप जलम रा क्रिरोड ॥८॥
महिमा घणी- -

वणियौ तुरग सोवनी साठ
औ परगन मेल्हे धरणी पौड।
मालजी घोडो सरगनै खडियौ
जाऊ सडदो साथ करै कर जोड ॥९॥
महिमा घणी- -

इदर तणौ असथाने पूगा
गोखा बोलिया कोयल मोर।
सुर नर साध हिंडोले हीडै
ज्यारै हीडा बध्या रेसमी डोर ॥१०॥
महिमा घणी- -

रूपा कहे सुणो धारवा
बैलिया लावो बैल सू जोड।
आगे रावळ मालजी सीदा
अपणै सरग भवन में चीधी ठौड॥११॥
महिमा घणी_ _

पट दियौ म्हा में खून पडियौ
था परिली म्हारै बध्या मौड।
क्रिया बिना यूं किसी कामणी
कठै हाली थू बैलिया जोड॥१२॥
महिमा घणी_ _

जाळला सदर धणी रे पाव
म्हारे बात नहीं कोई और।
थाळी माहे किया सो वाना
कळी केवडो दाख बिजोर॥१३॥
महिमा घणी_ _

घम घम पड्या बैल रा बाजै
बाज ताल करै रिमझोल।
सत री बैल गेब सू हाली
जणी सरगा चढ़ी लुमती चाल॥१४॥
महिमा घणी_ _

दोनों ही साथ बराबर ऊभा
पोळिया निवण करै कर जोड़।
सिव धरम रा थे सहीसै कयो
बडा धरमरा मसकत मोड॥१५॥
महिमा घणी_ _

परसण हे मिलिया परमेसर
राजा विया रजानद जोड़।
कहो (नौ) थे किसी धणी ध्यावौ
इसडै मते आयो नहीं कोई और॥१६॥
महिमा घणी_ _

अलख निरजण सिवरिया साधो
राम भज्यो राजा रिणछोड।
साहिब एक भेख सगळा में

अे सेहस नावा में एक होज मोढ ॥१७॥
महिमा घणी.. –

सतरो कथा साभळो साथा
कीधा धरम पावा निज ठौड।
नाव लिया हेला निसतारो
ज्याने जम किंकर लागे नहीं जोर॥

सबळ कहता जके साच कमाया
सरगा चढ लूमती लोळ।
माणक बगस माल सलखा रो
पीरा निवण करै कर जोड॥१८॥
महिमा घणी.. –

सौजन्य चौधरी शिवसिंह मल्लाजी चोयल
शोध पत्रिका भाग २ अंक २

(श्री चोयल ने इसे हरजी भाटी की रचना माना है परन्तु यह बगसा खाती की रचना प्रतीत होती है।)

(१६)

मालैजी री जन्मपत्रिका

(रूपादे-मल्लीनाथ के पूर्वजन्म की अनुश्रुति)

बुधजी चालो पाटण सहर में
धूणी धुकावो पाटण पोळिया।
करो अपणा गुरु नै याद
अेक जुग रौ आसण साजसा॥
बुधजी लेवो मालक रो नाव
दिल रा धोखा आलम राजा पूरसी॥टेर॥

बुधजी लीधी चींपी हाथ
नगर चेतावण अबे हालिया।
पापी है पाटण रो लोग
चिमटी नहीं घालै कोरे चून री॥२॥

बुधजी दियो धुणी रो कोटवाळ
जाय लवार नै हेलो मारियो।
लवारिया सुण ले म्हारी बात

सत्तर भाग नै करदे कवाडियो ॥३॥

सावामीजी कैसी सामियों री प्रीत
मरै न मसाण जोगी तापिया।
ओ मेल दो धूणी रा कोटवाल
जातोड़ा ले जायजो कवाडियो ॥४॥

बुधजी बुवा वन री बनवास
वन में नहीं लाधी सूकी लाकड़ी।
घालियो है कदम नै घाव
दूधा रा घरोळा परा छूटिया ॥५॥

बुधजी सूता किसड़ी नींद
आधी नै अधराती हेलो पाड़ियो।
थानै तूठा है सिंभुनाथ
जावो धूणी सेवा सोपड़ो ॥६॥

बुधजी उठायो सिर पर बोझ
सिरे बाजारां हालियो।
गया गाधा री हाट चनण
बेचे मुहगा माल रो ॥७॥

बुधजी काई न्हा। कासी केदार
काई अडसठ तीरथ न्हाविया।
काई मिळी नागों री जमात
माथा रा मुकुट कुण पाड़िया ॥८॥

गुरु नही न्हायो म्हू कासी केदार
नहीं म्हू अडसठ तीरथ साजियो।
नहीं मिळी नागों री जमात
माथा रो मुकुट हाथों ही पाड़ियो ॥९॥

बुधजी गया कुम्हार रे बार
जायनै कुम्हार नै हेलो पाड़ियो।
कुम्हारिया सुणले म्हारी बात
म्हारा बचन गुरां मत लोपजे ॥१०॥

क्यू करियो मोड़ा रो बिसवास
रहता रा छुडावै सोंमी झूपड़ा।
नित उठ करती दान पुन्ना

जिमावतो आलमनाथ नै ॥११॥

सामीजी घालियो झोळ्यै में हाथ
पग री झाटकै पावडी।
ऊठियो पाटण रो अरडाट
पाटण दाटण कर दीनी ॥१२॥

गुरु सजीवण सबद सुणाय
आ बिलखै भारा री पूतळी।
गुरु लुळ लुळ लागू पाव
गुरु री सेवा म्हूं सापडो ॥१३॥

कुम्हारिया ह्विजे मेवा रो माल
घर (नै) सलखा रो मौबी डीकरो।
बाजिया सोवनिया गज थाळ
सोना री छुरिया सू नाळा मौरिया॥
घर घर वदनमाळ
सैइया जावे रूपा रा सोळमा ॥१४॥

कुम्हारी ह्विजे रूपादे नार
घर (नै) बदराजी रै मौबी डीकरी।
बाजिया सोवनिया गज थाळ
सोना री छुरिया सू नाळा मौरिया ॥१५॥

बाला ह्विजै कवर जगमाळ
मुलतानी वसावळी तोरण बादजे।
बिछडी ह्विजे पाडल गाय
रवड (रगड) गगाजल धोय लो ॥१६॥

गुरु ह्विजे उगमसी आप
भव भव मेळो गरवा स्याम रो।
बुधा ह्विजे धारू मेघवाळ
पारस रे पीपळ पाना ऊतरे ॥१७॥

सौजन्य - शिवसिंह मल्लाणी चोयल

वरदा वर्ष २० अक २ अप्रेल जून १९७७ पृष्ठ ३९ ४४

(१७)

रूपादे री वात

रूपादे वाल्है तुडियै री बेटी खेत माहे रखवाळी करती हती। रोही रो खेत हतो पाणी पूर हतो। सू ऊगवसी भाटी रावळ जैसळमेर रै धणी रो बेटो पैंडे आवतो हतो सू रोही माहे तिस मरतो हवो। साथै कावडिया हता।

ताहरा रूपादे बैठी हती तठै आया। आय कर पूछियौ बाई पाणी छै? रूपादे कह्यो छै ऊगवसी कह्यो "आवौ साथा पाणी पीवौ।" ताहरा रूपादे रौ मुहडो भुडो हुवौ। जू पाणी हतो सू पी गया। अर बाप भाई पीसी सू कासू पीसी? औ सोच कियौ।

तद ऊगवसी पाणी पी अर घडै ऊपर हाथ दै कह्यो "साहब पूरो।" तद घडो भरीज गयौ। तद रूपादे पगे लागी। ऊगवसी कह्यौ -- "परणी कि ना? कह्यौ कुवारी छू।

तद रूपादे रै हाथै ताबै री वेल भाती अर कह्यो "बीज रै दिन सात घर मांह मागि अर कावडिया नू बाट देणी। इयू कहि माथे हाथ दे ऊगवसी चालता हुआ। रूपादे ज्यू कह्यौ हतो त्यू कियौ।

आ रूप माहे सुदर हुती। सू हेक दिन मालैजी दीठी। तद तुडियै नू कह्यौ जू थारी बेटी मौनू परणाय।" तुडियौ तो नीछो कियौ पण मालोजी जोर थाती परणिया। राणी हुई पण बीज रै दिन सात घर माग कावडिया नू खीच करि बाट देवै।

कितरै हेकै दिने ऊगवसी महेवै आयो। कावडिया भेळा हुआ। बाकरा मारिया। न्याळो कियौ। इतरै माहि ऊगवसी कावडिया नू पूछियो अठै वाल्ही हुती सू कठै छै?

कावडिया कह्यौ राज उवा तो मालै री राणी हुई छै। पिण कावडिया नू भारी मानै छै। ताहरा ऊगवसी कह्यौ कोई खबर दो बू ऊगवसी आयो छै।"

ताहरा अेकै कावडियै जाय खबर दीवी "बाई ऊगवसी आया छै। रूपादे कह्यौ सीरा आथण नू हर भात करि आइस।"

रूपादे सौका मालै जी रा कान भरिया कहै "आ ढेढा रै जावै छै। आभडछोत करै। रावजी कह्यौ आप आखिया देखू तो मानू।

रात पडी तद रूपादे कावळ लोवडी ले अर पावा लागी। ताहरा सौका कह्यौ मालैजी नूं उठो देखो ढेढा रै गई छै।

ताहरा रावळजी तलवार ले अर लारै हुआ। जाई देखै तो ऊगवसी बैठा। मुह आगै बैठी छै। कावडिया गावै छै।

मालै देखि चाकर कना रूपादे री जूती चोराई। अर आप देखे छै। तितरै कावडियै हेकणि कह्यौ "बाई नू सीख देवौ। बाई री आ ठौड नहीं छै।

ताहरा थान आगे चढावौ हतो आत्रदळि काळजो छूकियो। सू थाळी माहे घात रूपादे नू दीन्हो। अर कह्यौ जा बाई थारो भलो हुवे।"

रूपादे आगे जावे तो जूती नहीं। ताहरा सारा ही कावडिया उठिया देखण लागा। पण जूती नहीं।

ताहरा ऊगवसी कह्यौ "साधा साहिब सों अरदास करौ। साहिब जूती इयै डावडी री आवै।"

ताहरा उमडी बीजी जूती अरस सू आई। रूपादे पहिरी घरा नू चाली।

बीच रावळ मालै राह रोकियौ। आवती नू आडे आय फिरिया कह्यौ "कौण छै?" कह्यौ "जी रावळी हीज दासी छै।" कह्यो कठै गई हुती?" ताहरा रूपादे कह्यो "फूला नू गयी हुती।" कह्यौ "म्हारी बायर नै फूला नू जावे सु किसी बात?" ताहरा रूपादे कह्यौ "राज म्हारिया सोका रै आदमी छै। सू ले आवै। म्हारै आपणवाळो कोई नहीं।"

रावळजी कह्यौ "देखू फूल?" रूपादे कह्यौ "कासू जोइसौ?" पिण रावळजी कपडौ दूरि कियौ। थाळी उरही लीवी। थाळी माहे देखे तो विविध विधि रा फूल छै।

महेवै माहे एक ही बाग नही। अ फूल कठा छै? तिके फूल दीठा। अर महेवै माहे अेक ही फळ नहीं तिके फळ दीठा।

थाळी माहे घातियौ हुतो सू मालैजी दीठौ हुतो। ताहरा मालोजी रूपादे रै पगै लागणै लागा। ताहरा रूपादे हाथ पकड लियौ।

मालोजी कहै "रूपादे जी इयै पथ दोहरो छै तै माहे म्हानू ही घातौ। रूपादे कह्यौ राज पथ दोहरो छै। "ताहरा मालोजी कहै "हू हालीस।"

ताहरा पाछा ऊगवसीजी पासे गया। मालौजी पण पगा लागा। रूपादे कह्यौ राज नू पथ में घातौ।" ताहरा रावळजी रै हाथै ऊगवसी ताबे री वेल घाती अर मोगेडियो दियौ कह्यो बीज रै दिन सात घरा सू आखा माग कावडिया नू बाटि देरायी। रावळजी नू कावडियौ कियौ।

परभाते ऊगवसी जी नू घरे ले गया। न्यालौ कियौ। ऊगवसी जी नू मास राखिया। पूरी विद्या ले सीख दीवी। इयै विधि रावळ मालोजी सीधा।

अनूप सस्कृत पुस्तकालय बीकानेर १० ६ १२६
प्रस्तोता मनोहर शर्मा "राजस्थानी वात समह साहित्य अकादमी
नई दिल्ली १९८४ पृ २६८

इसी बात को मालेजी पथ में आया तै री वात" भी कहते हैं द्रष्टव्य बाबा रामदेव डा सोनाराम विश्नोई पृ ५३७ ३८

(१८)

रावळ माल, रूपादे के विवाह की कथा

चलत

जपो अलखजी को जाप सुहागण बाई
मीड पड्या से घरमी थाको बावडे ॥टेर॥

सूता सुखभर नींद राणीजी
सूता सपना में जोगी हो गया ॥

काई खाग्या भून्योडी भाग मतवाळा राजा।
सपना की वाता साची नहिं हावे ॥

करिया भगवा सा भेरव बाबाजी म्हारा।
पगा खडाऊ पहरी पावडी ॥

झोली झडा लीना हाथ बाबाजी म्हारा।
निरगुण साधूडा बाणे रम गिया ॥

राजा — कुण है थारे माय र बाप सवागण नारी
किसडा राजा की बाजे डावडी ॥

रूपादे — नहीं है म्हारे माय'र बाप मेवा का राजा।
आभर तो पटकी धरती झेलिया ॥

राजा — नहीं बीज बिना खेत सुहागण नारी।
नहीं पुरुष बिना स्त्री ॥

रूपादे — सुणल्यो म्हारा समचार मेवा का राजा।
बाला भदरा बाजू डावडी ॥

बालाभदरा — काई मरग्या घोडा हुण मेवा का राजा।
काई खजान टाटो आ गयो ॥

काई पडग्यो मोटौ काम मेवा का राजा।
काई फरमावो मोटी चाकरी ॥

राजा — नहीं मरिया घोडा हुण बालाजी भदरा।
नहीं तो खजान टाटो आवियो ॥

ओ ही है मोटो काम बालाजी भदरा।
थारी बेटी ने मने परणाय दे॥

बालाभदरा थाके है परणबा को चाव मेवा का राजा।
बेटी परणो थे जैसलमेर की॥

सुणल्यो म्हारा समाचार मेवा का राजा।
म्हें तो घण्या का छोटा भोमिया॥

चद्रावळ मूडौ देख्या को लागे पाप मेवा का राजा।
परा चला जावो म्हारा महल से॥

थाके हो परणबा को चाव मेवा का राजा।
बेटी परणाती जैसलमेर की॥

ल्याया ल्याया कूडापथी नार मेवा का राजा।
परण पधारया आडी डीकरी।

राजा फलका पोबौ थारे हाथ चद्रावळ राणी।
कासौ परूसे राणी रूपादे॥

ढोल्यो ढालवो थाके हाथ चद्रावळ राणी।
सेजा पोढेली राणी रूपादे॥

ताळो जुडबो थाके हाथ चद्रावळ राणी।
कूच्या राखेली राणी रूपादे॥

तू तो गळा को नोसरहार चद्रावळ राणी।
राणी रूपादे सिर को सेवरो॥

तडके दिन उगता थारे से बात चद्रावळ राणी।
बद करा दू थारा पेटिया॥

सौजन्य स्वामी गोकुलदास डुमाडा,
धारू माल रूपादे की बडी वेल
पृ १९ १९५७ई

(१९)

रूपादे के पूर्व-जन्म की कथा

– दोहा –

बेटा से बेटी भली बेटी भली सपूत।
अलसी के लालर बिना अलसी जात अगूत॥

टेर ::

धिन्न धिन्न हो लालरबाई भक्त बिडद बधाई।
गवरी का नद गणेस मनावु सुमिरू सारद माई॥
सतगुरु देव दया का दाता मूल्या राह बताई॥१॥

राजपाट सुख सेज पालकी इनकी इच्छा नाही।
हरि सेवा गुरु भक्ति कीरत आ मन में ठहराई॥२॥

महासक्ति अवतार धारियो जग कीरत फैलाई।
सूर वीर सावत सी सक्ति इसमें कमी न काई॥३॥

रमती खेलती चली जगळ में घोडा चाल सवाई।
सग सहेली साथ चले सब अपना हुकम चलाई॥४॥

मालाणी से चढिया माळदे आया जगळ माही।
बन में भेंट हुई लालर से मिलिया नेह लगाई॥५॥

देख रूप लालर को मन में मालजी हरष मनाई।
लडकी ने छल से ले चाला गढ मेहवा के माई॥६॥

सक्ति रूप झेल्यो नहिं जावे माल रियो पछताई।
कहवे लालर कहा सिघावो साच बोल समझाई॥७॥

प्रगट बात जाणो सब लालर जावा धाडा के माही।
काठियावाडी घोडा ल्यावा तब रजपूती जाई॥८॥

कहवे लालर सुणो मालजी रहवा सीर के माहे।
आधो आध करा सब बाटो राम धरम ठहराई॥९॥

दोनों फौज चढी लालर सग गया धाडा के माही।
काठियावाडी सूर वीरा से माल गया घबराई॥१०॥

दोहा सूरवीर रणक्षेत्र में पाछा धरे न पाव।
कायर काची खा गया नहिं रजपूती राव॥११॥
ऐसा नरा से नारी भली नहिं देवे रणपीठ।
अग्नि आगे जळ जावे ज्यों कुल्हड का कीट॥१२॥
घोडा घेर लिया महासक्ति अब कुछ धोखा नाही।
लालर कहे मालजी सुनल्यो रख थिरचा दिल माही॥१३॥
जो रण से पीछे हट जावे क्या रजपूत कहाई।
आधा देस में बाटो करल्यो जो राम धरम ठहराई॥१४॥
आधो बाटो राम धरम को आधो आध कराई।
गिनती बीच बचे एक घोडो किस विधि बाटयो जाई॥१५॥
सुदर रूप मालदे देखे मन लागी उगमाई।
मन में लगी ब्याह करने की तेज सह्यो नहीं जाई॥१६॥
रूप देख राजी हो दिल में मन में हरष समाई।
प्रगट बाळ मालदे दाखे परणो आप भलाई॥१७॥
रग रूप सक्ति सम थाको मोसे सह्यो न जाई।
रूप पलट कर बात करो मन में थिरचा आई॥१८॥
बलभद्र के जन्म धारस्यू, गाव दूदवा माही।
रमता खेलता आवो मालजी रूपा कह बतलाई॥१९॥
वचन देय रम गई महासक्ति माल मालाणी माही।
भक्ति बीज जुगाजुग अमर जग कीरत फैलाई॥२०॥

(रूपादे का जन्म)
टेर ::

धिन्न हो घडी धिन्न वार
बाईजी बलभद्र के बाई जलमिया।
जोसी का जूना वेद सम्हाल
काई नखत्रा बाई जन्मिया॥
सुभ घडी सुभ वार
रूपा के पाये बाई जलमिया॥२१॥

जन्मत लालर नाम
रूपा नाम बतलावज्यो।

बलभद्र घर घोड़यो रजपूत
करसण करे गरीबो हाल में॥२२॥

बीज थावर दिन वार
बलभद्र के जन्मो डीकरी।
जन्मत लागी गुरा के पाय
भाटी उगमसो भेंटिया॥२३॥

बाई जावे मडळी माय
सुखदेव पवार मेघ के।
पूरब भक्ति अकुर
हरि की भक्ति में बाई लागगी॥२४॥

धारू धरम को वीर
रूपा खेले धारू के चौक में।
अेक गुरु को उपदेस
भाटी उगमसी गुरु भेंटिया॥२५॥

बाईजी खेले मडली माय
मेघा घर जमला जागिया।
बाई के लाग्यो रिखा को उपदेस
धारू कहवे सो कर रिया॥२६॥

धिन्न पूरवलो भाग
भक्ति पाई रिखा के वारणे।
कीरति फैली जग के माय
बलभद्र की डीकरी॥२७॥

खेले चौक के माय
मदिर बणावे धणी ध्यारिया।
बाई जलमिया शुभ दिन वार
नापुत्रा घर मगळ होरिया॥२८॥

कीरति सुणी जगत के माय
रूपा रूपा जग में हो रही।
सुणी मवा में माल
घोडा डकावे गोरमें रम रिया॥२९॥

गाव दूधवा के माय
फौजा घूमे जी रावळ माल की।

रूपा गई पिता के साथ
खेती लाटै आ मूग रसाळ की ॥३०॥

धारू रिख रूपादे लार
मात पिता सब साथ में।
घूमे खळा के माय
खळो काडेजी मूग रसाळ को ॥३१॥

धारू कहे मालजी सुणल्यो
क्यों फिरो जगळ के माही।
घोडा भूखा थे हो प्यासा
ओ कारण बतलाई ॥३२॥

किस कारण जगळ में डोलो
सग में फौज सवाई।
भूखा प्यासा फिरो जगळ में
साच कहो समझाई ॥३३॥

कहे बाई रूपा सुण भाई धारू
सुणल्यो बात हमारी।
पूरब लेख लिखा विधाता ने
करमन की गति न्यारी ॥३४॥

द्वारे आया को आदर करस्या
तन मन सेवा धारी।
जाति पाति कुल कारण नाही
बात मानल्यो म्हारी ॥३५॥

धारू कहे समधार
बळभद्र की कहिये डीकरी।
घर घोड्या रजपूत
भक्ति साधे अलख महाराज की ॥३६॥

बाई को रूपादे नाम
भाटी उगमसी गुरु भेटिया।
धारू के धरम की बहन
चेला दोनु एक गुरुदेव का ॥३७॥

फौजा अनत अपार
मेवा खळ के तनु तण दिया।

बाई फिरै फौज के माय
फिर फिर मनुहारिया कर रिया ॥३८॥

मालेजी आण्या मन के माय
रूपा सक्ति अवतार है।
लिखिया पूरवला लेख
भाग भलो रूपा परणस्या ॥३९॥

:: दोहा ::

सरवर को पछी जपे
आवे तीर नजीक।
प्यासा पानी पी चले
नहिं सरवर के भीक ॥४०॥

मेघमाल इदर चढे
घन बीजळ घन घोर।
यहा नाडा में ठहरे नहीं
सरवर देखो और ॥४१॥

मालजी रजी मस्तक जा चढे
नरमाई के पाण।
टोल्या ठोकर खात है
करडाई के काण ॥४२॥

धारू मोटा से मोटा मिळे
करे मोटली बात।
अपने गरीबी हाल है
कैसे निभसी साथ ॥४३॥

रूपादे मोटा जग में है नही
मोटा है भगवान।
राजा रक फकीर सब
वही रची खल जहान ॥४४॥

बाईजी करे घणी मनुहार
फौज में परूसे मीठा चूरमा।
रुच रुच जीमो सब साथ
चावळ जीमो मीठा खाड से ॥४५॥

घाडा ने मृग रसाळ
टेडया ने नीरे नागर बेलडो।
नगरी में हो रियो चाव
घर घर अचभो सब मानियो ॥४६ ॥

अचरज करे नगर का लोग
गरीबी हाल में फौजा डाटली।
तान मात विस्वास
घारू घ्यावे जूना देव ने ॥४७ ॥

मालजी आसा लग रही आपकी
करो वचन बक्षीस।
पूरव अक टळसी नही
नही कहता विस्वा वीस ॥४८ ॥

मिसरी का परवत बना
कीडी लागी जाय।
मुख मावे सो ले चले
परवत लिया न जाय ॥४९ ॥

टीको नारेळ झिलाय
गरीब हालत में ब्याव रचाविया।
आला नीला बास कटाय
जोसी ने बुलायो वेदी ऊपरे ॥५० ॥

माला को विनायक तबू माय
घर में बाई रूपा तणो।
घर घर मगळ गाय
सावा झिलाया घडी चौबीस का ॥५१ ॥

आला नीला बास कटाय
हरिया तोरण थभ रोपाय।
घर तो भद्रा के।
कुटम कबीलो नगरी के आय
वेदी बनाकर ब्याव रचाय
बाई तो रूपा को ॥५२ ॥

जीमे बिनोरा जीमे जान
सरब फौज का राख्यो ध्यान।

धिन्न है घड़ी धिन्न है वार
रूपा परणे माला के लार
अक पूरवला ॥५३ ॥

नित बनोरा नित मंगळाचार
नित का जान चढी रहे लार।
माला के डेरा में।
सुभ घड़ी सुभ नक्षत्र वार
फेरा फिरे माला की लार
राणी रूपादे ॥५४ ॥

कन्यादान हथलेवा की वार
वेदी हवन भक्ति अधिकार।
धारू भद्रा को।
रूपा कहे सुण धारू वीर
बिछड़े पड़े पैली तीर
कब मिलणा होसी ॥५५ ॥

सात फेरा बाई फिर रया
माला के लारे।
वचन भाव पूरो
भक्ति पद धारे ॥५६ ॥

दोनू बिच में राम है
सायबो पार उतारे।
सुगरा नर सरणा आवसी
नुगरा नरक सिधारे ॥५७ ॥

गुरुमुख वचन निभावसी
मालिक वाने तारे।
साचा के सायबो संग रमे
दिल कपटया के बारे ॥५८ ॥

(बारात की रवानगी)

मात पिता से मिला प्रेम से कुटुम कबीला भाई।
गाव नगर नर नारी सारा मिलिया अंग लगाई ॥५९ ॥
कुलगुरु से सीख सागर में हाथ जोड़ सिर नाई।

दोन्हीं कन्या कलस मिट्टी को आ मोसे बण आई ॥६०॥
कह्यो सुण्यो सब माफ राखज्यो हम तुम अंतर नाही।
बेटी दोन्हीं जन्म हारियो इसमें झूठी नाही ॥६१॥

दोहा हाथा ही करतव्य किया हाथा नाख्या फासा।
बडा घरा में बेटी दोन्हीं फिर मिलने का सासा ॥६२॥

धारू माल रूपादे राणी गया मालाणी माही।
गढ दरवाजे चरचा फैली चद्रावळ तक जाई ॥६३॥

मालजी ब्याव कियो रूपा से घर घोड्या की जाई।
पाटोतण टीकायत बनाके राखे महला माई ॥६४॥

चद्रावळ के क्रोध जागियो तन में आग लगाई।
इस जीवन से मरणो आच्छो इस दुनिया के माही ॥६५॥

:: टेर ::

धारू ध्यान धरे घट माय
पळ पळ सिमरे भूले नाय।
तन मन धन अरपे तत्काल
आया साधा से प्रीति पाळ।
तन मन सेवा। ॥६६॥

माला के महला पडयो बिगचाळ
माला के दिल में उपजे काळ।
नारद व्याप्यो।
मालो परण ल्यायो रूपादे माल
रूपा आई है धारू की लार
मेघा की डीकरी ॥६७॥

धारू भजन करे हर बार
रूपा जावे रिखा के द्वार
जमलो जगावे।
राणी चद्रावळ के क्रोध अपार
रूपा ने लेवो जीव से मार
जहर विखर देयो ॥६८॥

माल बहक'वट में लाग्या लार
चन्द्रावळ बहकायो घर नार

नुगरी परमोद्या।
हरजी भाटी हरिगुण गाय
भक्ता की भगवत करेला सहाय।
सायबो उचारे ॥६९ ॥

सौजन्य स्वामी गोकुलदास डूमाडा
धारू माल रूपादे की बडी वेल
पृ १० २१

(२०)

धारू माल रूपादे की बड़ी वेल

:: टेर को ::

सता रो सायब कर जाण जन्म मरण को भय मत आण तन मन अरपो।
बीज थावर मिळे बारह करोड हित कर हीरा लीज्यो हिलौर घर तो धारू के॥

चलत रावळ पूछे थाने राज पधणी
महर भ(म)या कर मानो
थारो पथ रियो घणा दिन छानो।
यू डोर माल कर झालो
राणी यू अमरापुर म्हालो ॥हो ॥

गणपत सुरसत रिध सिध हेत
नहवे ना धण्या का लेत पहली मनाऊ॥
बारह करोड गुरु धारू समेत
जमले पधारो धणी हित कर हेत।
भक्त आरोधे ॥१ ॥

धारू ध्यावे आवो आप
परिहारो पूरवला पाप
कृपा विचारो।
ओंकार जग आराम थाप
हरदम जपू आपका जाप
स्वास स्वास में ॥२ ॥

चलत घर धारू के जुमो जगाणा
पूरो पाट परम गुरु आणा

सत गुरुजी बेगा आणा हो।
धारू के गुरु पाव धराणा
पलटो पाप धरम थरपाणा
पैला गुरुद्वारे आणा हो ॥३॥

हरबू[१] पाबू[२] कवर रामदे[३]
मेहवे मेल मडाणा
सतगरुजी बेगा आणा हो।
भाटी ठगमसी देवायत आणा
मन भर सत बुलाणा
सतगुरु का आज पियाणा हो ॥४॥

टेर - आखा दीन्हा धारू मेघ ने
गणपत निवत बुलावे।
गणपत जी ने बुलावज्यो
लारे रिध सिध ल्यावे॥
आखा दीना धारू मेघ ने
हनुमत निवत बुलावे।

हनुमतजी ने बुलावज्यो
माता अजनी ने ल्यावे॥
आखा दीन्हा धारू मेघने
भैरू निवत बुलावे।
बावन भैरू ने बुलावज्यो
चौंसठ जोगण ने ल्यावे॥
आखा दीन्हा धारू मेघने
रामदेव निवत बुलावे।
रामकवर ने बुलावज्यो
साथे डाली ने ल्यावे॥

ठेको कहे उगवसी सुण धारू बात
वायक लेल्यो आपके हाथ
निवतण जावो।
झोली हाथ ले डोडया जा आज
बाई रूपा ने के महला जाय
जमला में बाई ने बेग बुलाय

---

१ ३ तीनों पीर माने गये है।

आज के दिहाडे ॥५॥

झोली हाथ ले डोढया जा आज
बाई रूपा न दे अलख आवाज
वायक देवो।
सुद भादवो सुभ मोहरत थाव
हिल मिल पूजो अलखरा पाव
आज के दिहाडे ॥६॥

छलत पूरीया पाट थावला चोखा
मेले माट घराणा
तेंतीसो जमते आणा रो।
घर धारू के धणी पधारया
धरप्या पाट पुराणा
बाई ने झट पर ल्याणा हो ॥७॥

झोली घाल चल्यो रिख धारू
महला अलख जगाणा
बाईजी ध्यान लगाणा हो।
ले वायक रिख धारू आया
रूपा वायक लेणा
बाईजी गुरु का कहणा हो ॥८॥

ठेको सुणो बात बाई बाहर आव
धारू पूजे गुरा का पाव
सुणता हो वो तो।
गुरु उगमसी बिराजे पाट
सुर नर देवा का रचाया टाठ
वायक झेलो ॥९॥

बडा बडा जोगी राणा राव
सब मिळ पूजे गुरा का पाव
आपने ही बुलावे।
सुणताई बाईजी पसाया हाथ
वायक झेल्या औंवणे हाथ
निवतो गुरा को ॥१०॥

चल्त - अवगट घाट घणा म्हारा वीरा
किस विध पार उतरणा
वीराजी किस विध आणा हो।
सातो सघर पोलिया पायक
ताळा सजड जुडाणा
वीराजी मुस्किल आणा हो ॥११॥

निमण सलाम कीज्यो सता ने
गुरा ने सीस निवाणा
धारूजी जाके कहणा हो।
आप मिलवो तो मिलस्या मेला में
नीतर याद राखजो म्हाने
पैला गुरु अरजी थाने हो ॥१२॥

ठेको - चोरी मत कर चाकर होय चाल
बोलो साच झुठ मत हाल
धणिया ने ध्यावो।
या अकडा ने लेला परम गुरु पाल
काई करेलो रावळ माल
नेहचो राखो ॥१३॥

धारू कहवे धोखो मत मान
अलख पुरुष का धर ल्यो ध्यान
पार उतारे।
सुमिरण कर बाई स्वासों स्वास
भक्ता की भगवत पूरेला आस
धोखा निवारे ॥१४॥

धारू कहे नागन नाग जगाय
धारू ऊभो द्वार आय
रूपा बुलावे।
सुरे गाय को दूध मगाय
दे छाटो धारू नाग जगाय
काचा दूध से ॥१५॥

काचा दूध को छाटो दिराय
नख दे धारू नाग जगाय
बासक जाग्या।

सैंस फणा से जाग्यो नाग
दे परकमा धारू पावा लाग
रूपा बुलावे ॥१६॥

चलत धारू पाट पहुचा पाछा
निमण करी साधा ने
और सतगुरु ने हो।
आप मिळावो तो मिळसा मेळा में
याद राखज्यो वानै
पैला गुरु मुस्किल आणा हो ॥१७॥

सतगुर अरज सामने दाखे
वेग बाई ने लाना
सिध्रष सुन अरजो वाने हो।
वा अकडा ने पालो परम गुरु
भक्त सहाय कर लाना
पैला गुरु जल्दी लाना ॥१८॥

ऊभा अरज करे रूपादे
सुण धरणीधर काळा
भक्त रुखाळा हो।
साभलौ अरज आरोधे आवो
बासक सेज रूखाळा
बासक वाळा हो ॥१९॥

सपत पिंयाळा से बासक आवौ
सेवक तणा रूखाळा
भक्त रुखाळा हो।
बाई आरोधे बासक आया
सेज छोड बाई जमले सिधाया
गुरुद्वारे हो ॥२०॥

ठेको सुगन विचार सोळा सिणगार
हेम जडया हीरा नग चार
करे तैयारी।
झेल सादका हो गई तैयार
लखण बत्तीसों लीना लार
जमले पधारे ॥२१॥

पायल बाजे पगा के माय
मसरू पहरिया अगिया माय
धण्यां ने आरोपे।
वासक बात सुण प्रसन्न होय
सेज छोड बाई मारग जोय
गुरुद्वारे हो ॥२२॥

चलत - लखण बत्तीस लार ले सकती
वचन गुरा के बेहणो
नेम निभाणो हो।
कर सोला सिणगार पदाणी
घणे हेत हरखाणो जमले जाणो हो ॥२३॥

कर चोरी चाली चातुरी
वासक मेल अडाणो हो।
हृदय हार हीर नग जडिया
सब जेवर और गहणो
धारू घर बाई ने जाणो हो ॥२४॥

नखसिख गहणो पहर्‌यो सुदरी
सोळह रूप धराणो हो।
थट कर थाळ भर्‌यों गज मोत्या
भोजन भाव भराणे जमले जाणो हो ॥२५॥

कर सिणगार गुरा दिस चाली
गुरु चरणा चित धरणा हो।
कयो आरोप ध्यान धर हृदय
सब धोख परि हरणो धर्णी मनाणो हो ॥२६॥

ठेको - सूतो माल सेज के माय
चोरी कर चाली महला माय
महला से उतरे।
मोत्या थाळ भर्‌या गज ठाट
मोत्या जुडिया सजड कपाट
खोलो खोलो हो ॥२७॥

पोलीडा बीरा पोळ उघाड
म्हें जावा हरि गुरु के द्वार
जागो जागो हो।

जावे नार मता को साथ
बासक बध्या जावा रातो रात
ताळा खाला ॥२८॥

चलत महलां से उतरी महाराणा
पोली ने आय उठाणो हो।
डयोढीवान खड़ा दरवाजे
ताला सजड जुडाणो
पोळीडा मानो कहणो हो ॥२९॥

रूपा कहे पोळिया वीरा
ताळा तुरत खुलाणो हो।
सकर सेवा देव गुरु दरसन
दानों काम पर जाणा
पोळीडा पोल खुलाणो हो ॥३०॥

कूच्या बिना किसी विध खोलू,
ताळा सजड जुडाणा हो।
कूच्या पडी मालजी रै महला
कूच्या आप मगाणो
राणीजी कहणो मानो हो ॥३१॥

सवा करोड रा हार मूदडो
देस्यू राझ रा थाने हो।
म्हारी बात करज्यो मत प्रगट
बात राखज्यो छान
पोलाडा करणा माना हा ॥३२॥

ठका सातों ताळा जुडिया साथ
कूच्या रहीजे मालजी रे हाथ।
कुण नर लाव।
कौण जगावे सूता सिंह
कुण की मारग जावे उस दिंग
मालजा सूता है ॥३३॥

जिया आराध वाई पांळिया जाय
मजर बला म्हारी करज्या सहाय
दीन दयाला।
वर आराध पाल्या तार जुडिया

कूच्या बिना ही ताळा खुल पडिया
हेलो सुणियो ॥३४॥

चलत - रूपा अरज करे अनन्दाता
अजर पथ में जाणा हो।
सतगुरु अरज सुनो अबळा री
पेले पार लगाणा
जीवा का धणी झट आणा हो ॥३५॥

रूपा हाथ धर्‍यो ताळा पर
जुडिया तोख खुलाणा हो।
सजड जुडोजे खुल कर पडीजे
अवगट घाट लगाणा
ढौला गुरु जल्दी आणा हो ॥३६॥

रूपा कहे पोळिया बीरा
प्रगट बात नही कहणा हो।
पाछी आय रीझ थाने देस्यू
म्हारी लाज रख लेना
पोळीडा मानो कहणो हो ॥३७॥

म्हे तो राण चून का चाकर
सरम भला वा काई म्हाने हो।
थारी लाज परम गुरु राखे
म्हारी लाज है थाने
मानेतण बेगा आणा हो ॥३८॥

रैन अंधेरी पावस बरसे
नदिया पूर बहाणा हो।
कर आरोध गुरा दिसि चाली
उनग्यो नीर ठिकाणा
पैला गुरु सहाय कराणा हो ॥३९॥

जमले जाय पूगी सतवती
देख सत हरखाणा हो।
फिर फिर नमण करे सत गुरु ने
सब गत निरखै नैणा
सत गुरु को साचो सरणो हो ॥४०॥

ताल मजीरा वीणा बाजे
स्रवण सबद सुणाणा हो।
जमले मिळो सतवती सूरी
साचा नेम दबाणा
वचन निभाणा हो ॥४१॥

निमण सलाम सब ही सता ने
पायो पथ पुराणो हो।
आदू पथ धण्या का ध्याता
आवागमन मिटाणो
साचो सरणो हो ॥४२॥

ठेको परसन होय पूज्या गुरु पाय
मिळी भाईडा से हेत लगाय
हिळ-मिळ जमले।
जो मैं परणी मालजी रै साथ
रैन चौमासा सी हो जावो रात
इद्र बरसो ॥४३॥

बारह मेघमाल ले बरसो इद्र
मालजी सूता रहे सुख भर नीद
गढ मेवा में।
बरसै बादली चमकै बीज
भादो माम उजाळी बीज
मोत्या पाट पुराया ॥४४॥

आया आरोधे हरि गुरु देव
मेहवा ऊपर बरसे मेह
झडिया लगाई।
कचन कळस माणका ठाट
सुभ मोहरथ गुरु पूरिया पाट
साथ के चौघडिये ॥४५॥

मगळाचार होवे जै जै कार
रिख धारू घर आनद अपार
घर तो मेघा के।
कळह करावण गोमती जाय

सूती चद्रावळ ने जाय जगाय
जागो जागो ॥४६ ॥

चलत कहे गोमती सुण चद्रावळ
सूता माल जगाणो हो।
रूपा गई रिखा के द्वारे
बात झूठ मत जाणो
माल जगाणो हो ॥४७ ॥

चेतन होय चद्रावल राणी
सूता माल जगाणा हो।
जागो कथ मेवा का राजा
बात साच कर जाणो
जाच कराणो हो ॥४८ ॥

कह्यो न माने राज री राणी
थे काई राज कमाणो हो।
आळस मोड माल झट ऊठया
किसड काम जगाणा
चद्रावळ मानो कहणो हो ॥४९ ॥

दीठा बिना दोगली राणी
झूठ बात क्यों कहणो
रूपादे सेज सपाणो हो ॥५० ॥

ठेको रात्यू जागी चद्रावळ नार
करे कल्पना ऊभी द्वार।
माल ने जगाया।
जागो पीव भोळा भरतार
लाडली गई है रिखा के द्वार।
मानो मानो ॥५१ ॥

वा नही माने राज रो कहण
छूटे नहा पडयौडा बेण
जाकर देखो।
नही देखो तो तज देवू प्राण
झूठ बोलू तो राजरी आण
साची साची है ॥५२ ॥

चलत ताळा जुडकर सुख भरी सूतो
दिवलो महल जगाणी हो।
तू है दूती वा है सपूती
तू कूडा कलक लगाणी
झूठी राणी हो ॥५३॥

सातों सथर पोळिया पायक
किस विधि होवे जाणो हो।
मालजी गढ मेरवा का राजा
मानो बडा को करणो
चद्रावळ मानो कहणो हो ॥५४॥

बोलू साच झूठ मत जाणो
नहीं में अभख भखाणी हो।
रूपा रग सेज में रहादे
तो करू सीस कुरबाणी
साच कर जाणो हो ॥५५॥

निपट नार नखराळी आपके
सूप्यो राज ठिकाणो हो।
ज्याने सूप्यो पे रावळ बिरावळ
सूनी सेज पिछाणो
मानो कहणो हो ॥५६॥

ठेका कहे चद्रावळ सुनो भरतार
ज्याको थाने घणो इतबार
जाणो पाटोतण।
लाडली गई है रिखा के द्वार
कुण का हो पुरुख कुण का है नार
खबर कराणो ॥१७॥

सळखोजा रा सुनन हा नरपति बाण।
कोई नरा मट सके म्हारी काण
रठ मत ठाना।
जा कोई मेटे म्हारी काण
धूम पिछम गिसि उग जावे भाण
सत कर मानो ॥५८॥

कहे चद्रावळ सुणज्यो कथ
नर से नारी बाद बदत
सीस दे देस्यू ।
अबा बात रो आ गयो तत
कर कामण वस कर लीन्हो कथ
साची आपे ॥५९ ॥

ताळ मजीरा बाजे चौतरा
मानेतण ल्हादेली रिखा के द्वार
जा के सोध ल्यो ।
झूठ बोलू तो राज री आण
रूपा ल्हादे तो काया कुरबाण
महला सोधो ॥६० ॥

राणी सूती मल्ला के माय
कूडा कलक लगावो नाय
झूठी झूली ॥
महला ने छोड राणी मेघा के द्वार
भूपा ने छोड भाभी भरतार
सेज सभालौ ॥६१ ॥

उठया माल आयग्यो क्रोध
सोकड तणा लाग्यो परबोध
क्रोध घणेरो ।
बसता घरा में पाडे विरोध
साच झूठ थारी लेस्यू सोध
झूठ मत बोले ॥६२ ॥

चलत कीन्हीं कोप मालजी मन में
खड खड महल चढाणो हो ।
सणकत स्वास लेव महला में
मालजी करी पिछाणो
चद्रावळ मानो कहणो हो ॥६३ ॥

बोली झूठ झूठली राणी
झूठो अभख भखाणी हो ।
रूपा रग सेज में सूती
अमले कठा म जाणी

निरखों नैणों हो ॥६४॥

झूठ बोलू तो आण राजरी
म्हाने दाख क्यों देणो हो।
दीपक जळे दळीचो सोधो
देख पारख लणो
राजाजा तन कुरनाणा हा ॥६५॥

जगमग दिवलो हाथ चद्रावळ
महला मीतर जाणो हो।
रूपा तणी सेज ने सोधी
सूतो नाग जगाणो
महल गरणाणो ॥६६॥

देखो सेजा जाय समाळी साल
भभक्यो नाग उठयो विकराळ
सेम फण्या से।
कहे चद्रावळ मोहि दिसि न्हाळ
कामणगारी करी थासे चाल
सरप सुवायो ॥६७॥

थान मारण मल्या काळो नाग
देख नाग काप्यो भड माल
मार मार करता।
पाछा पावडा दान्हा चार
मालजी देख्यो अजब विचार
मन में सोचा ॥६८॥

चलत पाछा चार पावडा दीन्हा
देख माल भभकाणो हो।
कीनो कोप भूप भड मन में
ओ काई आणो जाणो
फैल मचाणो हो ॥६९॥

रैन अधरी पावस बरस
बिना पूछया क्यों जाणा हा।
कोप करिया मेहवा को राजा
क्षत्रिय खग समाणो
पता लगाणो हा ॥७०॥

मजिया तुरग सोहनी सागत
पवग जीण मडाणो हो।
घणो कोप मेहवा को राजा
रूपारी ब्यार बहाणा
हो जाणो हा ॥७१॥

हल हल कार महर में हो गई
रावळ माल चढणो हो।
तीनों हजूरिया नाई लार
रूपा हेरण जाणो
मालो कोपाणा हो ॥७२॥

ठेको - हल हल मालजी हुआ हलाण
पवग नीला पर माडी पलाण हेरण आवे।
होग्या माल घेडे असवार
फिर फिर सोधे सत द्वार
धारू घर हेरे ॥७३॥

आगे पीछे सुणे रणुकार
मालजा फिरग्या घर घर द्वार
हेरिया नही पाया।
सालरियो कहवे अरज गुजार
भेख बिना नही मिळे सत द्वार।
भगवो धारो ॥७४॥

ठेको रावळ चढिया रूपा की वार
धारू घर पहदे देव द्वार
मिळग्या मिळगया।
बाई साधा में बाटे भाव
गुरु पीरा का चापे पाव
नजरा से देखी ॥७५॥

बाबा पग की ली मोजडी चोर
बाध कमर के निहारे और
देखे तमासा।
सत मडळी में व्यापी छोत
मधरी पडी दिवलारी जोत
कोई नुगरा आया ॥७६॥

मडळी में कोई धूळ बैठो आय
खबर करो कटक की जाय
पकड मगावो।
इतरो सुन कर उठ्यो मड माल
आडा मारग रोका चाल
कठे हो सिधारे ॥७७ ॥

आधा माल रूपा गई जाण
अतर घट की पडी पिछाण
गुरुजी ने दाखे।
राजमहल में पड गई जाण
सागे सोकड का लाग्या बाण
माल ने पठाया ॥७८ ॥

चलत दोय कर जोड खडी गुरु आगे
कर रही अरज गुरा ने हो।
सतगुरु अरज सुणो अबला री
बख्सो सीख मराने सतगुरु जी
लाज रखाणी हो ॥७९ ॥

बीती रैन पाछलो तडको
खुवास खबर ले जाणो हो।
रूपादे की चोरी मोजडी
मारग माल रूकाणो सतगुरु जी
साची जाणो हो ॥८० ॥

बाई रूपा की चोरी मोजडी
सोच भयो सता ने हो।
करे आरोध सत सब सिमरे
बाई जावे ठबराने
अरज गुराने हो ॥८१ ॥

अविगत अरज सुणी सता री
सोध मोजडी लाना हो।
ज्यारे पास मोजडी पाई
तुरत दरद कर दीना
बिडद रख लीना हो ॥८२ ॥

ठेका - ऐसी सती रूपादे नार
झूठो सोच करे बेकार
सायचो उबारे।
अरध रात आई एक पग धार
अलख पुरुस रहतां धारी सार
सोच ने निवारे ॥८३॥

बहन चंद्रावळ सोक कहाय
एक बात की दोय लगाय
माल ने बहकाया।
सूता माल ने जगाया जाय
कोप कर राजा मोपर आय
बाका अनहीं ॥८४॥

चलत निमण सलाम करे सता ने
राखे अरज गुरां ने हो।
आप मिलावो तो फेर मिलाला
नहीं तो याद राखज्यो म्हाने
सलामी थाने हो ॥८५॥

इतरो सोच करो मत रूपां
एकलडा नहीं जाणा हो।
थाकी साथ कवर रामदे
मन धोको नहीं लाणा
नहचे रहणा हो ॥८६॥

आज पछा बाई रूपादे
एकलडा नहीं आणा हो।
रो साजोडे पधारो महाराणी
सरणा बाट जोवाणा
माल निवाणा हो ॥८७॥

राखो धीज रीझ गुरु दीन्हीं
यही वचन परमाणा हो।
अब आस्यो जद आस्यो साजोडे
अनही माल निवाणा
साच कमाणा हो ॥८८॥

ठेको निमण करी है जोत ने जाय
पल पल लागे गुराजी के पाय
मानज्यो सलामी।
लाख लाख पग पायल धोय
सेवा देख सामिल सब होय
भाइडा भेळा रीज्यो ॥८९॥

सायब सत रम्या एक घाट
रूपा सतवती निहारे बाट
सामिल रीज्यो।
फिर फिर निमण करे अरदास
फेरू मिलन की जग रही आस
गुरु देव मिळावो ॥९०॥

ठेको सधर भरोसे एकलडी मत चाल
सग मैं स्याम ले पायडा ने पाल
राखो भरोसो।
इतरी सुण बाई आई मन धीर
सग में चढिया पिछम का पीर
घोळे घोडे ॥९१॥

रहसी गुपत बाई थारा लार
अजमल सुतन होग्या असवार
भगत उबारण।
जीवत बचू तो मिळस्यू आय
नीतर समाळो सरणा माय
भेळ ही राखज्यो ॥९२॥

चलत सीख माग चाली सतवती
मारग माल मिळाणा हो।
करे क्रोध मालजी पूछे
कठे गई सो कहणा
साच बताणा हो ॥९३॥

रैन अधारी पावस बरसे
कठे गई सो कहणा हो।
फिरती फिरे अकेला रात्यू,
जिनका उत्तर दणा

मानो कहणो हो ॥९४ ॥

कर रियो कोप मालजी ठाडा
हाथा खडग समाण हो।
मारिया बिना आज नही छोड्डू,
छत्री धरम घटाणा
झूठ कमाणा हो ॥९५ ॥

गई अकेली राज रे खातिर
बिना बाग फूलों ने हो।
लाई रीझ राजेरे सन्मुख
कोंई थाने काई म्हाने
राज सत्य जाणो हो ॥९६ ॥

ठेको मार मार करता उठया भड माल
हाथ खडग हथवासे ढाळ ॥
जीवो माल।
सिर पर खड्ग दियो कर झोंप
जाणे सिंह उठयो कर होप
मार मार करतो ॥९७ ॥

मार सको तो मारो राज
पति मारिया की कोनी लाज
मारो मारो।
सूता लोग जगावो नाय
बडा घरा ने हसला आय
मानो मानो ॥९८ ॥

फिर फिर भाळी थारी जात
अकरम करम देखिया रात
घर तो मेघा के।
गुरु उगवसी कठे थारी साथ
तुरत मारू अब हायो हाथ
थारा गुराने बुलावो ॥९९ ॥

मैं तो गई थी फूला के काज
म्हानै मार पछतावोला राज
थोडी समझ विचारो ॥
फल बीण लाई थाळ

थाके ता गुथ लाई फूलमाळ
पहरा पहरौ ॥१००॥

चलत फळ नहीं फूल बाग नही बाडी
न कोई बाग सेवाणी हो।
रात्यू बसी मेघा घर राणी
जमला जोत जगाणी
कूड बरजाणी ॥१०१॥

गढ गिरनार मंडोवर बाडी
जयसलमेर जूजाळो हो।
के चित्तौड मेडते बाडी
ज्याको दूर पियाणो
किस विध जाणो हो॥१०२॥

फूल लाया सो म्हाने फूल बतावो
नहीं तो धार खडग की सहणो हो।
परच्या बिना परतीत न मानू,
परच्यो आज मने लेणो
पारोतण मानो कहणा हा॥१०३॥

कोप्यो आज मेहवा को राज
भुजा खडग मळकाणो हो।
मळकी भुजा इस्ट मन आडा
ऊचा हाय रहाणो भक्त बचाणो॥१०४॥

ठेको वैसी तो घडी है म्हारा दीन दयाल
पीड पडी थारा भक्त सम्हाळ
वैसी तो घडी है वो।
सतयुग हिरणाकुस होय हैराण
भक्त प्रह्लाद छोडी नहीं बान
सत कर सिमरिया।
नृसिंह रूप धरियो धणी आण
अरज सुणी ज्या की सारग पाण
वा ता वेळा है॥१०५॥

हरिचद सुतन तारादे नार
सत के काज बिक्या नर नार
सिमरण सावा॥

बा सता ने है बळिहार
पाळी प्रीत म्हारा कुंजबिहार
वैसी तो घडी है।
दुस्सासन कीचक लाग्यो लार
खेंचत चीर दुस्ट गयो हार
साचे मन ध्याया।
खेंचत चीर अत नहीं आय
लाज रखी नारायण राय
या तो घडी है ॥१०७॥

जल डूबत गज करत पुकार
गरुड छोड भाग्या करतार
फद निवारियो।
ग्राह मार गज लीन्हों उबार
जेज करो मत सुणो पुकार
वैसी तो घडी है ॥१०८॥

दिल्ली बादशाह परच्यो लियो पूर
खींवण मेघ रणसी नही दूर
अलख मनाया।
सत का करोत लिय सीस धराय
दूध फूल निकल्या देह माय
या तो बेला है ॥१०९॥

साचा सत साचा गुरुदेव
साचा धणी की करी म्हें सेव
सिमरण साचा है।
कोप्या मालजी चीर उठाण
थटकर थाळ फूल महकाण
आरोघ्या आग्या ॥११०॥

चलत रूपा अरज करी सतगुरु ने
अलख आरोध आणा हो।
लाजे बिडद म्हा'र चढ बेगो
अनडी माल निवाणा
धणी झट आणा हो ॥१११॥

चीर उछाठ माल किया दूरा
फरहर फूल महकाणा हो।
रग रग फूल थाळ थट भरिया
पड़दे पीर दरसाणा
अनड निवाणा हो॥११२॥

पान फूल भरिया थाळी में
गगा नीर झलकाणो हा।
चपो चमेली केत केतकी
थट कर थाळ भराणो
बिड़द निभाणो॥११३॥

पड़दे नूर बरत्या धणिया रा
धनडी माल निवाणा हो।
पळकी पुजा जहा तहा रह गई
साचो पथ अब साचो
मिल्यो ठिकाणो हो॥११४॥

ठेको देख माल अब आई धीर
परच्यो दियो पिछम का पीर
धीज धरिया की।
धिन्न थारो जन्म धिन्न थारी जात
धिन्न धिन्न रमी सता रे साथ
जन्म सुधारियो॥११५॥

रूपा राणी रतन सवाय
थारा धणी को म्हाने पथ बताय
गुनाह माफ करावो।
थे साचा म्हे झूठा भरतार
अलख पुरुस रम रीया थाको लार
भक्ता के भेळा॥११६॥

चलत टेर दूसरी
रावळ पूछे थाने राज पदमणी
मरर मया कर मानो।
थारो पथ रियो घणा दिन छानो
मानतण कियो म्हारो मानो।
आप कहस्यों सो ही करस्यू राणी

नही लोपू मैं कहणो हो।
सत का पथ सता का मारग
वचन आके बहाणो
मानेतण मानो कहणो हो ॥११७॥

दाखो भेद राखो मत छाने
जाय गुराने कहणो हो।
तन मन धन अरपण कर देस्यू,
म्हाने अजर पथ में लेणो
पाटोतण मानो कहणो हो ॥११८॥

सरणे राख त्यार महादुरगा
पल पल चरणा रहणा हो।
आज पहली की खता माफ कर
अब तो थारो सरणो
मानेतण मानो कहणो ॥११९॥

रहस्यू वचन वचन में थाके
अबा पथ में लेणो हो।
जूना धण्या का मारग बताओ
म्हारो सीस कू कुरवाण
पाटोतण मानो कहणो ॥१२०॥

ठेको बिना प्रतीत पावे नही पार
ओ पथ मालजी खाडा की धार
कठिन करारो।
अजरा जरे राखे ईमान
पूरा गुरा की पाळे ग्यान।
मुस्किल जाणो ॥१२१॥

इतरा दिन तक रियो मैं अजाण
साचा पथ की अब पडी है पिछाण
बेग मिलावो।
अब नही बताओ तो तज दू मैं प्राण
झूठ कहू तो सळखाजी री आण
गुरा ने मिलावो ॥१२२॥

बेगा जावो राणी गुरा के द्वार
बिच में झिलम न कीज्या बार

वेगी पधारो।
पूगी रूपा रिखा के द्वार
गुरु चरण में करै निमस्कार
धिन धिन दाता॥१२३॥

धिन गुरु दीन्हा अजड निवाय
अब तो चेलो का होग्या मन चाय
बगाई सभाल्या।
बाका माल आपके चरणा में आय
चेलो कर करल्यो मन चाय
बेगा पधारो॥१२४॥

चलत कठिन पथ है गुरा रा मालजी
बिन पर प्रतीत न कहणो हो।
निरमल सत पथ में चालो
मूळ भेद नहीं दणा
मालाजी मानो कहणो हो॥१२५॥

मूल मिटावो सत बगाणो
चरण गुरा के रहणे हो।
थावर गीज सत करो मेळा
वचन गुरा ने लेणो
मालाजी सरणे जाणा हो॥१२६॥

रूपा अरज माल ने दाखे
सत सगत में रहणो हो।
गुरा का नेम भाद रा मारग
ओ हिरदे धर लेणो
मालोजी मानो कहणा हो॥१२७॥

अजरा जर ईमान राखो राजा
महाधरम में मिलणो हो।
खाडा की धार सुई को नाको
कठिन पथ मिळ रहणो
राजा जी मानो कहणो हो॥१२८॥

ठेका गढ मेहवा में निवत्योडा आय
गुरु सता ने माल बधाय
आवो आवा।

बाजा बाजे अनत अपार
गढ मेहवा में जै जै कार
गुरुजी पधारिया ॥१२९॥

गुरु देवायत उगवसीजी आय
पुजल पद्या मगळ गाय
गढ वो मेहवा में।
रामा कवर अजमल धनराज
साह सधीर तोळा जेठळ राज
भला हा पधारिया ॥१३०॥

ऐळू दैळू सलारिखो साथ
मेरू हनुमत बाळी नाथ
भाग भला है।
रावत रणसी खींवण मेघ
सामिक रिखी का चेला भेख
आया आया ॥१३१॥

सुवारथ्यो बोय तो हरबू पाबू लार
मेवो मागळियो धारू कोटवाळ
भाग्य सरावै।
सिद्ध चौरासी नौऊनाथ
पडदे रमे देवा के साथ
धिन्न बाई डाला ॥१३२॥

धिन धिन रूपा सधर धणी ध्याय
अनडी माल ने अलख निवाय
अब आवे पथ में।
माणक मोत्या चौक पुराय
कचन कळस अधर ठहराय
गगाजळ भरियो ॥१३३॥

धारू रूपा है कोटवाळ
थावर बीज है सुद पखवार
धिन्न दिहाडो।
कळस हीर अमोलख चार
झिलमिल जोति देव द्वार
बाहर भीतर ॥१३४॥

चलत रूपा अरज गुराने दाखै
अनहो माल निवाणा हो।
आवे माल राज रे सरणे
लोह कचन कर लेणा
चोर ने लाणा हो॥१३५॥

अठे चोर को काई काम बाई
पहली पारख कर लेणो हो।
चार्यो जीव हेत कर विरधो
पछा पथ में लेणो
मानो कहणो हो॥१३६॥

पाडळ गाय गगाजळ घोडो
कवर जगमाल विरधाणो हो।
चद्रावळ महला में विरधो
जदा पथ में लेणो
साच कमाणो हो॥१३७॥

थारू वचन गुरा का सुणाया
करो मालजी कहणो हो।
चारों विरध पछा ये आवो
गुरु पथ में बहणो
माल सुण करणो हो॥१३८॥

सत गुरु वचन लियो सिर ऊमर
छत्री खडग समाणो
घोडो विरध
आय कवर वि

।नर
आयो
ऊमा

अब तो पथ में लेणो
रूपादे मानो कहणो हो ॥१४१॥

समचे साध हुआ सब भेळा
अगर धूप महकाणो हो।
अलख पुकार ब्हार चढ बंगा
चारों जीव जगाणो
माल निवाणो हो ॥१४२॥

अलख आगे अरपण कर दीना
म्हारे वचन गुरुजी रे बहणो हो।
फेरू कहो सो करस्यू स्वामी
नेम आपको लेणो
पाटेवण मानो कहणो हो ॥१४३॥

ऊठो माल झेल गुरु वायक
पहली महल में जाणो हो।
हीरा पन्ना मोती जवाहर
चारों रतन ले आणो
भेंट चढाणो हो ॥१४४॥

पाडळ गाय सजीवन कीवी
बछडो धेनु मिलाणो हो।
हेवर खुरी पायगा हींसे
पवग जीण मडाणो
पथ में जाणो हो ॥१४५॥

कवर पाग पचरगी बाधे
महला में मुलकाणो हो।
घणे हेत चद्रावळ राणी
सोलह रूप चढाणो
आयो पियाणो हो ॥१४६॥

हुकम करो गुरु हाजिर आयो
दव दिलासा देणो हो।
सत के पथ सत कर भेळा
मने अरज पथ में लेणो
मानेतण मानो कहणो हो ॥१४७॥

चारों दिसा भेजिया वायक
मन भर सत बुलाणो हो।
आया सत मालेरे निवते
मेहवा में मेळो मंडाणो
पथ मपाणो हो॥१४८॥

थिर कर पाट परम गुरु थरप्या
मोत्या चौक पुराणो हो।
सोहन कळस गगाजळ भरियो
धणिया री धीज मपाणो
पथ पुराणो हो॥१४९॥

हालिया धरम धणियारी महिमा
झिलमिल जोत जगाणो हो।
मिळिया सत हुई मनुहारा
सतरे पथ बहाणो
गुरा के सरणे हो॥१५०॥

ठेको आया साधू तो अलख जी री आण
सतगुरु आगे लाया ताण
रावळ मालने॥
पाट पीताबर पडदा तणाय
जोत कळस के सन्मुख बैठाय
रावळ माल ने॥१५१॥

आख वायकर धारूजी ल्याय
सेली सिंगी देवायत पहराय
नुगरा का सुगरा।
गुरु उगमसीजी दीन्हा माथे हाथ
दे गुरुमत्र करिया सुनाथ
चेला नाथ्या है॥१५२॥

आरती करे मालजी री नार
कचन कळस हाथ ले धार
धणियारी उतारे।
सहस्र बाती जत सत सार
झिलमिल जोवी देव दवार
पणा हो उगमसे॥१५३॥

बधियो थरम मेरवा रे माय
घर घर जमला जोत जगाय
धोखा मिटग्या।
सता री साहब राखो लाज
बाजा बाजे बीज दिन आज
घर तो माला के ॥१५४॥

चलत सेलो सिंगी नार जनेऊ
काना कुंडल दीन्हा हो।
सती मरद सिवनाथ सजोया
वचन उगवसी दीन्हा
पथ प्रवीना हो ॥१५५॥

सत का वचन पाळिया साचा
वचन गुरा का चीन्हों हो।
राणी का पथ साच का सिमरण
माल रूपा पथ झीणा
मारग इण बेणा हो ॥१५६॥

धारू मेघ को धूप प्रमाण

धूप तो धणिया ने खेवा
धूप है अवतार ने।
द्वारका रा देव ने रूणीचा रा राम।
माई तो हींगळाज ने आपणा गुरुदेव ने।
ब्रह्मा विष्णु महेश ने भैरू हनुमत वीर ने
तैंतीसों सुर देव ने
खेवा गूगळ धूप हरि ने।

प्रथम सुमिरू सारदा गणपत लागू पाय जी।
सुरसत गणपत सिमरता भूल्या राह बताय जी ॥१॥
आगणियो रळियावणोमदिर जै जै कार जी।
अन पाणी नूर बरसे साच तो सचियार जी ॥२॥
आवो साधो खेती बोवा माणक मोती जवाहर जी।
खेती माही हीरा निपजे लूणेला सचियार जी ॥३॥
एक डोरी गुरु सबदा दूजी अलख परवाण जी।
सीता कुंती अहिल्या वे चढी निरवाण जी ॥४॥

इगळा पिंगळा सुखमणा उन्मुनी उरधार जी।
खेचरी में पीवत प्याला आवागमन निवार जी ॥५॥

पिंड ब्रह्मड एक सोझो घट मठ सरजनहार जी।
स्वासा स्वासा सुमिरण साझो गुरु वचन आधार जी ॥६॥

धरा आभर बिच बेलडी साधे सत सुजाण जी।
मेघ धारू यों भणे धूप रा प्रमाण जी॥

धारू द्वारा मालजी को उपदेश

जमला री रेण जगाय म्हारा बीरा रे
जमला री रेण जगाय॥
जमले गुरु म्हारो आवेलो
अजमलजी का रामा आवेला गुरुजी वो।
मत कर अरडा से हेत म्हारा बीरा ॥१॥

अरड चढे ऊचा चढे गुरुजी वो
कर आबा से हेत म्हारा बीरा जी ॥२॥

आम फळे नीचा लूळे गुरुजी वो
कर समदा से हे म्हारा बीराजी ॥३॥

नाडल्या काई न्हावणा गुरुजी वो।
नाडूल्या सूख जाय म्हारा बीराजी ॥४॥

समद हिलोला ले रिया गुरुजी वो।
मत कर नारिया से हेत म्हारा वीरा ॥५॥

जाणो कसूमल काचळी गुरुजी वो।
धोया से धुप जाय म्हारा बीरा जी ॥६॥

फटकारिया काई बैठणो गुरुजी वो।
डूगरिया सूक जाय म्हारा बीराजी हो ॥७॥

परवत हरिया रहवसी गुरुजी वो।
गुड से होवे खाड म्हारा बीराजी ॥८॥

खाड पलट मिस्री बणे गुरुजी वो।
बोले धारू मेघ म्हारा बीरा जी॥
कठण करणी है साध री मालाजी वो ॥९॥

धारू ऋषि की ज्ञान-कथा

सो गनपति सन्मुख रहे हिरदे सारद माता।
आदि अनादि अलख थाने सुमिरा देव दया कर दाता ॥१ ॥
उत्पत्ति आदि प्रथिवी पहले अविगत आप उपाया।
आदि अलख का अस अटल रिख हरि घर रूजमा पाया ॥२ ॥
आतम देव रहिया गुण गेबी जब रिख सुनमें रहता।
परथम मूळ भाव में भेला हाजर सन्मुख होता ॥३ ॥
पजा जोड परम गुरु मिळिया क्रपा करके हाथ धरिया।
जुगा जुगा से आगे रहता अलख किया सो काम करिया ॥४ ॥
पहले धणी ध्यान में बैठा मेघवस पर हुई मया।
अमर छडी अलख की सेवा रीझ करी जद राय दिया ॥५ ॥
आरम रूप करिया बहु भारी नर नारी घर वास हुया।
चार देव ब्रह्मा ने सूप्या घर रिखिया के आप रिया ॥६ ॥
घर घर मेघ धरम रिख झेल्यो हर का आग्याकारी।
बाचे वेद अगम की वाणी अगिरा रिख जाणा जारी ॥७ ॥
सत का नेम लिया सतवादी मानव मेघ रिख मणधारी।
आया भेख आत्मा पेखी उदकी कन्या कवारी ॥८ ॥
घर भार धरम रिख जूप्या खींवण डाळी अधिकारी।
पाया पथ पियाळ पूगा सारी बात सुधारी ॥९ ॥
अब करता ने कौन समाल्यो आग्यो सत को बारो।
परणो पाट सती रिख चवर्या निकळंग पाट पधारो ॥१० ॥
सत का वचन सुनो सतवाद्या गुरु पीर दिया आदि चिता।
रिख भगवान सदा हरि सरणे अमर बाचे ग्यानकथा ॥११ ॥

रूपादे द्वारा मल्लीनाथजी को उपदेश

हो जावो साध सुधर जावे काया।
म्हारा धणिया रो मरम झीणो! हो रावळ माल।
मालजी ऊंडा ऊंडा नीर अथग जळ ऊंडा।
तेरूडा से थाग नहीं आयो ॥१ ॥

मालजी दिल माही कपट कमर माही छुरिया।
कहवा का साध कहावे ॥२ ॥

मालजी घर में ही आबो थारे घर में आमली।
पर घर चूखण क्यों जावे ॥३ ॥

मालजी पसर बेलडी के नाना फळ लागे।
ज्यानें खाया ही मर जावे ॥४ ॥

मालजी भायला री नार आगणिये ऊभी।
जींने माता कह बतलावो ॥५ ॥

मालजी घर की खाड करकरी लागे।
चोरी को गुड मीठो ॥६ ॥

मालजी बिछळी नारी को संग नहीं करणो।
कुसग लाछ्ण लागे ॥७ ॥

मालजी ऊसर खेत बीज नहीं बोणा।
बीज गाठ को जावे ॥८ ॥

दोय कर जोड रूपा राणी बोल्या
सत अमरापुर पाया ॥९ ॥ यो रावळ माल_

ऋषि खीवण की रचना गायत्री

राज सरस्वती ध्यावु तोय
सबद सारदा दीजे मोय।
तेरा कथिया कहूं मैं ग्यान
नीतर कुण जाणे अनुमान ॥१ ॥

ग्यान भडारा तू ही खोले
मुख से वाणी अनुभव बोले।
ठत्पत्ति प्रळय की पूछू बात
धरती की पूछू मरियाद ॥२ ॥

केती धरती केता कपाट
केता है मेरु मंदिर कैळास।
केती है साधा री वाणी
केता है पावन पाणी ॥३ ॥

केता है द्वीप केता है खड
केता है राजा केता है ब्रह्मड।

चाद सूरज के केता है पियाणा
समझ बताओ ठौर ठिकाणा ॥४॥

मूरख नर अभिमान करे
बिना ग्यान स अडतो फिरे।
ब्रह्मा वेद काजी कुराण
कहो पंडिता किसे दिन रचाया
धरती आसमान ॥५॥

वा तिथि वार बता दो मोय
जब सिर मोड हमारा होय।
सकळ जगत को एक ही खोज
ब्रह्माड घट माही सोझ ॥६॥

इसी ग्यान को धरल्यो ग्यान
सब ग्यान को ओ ही है ग्यान।
पढ पढ पडित वेद सुनाया
उनका पार कोई नहीं पाया ॥७॥

पाच तत्व से जग रचाया
रणुकार का स्थभ लगाया।
सक्ति ऊभी हरि के सहारे
सायब सक्ति मिळ मडप धारे ॥८॥

जग थरपना का पढिये जाप
प्रलय जाय क्रोडा पाप।
सुरसत ग्यान से हुआ विचारा
हिरदे खुल गया ग्यान भडारा ॥९॥

अनुभव ने भाखे अपरपारा
भजल्यो नाम ने बारबारा।
हो जावे काया निस्तारा
कर्ता आप अखड अपारा ॥१०॥

अदर बाहर रहवे न्यारा
नहीं था अबर धरण पसारा।
चाद सूरज नहीं नौ लख तारा
सुन मडळ में धुधुकारा ॥११॥

जळे बन नहीं थी काया
नहीं था मन नहीं थी माया।
सक्ति साहब का जोड़ा होता
सेस सैया में आप ही सोना॥१२॥

नाभि में से कमळ उपाया
पैदा किया ब्रह्म से माया।
उपाया तीन देव लोक रच चौदह
पांच तत्व तीन गुण भेद सरोदा॥१३॥

पहली धरियो पाताळ में पाव
पानी ऊपर बण्यो बनाव।
हरि मनसूबो फेरू करियो
कच्छ मच्छ होय जळ में तिरियों॥१४॥

कोरम को इतनो विसतार
प्रथ्वी से दूनी देह सुम्मार।
उनकी पीठ पर आठ दिग्पाळ
बासक रहता सात पताळ॥१५॥

बासक को इतना विस्तार
दो दो रसना फण एक हजार।
छप्पन लाख चौड़ी फण एक
ऐसी जुगत से और अनेक॥१६॥

ऐसा जोध मेल्या जीवा ने
राई जितनो भार लगे छे वाने।
भोजन करे है स्वास उस्वास
अरध नाम को है विस्वास॥१७॥

उनचास क्रोड प्रथ्वी जानों
न्यारो न्यारो कहूं ठिकानो।
सोलह क्रोड करवरा नीचे
तेरह क्रोड उरवरा नीचे॥१८॥

नौ क्रोड परवत है सारा
नर के नीचे जानो ग्यारा
ऐसी जमत मेल्या विस्तारा॥१९॥

छप्पन क्रोड चाद सूरज उजाळा
छतीस क्रोड महण में माळा।
सूरज देव के सहस किरण
घोडो जूपे सावकरण ॥२० ॥

उस घोडा के मुख है सात
रथ हाके चोरग्यो जात।
ब्रह्मा का बेटा हवा करे
चले अफूटा काज सरे ॥२१ ॥

विस्तार है नौ लख तारा
सात रिसी और ध्रुवजी न्याए।
धरती से एक लाख योजन
ऊचो सूरज को विवाण ॥२२ ॥

सूरज से एक लाख योजन
ऊचो चद को विमान।
चद से एक लाख योजन
ऊचा नक्षत तारा ॥२३ ॥

नक्षत्र तारा से एक लाख योजन
ऊचो मगळ को विमान।
मगळ से एक लाख जोजन
ऊचो बुद्ध को विमान ॥२४ ॥

बुद्ध से एक लाख जोजन
ऊचो बृहस्पति को विमान।
बृहस्पति से एक लाख जोजन
ऊचो शुक्र को विमान ॥२५ ॥

शुक्र से एक लाख जोजन
ऊचो सनिस्वर को विमान।
सनिस्वर से एक लाख जोजन
ऊचो राहू को विमान ॥२६ ॥

राहुसे एक लाख जोजन
ऊचो केतु को विमान।
केतु से एक लाख जोजन
ऊचो पवन मडळ ॥२७ ॥

पवन मडळ से एक लाख जोजन
ऊचो इद्र मडळ।
इद्र मडळ से एक लाख जोजन
ऊचो जठर पछी ॥२८॥

जठर पछीसे एक लाख जोजन
ऊचो गरुड पछी।
गरुड पछी से एक लाख जोजन
ऊचो कैलास ॥२९॥

कैलास से एक लाख जोजन
ऊचो ब्रहलोक।
ब्रह लोक से एक लाख जोजन
ऊचो स्वरगलोक ॥३०॥

स्वरग लोक से एक लाख जोजन
ऊचो मढ।
मढ से एक लाख जोजन
ऊचो डढ ॥३१॥

डढ से एक लाख जोजन
ऊचो अढ।
अढ से एक लाख जोजन
ऊचो धन ॥३२॥

धन से एक लाख जोजन
ऊचो निरजन स्वरूपी।
जिनके ऊपर अलख मरूपी
धिन धिन हो करता भगवान ॥३३॥

मनुस्य ने दीन्हो भक्ति दान
आप उपाई लख चौरासी खान।
नौ लख जीव परिया जल माही
दस लाख पछी परवाई ॥३४॥

ग्यारा लाख कीट भ्रग भाई
बीस लाख स्थावर विस्तार।
तीस लाख पसु परिवार
चार लाख मनुस्य महाण ॥३५॥

यह सब लख चौरासी जाण
मनुष्य जन्म में ग्यान सिद्ध साध।
पहले कहिये आद जुगाद
ब्रह्मा विस्नु महेस महाध॥३६॥

सतरूपा स्वयंभू भोन
जिनके लड़की जन्मी तीन।
जिनको पति प्रिथु उपनीत
रथ में बैठ गया दूदी॥३७॥

नौ जोजन लीक पड़ गई ऊडी
ब्रह्माजी का मार्कण्डेय जी।
प्रलय हो गया खड़े खड़े जी
बछड़ा चार गाय एक टेवी॥३८॥

साल गुवाल्यो लारे है भी
परख्या पाताळ में पाव।
इक्कीस ब्रह्मांड को कन्हो न्याव
ब्रह्मा के बारह अवतार॥३९॥

हिरण्यकश्यप को कीन्हों संहार
ब्रह्मा के बेटा चार लाख साठ हजार।
केता तो रिखेसर होग्या
केता होग्या गहस्थ चार॥४०॥

बहन भाई से मड्यो व्यवहार
उनके हुआ राजा दख।
दख के हुआ पिथु अवतार
जिनसे बंधी मेर मरजाद॥४१॥

पीछे ऊंच नीच की पड़ी भाव
राजा पिथु लियो पृथ्वी से दंड
बसा दिया न्यारा नौ खंड
राजा पिथु हुयो अवतार॥४२॥

पयोवे दुह दुह कर निकाळो सार
जिनमें नाज निपज्या चार।
गेहूं चावल जौ ज्वार
जीवा के ताई कियो इलाज॥४३॥

पवन मडळ से एक लाख जोजन
ऊचो इद्र मडळ।
इद्र मडळ से एक लाख जोजन
ऊचो जठर पछी॥२८॥

जठर पछीसे एक लाख जोजन
ऊचो गरुड पछी।
गरुड पछी से एक लाख जोजन
ऊचो कैलास॥२९॥

कैलास से एक लाख जोजन
ऊचो ब्रह्मलोक।
ब्रह्म लोक से एक लाख जोजन
ऊचो स्वरगलोक॥३०॥

स्वरग लोक से एक लाख जोजन
ऊचो मड।
मड से एक लाख जोजन
ऊचो डड॥३१॥

डड से एक लाख जोजन
ऊचो अड।
अड से एक लाख जोजन
ऊचो धन॥३२॥

धन से एक लाख जोजन
ऊचो निरजन स्वरूपी।
जिनके ऊमर अलख मरूपी
धिन धिन हो करता भगवान॥३३॥

मनुस्य ने दीन्हो भक्ति दान
आप उपाई लख चौरासी खान।
नौ लख जीव धरिया जल माही
दस लाख पछी परवाई॥३४॥

ग्यारा लाख कीट भ्रग भाई
बीस लाख स्थावर विस्तारा।
तीस लाख पसु परीवार
चार लाख मनुस्य मढाण॥३५॥

यह सब लख चौरासी जाण
मनुस्य जन्म में ग्यान सिद्ध साध।
पहले कहिये आद जुगाद
ब्रह्मा विस्णु महेस महाध ॥३६ ॥

सतरूपा स्वयभू मीन
जिनके लडकी जन्मी तीन।
जिनकी पति प्रिथु उपनीत
रथ में बैठ गया दूडी ॥३७ ॥

नौ जोजन लीक पड गई ऊडी
ब्रह्माजी का मार्कण्डेय जी।
प्रळय हो गया खडे खडे जी
बछडा चार गाय एक टेबी ॥३८ ॥

लाल गुवाल्यो सारे है भी
परख्या पाताळ में पाव।
इक्कीस ब्रह्माड को कन्हो न्याव
ब्रह्मा के बारह अवतार ॥३९ ॥

हिरण्यकश्यप को कीन्हों सहार
ब्रह्मा के बेटा चार लाख साठ हजार।
केता तो रिखेसर होग्या
केता होग्या गहस्थ चार ॥४० ॥

बहन भाई से मडयो व्यवहार
उनके हुआ राजा दक्ष।
दक्ष के हुआ पिथु अवतार
जिनसे बधी मेर मरजाद ॥४१ ॥

पीछे ऊच नीच की पडी भात
राजा पिथु लियो पृथ्वी से दड
बसा दिया न्यारा नौ खड
राजा पिथु हुयो अवतार ॥४२ ॥

पयोजे दुह दुह कर निकाळे सार
जिनमे नाज निपज्या चार।
गेहू चावल जौ ज्वार
जीवा के ताई कियो इलाज ॥४३ ॥

पवन मडळ से एक लाख जोजन
ऊचो इद्र मडळ।
इद्र मडळ से एक लाख जोजन
ऊचो जठर पछी॥२८॥

जठर पछीसे एक लाख जोजन
ऊचो गरुड पछी।
गरुड पछी से एक लाख जोजन
ऊचो कैलास॥२९॥

कैलास से एक लाख जोजन
ऊचो ब्रह्मलोक।
ब्रह्म लोक से एक लाख जोजन
ऊचो स्वरगलोक॥३०॥

स्वरग लोक से एक लाख जोजन
ऊचो मड।
मड से एक लाख जोजन
ऊचो डड॥३१॥

डड से एक लाख जोजन
ऊचो अड।
अड से एक लाख जोजन
ऊचो धन॥३२॥

धन से एक लाख जोजन
ऊचो निरजन स्वरूपी।
जिनके ऊमर अलख मरूपी
धिन धिन हो करता भगवान॥३३॥

मनुस्य ने दीन्हो भक्ति दान
आप उपाई लख चौरासी खान।
नौ लख जीव धरिया जल माही
दस लाख पछी परवाई॥३४॥

ग्यारा लाख कीट भ्रग भाई
बीस लाख स्थावर विस्तारा।
तीस लाख पसु परिवार
चार लाख मनुस्य मडाण॥३५॥

यह सब लख चौरासी जाण
मनुस्य जन्म में ग्यान सिद्ध साध।
पहले कहिये आद जुगाद
ब्रह्मा विस्णु महेस महाध॥३६॥

सतरूपा स्वयंभू मौन
जिनके लडकी जन्मी तीन।
जिनकी पति प्रिथु उपनीत
रथ में बैठ गया डूंडी॥३७॥

नौ जोजन लीक पड गई ऊंडी
ब्रह्माजी का मार्कण्डेय जी।
प्रळय हो गया खड़े खड़े जी
बछड़ा चार गाय एक टेबी॥३८॥

साल गुवाल्यो लारे है भी
परख्या पाताळ में पाव।
इक्कीस ब्रह्माड को कन्हो न्याव
ब्रह्मा के बारह अवतार॥३९॥

हिरण्यकश्यप को कीन्हों सहार
ब्रह्मा के बेटा चार लाख साठ हजार।
केता तो रिखेसर होग्या
केता होग्या गहस्थ चार॥४०॥

बहन भाई से मडयो व्यवहार
उनके हुआ राजा दक्ष।
दक्ष के हुआ पिथु अवतार
जिनसे बधी मेर मरजाद॥४१॥

पीछे ऊंच नीच की पड़ी धात
राजा पिथु लियो पृथ्वी से दड
बसा दिया न्यारा नौ खड
राजा पिथु हुयो अवतार॥४२॥

पचीजे दुह दुह कर निकाळ्ये सार
जिनमे नाज निपज्या चार।
गेहू चावल जौ ज्वार
जीवा के ताईं कियो इलाज॥४३॥

ऐसा होग्या राजा कासव
ऐसा होग्या राजा बासक।
तीन देवा ने सूपी माया
यारा न्यारा घधे लगाया॥४४॥

देखो ना सिद्धा की ठकुराई
कहे रिख खीवण सुनो रे भाई।
रचना तो आपों आप
अलख पुरूस ने रचाई॥४५॥

लिखमसी माली कृत रिखा की आगवाण

सत विस्वास सदा रिख सीधा
जुगा जुगा रिख अगवाण हुवा।
अमर जोत रिखा घर माही
सत ही सत बाके नासत नाही॥टेर॥

पहली म्हारो साहब स्रस्टि ठपाई
सात सायर आठों मुलतान।
सत की तणी मेघ रिख झली
कन्या कवारी दीन्हीं दान॥१॥

सतजुग में प्रह्लाद सरियादे
प्रगी रिख की लाग्या लार।
मेघ रिख सत सब्द झिलायो
पाच क्रोड प्रह्लाद की लार॥२॥

राजा हरिचद राणी तारादे
गाछा विलोचद गुरू निवाज।
रिख ऊंकारजी सबद झिलायो
सात करोड हरिचद की लार॥३॥

नरहर गुरू का पुत्र दुरवासा
कुता पाडू लाग्या लार।
सत का सब्द दिया रिख राजा
नौ करोड ले उतरिया पार॥४॥

गुरू अंत्र रिख राजा बळिचद
चित मन बुध कीन्हा विसतार।
जुगा जुगा रिख सब्द झिलाया

बारह करोड उतरिया पार ॥५ ॥

राजा अजेसिंह ताल खणाया
नीर न निकल्यो एकण धार।
मेघ महाचद काया होमी,
धुव लग नीर भरे पणिहार ॥६ ॥

रणसी आगे खीवण रिख सीधा
परच्या दिया दिल्ली के माय।
सत का क्रोत लिया सिर ऊपर
दूध फूल निकल्या देह माय ॥७ ॥

रामदेवजी आगे डालीबाई सीधा
गुफा खुदी धणिया हितकार।
दे परच्यो पडदो बाई लीन्हों
पीछे पडदो सत अवतार ॥८ ॥

रूपा माल आगे धारू रिख सीधा
जमलो जगायो धारू के द्वार।
सातों जीव स्वरग में पूगा
सत परवाने उतरिया पार ॥९ ॥

कुहोलगढ राणो कुभाजी होता
नराणा पाचारी लाग्या लार।
जमा जगाया धणिया ने ध्याया
सत रिख भक्ति उतरिया पार ॥१० ॥

गुरु खींवण जस गावे माली लिखमो
रुजमों देख्यो रिखा के माय।
पडदे भक्ति पकाई म्हारा दाता
खूब फली वा निरफळ नाय ॥११ ॥

चलत - धिन धिन गुरु सत जन धिन है
धिन धिन पथ कहाणा हो।
समरथ गुरु सेविया रूपा
सब ही काज सराणा
हुया परवाणा हो ॥१२ ॥

अनत सता के सरणे आया
गुरु चरणा चित दीन्हा हो।

हरीसरणे भाटी हरिनंद गेल्या
यूं परमारथ चीन्हा
पथ है झीणा हो ॥१३॥

टेर - बधियो धरम मालजी रे द्वार
हुया सुनाथ परण मिळ चार,
गुरु मुख सब होग्या।
हुई सीख सब देव द्वार
साधु जन बोले जै जै कार
आनद सद होग्या ॥१४॥

रूपा धारू री लीन्ही मलख सुधार
धिन धिन "पाचो" जगदीस जुहार
सरणे सुख पाया।
भूल चूक सज्जन लीज्यो सुधार
"पीरदान" गावे प्रेम लगार
सरणे राका ॥१५॥

सौजन्य स्वामी गोकुलदास,
नारायण पावाणी पीरदान दूमाडा।

(२१)

रूपादे री कथा

पहले जनम में थी वो लालर
मालदेव से मेळो कियो।
दूजे जनम में भदोजी घर
रूपादे जी जनम लियो ॥टेर॥

रूपादे भदोजी री धीवड़ी रूपादे जी नाम
भगती की भगवान् की तो अरस परस भगवान।
अरस परस भगवान जाणे जाणे दुनिया सारी
क्षत्रिय कुळरे मायने गाव दूधवे अवतारी ॥१॥

पाट बचाकर चालजो
तुम सुन लो घोड़ेवाळा।
पाट किया प्रेम से मैं तो
रटू रामदेव री माळा ॥२॥

पहले जनम में.. ..
नौकर वासू चालियो जी
गयो रूपादे ताई।
मैं हू नौकर मालदेव को
रहू मेहवागढ माही ॥३॥

मालदेव घोडाने लेकर
गया रूपादे ताई जी।
पीवत पाणी अत न अन्यो
मन में होयो हुलास जी ॥४॥

मल्लीनाथ किणरी कहीजो धीवडी
काई जी थारो नाम जी।
किण कुळ माही जग्मो पायो
कौण कहीजे गाम ॥५॥

रूपादे भदरोजी री बेटी कहीजू,
रूपा म्हारो नाम।
छत्री कुल में जनम लियो
इण ही दूधवे गाव ॥६॥

मल्लीनाथ गालो मुख सू यों कहे
सुण भदरा जी बात।
इण समै मैं ब्याव करूला
तो इण कनिया के साथ ॥७॥

मालदेव सग होया रूपादे
आया मेहवा माही जी।
हरस हेत कर गळे लगाया
घर घर खुसिया छायी जी ॥८॥

चद्रावळ-प्रेम भाव आपस रो टूटो
म्हाने सुहावे नाही।
नीच घरा घर जमा जगावे
जावे सत सग माही ॥९॥

धारू- मैं तो गुरासा रे पाय लागू,
मन में हरसाऊं।
म्हारा सतगुरु दीन दयाळ
चरणा मे चित लागू ॥१०॥

उगमसी कलियुग माही साचा देव
केवे बीरा धारू रे।
निस दिन भज लो प्रेमसू,
जमलो जगावो साचे नेमसू ॥११॥

रामदेव रो जमलो जगावो
सिंवरो सासो सास।
गुण गावो और रात जगावो
जमलो जगावो साचे नेमसू ॥१२॥

ओ बीजने थावर रो आछो वार आवे
धणिया रो जमलो जगावजो।
नवनाथ सिध बुलावो और बुलावो रामजा
बाई रूपाने आखा देवणा ॥१३॥

हो लेने तदूरो भाझल रात रो
निकळजो बीरा धारू।
भगवो भेस बणाय थू तो
निकळजो बीरा धारू ॥१४॥

कावळिया में आखा थू तो
बाध लीजे बीरा धारू।
महला माही अलख जगाइजे
थू तो बीरा धारू ॥१५॥

धारू- धारू म्हारो नाम उगमसी रो चेलो
गुरु आग्या सू आयो म्हारी बाई।
बीज थावरीरो जमलो जगावा
आखा जमे रा लायो हू ॥१६॥

रूपादे अरे नागराजा के थाने आई नींद नैणा में
काई थू भूल गयो आणो।
रूपादे थारी बाट निहारी
आज जमला में जाणो जो ॥१७॥

आस पास में अथग जळ भरियो
दीखत नाही किनारो।
बीच में रस्तो देख्यो रूपादे
तो दियो रामदेव सहारो जी ॥१८॥

रूपादे जमले में पहुच्या
लियो तटुरो हाथ।
उगमसी से आग्या लीनी
गुण गोविद रो गात ॥१९॥

हाथ दुसाले घालता
नाग करी फणकार।
राजा डरकर भागियो
झाझर री झनकार ॥२०॥

बनमें रस्तो रोकियो
रावळ मालदे आय।
रात कठे राणी गया
कह दो हाल-सुणाय ॥२१॥

मल्लीनाथ पैलो बाग कहीजे मेडते
दूजो मडोवर माय।
तीजो कहीजे आबू पाड
चौथो गढ मुलतान ॥२२॥

रूपादे अबला री या बिणती
सुणियो रामा पीर।
कोपियो रावळ मालदे
आवो बधावो धीर ॥२३॥

मल्लीनाथ धन्न धन्न रे राणी थाने
तू भगती करी अपार।
धिन धिन नाथ मोहि दरसन दीन्हा
तो लीजो दीन उबार ॥२४॥

रूपादे दोहरो पथ बैराग रो
महणो खाडे री धार।
राज सम्हालो म्हारा सायबा
न्हीं जाणो भगती रो सार ॥२५॥

ओ जी रूपादे जी चाल्या वा से
पहर भगवा भेस।
अे मालदेवने लाया सता पास रे॥
अरजी सुणानु दाता आपने

ओ तो जीव अग्यानी अनाडी
दो साचो उपदेस ॥२६ ॥

मल्लीनाथ सिर दोनों का हस रिया रे
राणी और पूत।
राजा डर करी भागियो
मैं तो हो गयो भूव ॥२७ ॥

बालीनाथ अरे कौन दिसा सं भागो आयो
इतो कई मन घबडाओ जी।
के कोई भूत पिसाच डरायो
के कोई कस्ट सतायो ॥२८ ॥

मल्लीनाथ ओ म्हारे घर आज गुरुजी
उगमसीजी पधारिया।
पूजा कीनी पाट पुरायो
गुरुजी रो हुकम उठायो ॥२९ ॥

बालीनाथजी चाल्या वा सू,
ले राजाने साथ।
पूरण मेहर भई सतगुरु की
सिर पर धरियो हाथ ॥३० ॥

गुरु सेवारो नेम झालियो
मालदे रा मल्लीनाथ कैवाय ॥
पूजा कीनी पाट पुराया
सुरपुर अंत सिधाया ॥ ३१ ॥

मल्लीनाथ ओ म्हारा सतगुरु दया विचारी
चरण कमळ में राखियो
म्हारो सकट निवारो जी ॥टेर ॥

पाप की पोट हुती सिर ऊपर
मरता भारी जी।
कर क्रपा गुरु दरसन दीन्हा
सिर पर धारी जी ॥३३ ॥

जो म्हारा अवगुण देखो
तो आवे नहीं पार जी।
जप तप परत तीरथ नहीं जाणू
नहीं नेम अचारो जी ॥३४ ॥

जाऊं म्हारा सतगुरु ने बलिहारी
बंधन काट कियाजीव मुकता
सारी विपद निवारी ॥[१]

सौजन्य हनुमानसिंह इंदा

(२२)
गीत रावळ मल्लीनाथ सळखाऊत मालाणी रौ

(गीत सपखरौ)

प्रथी देसातप मुरधरा अबेरा बडेरा पीरा
सूरवीरा मुरा च्यारा पैकम्बरा साथ।
सगरा अम्मरापुरा करा जोड माने सेव
नरा अहीपुरा सुरा दीपै मलीनाथ॥१॥

दरवेस नरेस थाट सुरेसले माने तुझ
महेस दिनेस तू ही देव तू मुरार।
प्रवेस तैंतीस क्रोड असदेव तुहा प्रभु
दसौं देसा तणा जीता माल रै दुवार॥२॥

सहसोई कळा भाळ त्रिमळा विराजे मूर
वळीवळा अणकळा प्रघळा बखाण।
जळाहळा दीपमाळा अप्रला जागै जोत
ऊजळा पखा री बीज माळो भाण॥३॥

नवे महा सेवा तूझ नवै कुळी सेवै नाग
नवा नाथा सिरै नाथ नवे खडा नाम।
नवे ही पवन्ने खडा नवे नैह आगे नीत
सता नवे निध देवै महेवा रो साम॥४॥

(२३)
गीत रावळ मल्लीनाथ सलखाऊत रो

पाट महाजेन चौक पूरायौ
माहह मगळाचार।
वेहावौ च्यारे महासतिया
बधाय ल्यो काय रावौ॥

ओ तो जीव अग्यानी अनाडी
दो साचो उपदेस ॥२६॥

मल्लीनाथ सिर दोनों का हस रिया रे
राणी और पूत।
राजा डर करी भागियो
मैं तो हो गयो भूत ॥२७॥

बालीनाथ अरे कौन दिसा से भागो आयो
इतो कई मन घबड़ाओ जी।
के कोई भूत पिसाच डरायो
के कोई कस्ट सतायो ॥२८॥

मल्लीनाथ ओ म्हारे घर आज गुरुजी
उगमसीजी पधारिया।
पूजा कीनी पाट पुरायो
गुरुजी रो हुकम उठायो ॥२९॥

बालीनाथजी चाल्या वा सू,
ले राजाने साथ।
पूरण महर भइ सतगुरु की
सिर पर धरियो हाथ ॥३०॥

गुरु सेवारो नेम झालियो
मालदे रा मल्लीनाथ कैवाय॥
पूजा कीनी पाट पुराया
सुरपुर अत सिधाया॥ ३१॥

मल्लीनाथ ओ म्हारा सतगुरु दया विचारी
चरण कमळ में राखिया
म्हारो सकट निवारी जी ॥टेर॥

पाप की पोट हुती सिर ऊपर
मरता भारी जी।
कर क्रपा गुरु दरसन दीन्हा
सिर पर धारी जी ॥३३॥

जो म्हारा अवगुण देखो
तो आवे नहीं पार जी।
जप तप परत तीरथ नहीं जाणू
नहीं नेम अचारी जी ॥३४॥

जाऊं म्हारा सतगुरु ने बलिहारी
बधन काट कियाजीव मुकता
सारी विपद निवारी ॥[१]

सौजन्य हनुमानसिंह इदा

(२२)
गीत रावळ मल्लीनाथ सळखाऊत मालाणी रौ

(गीत सपखरौ)

प्रथी देसातरा मुरधरा अबैरा बडेरा पीरा
सूरवीरा मुरा च्यारा पैकबरा साथ।
सगरा अम्मरापुरा करा जोड माने सेव
नरा अहीपुरा सुरा दीपै मलीनाथ ॥१॥

दरवेस नरेस थाट सुरेसले माने तुझ
महेस दिनेस तू ही देव तू मुरार।
प्रवेस तैंतीस क्रोड असदेव तुहा प्रभु
दसौं देसा तणा जोवा माल रै दुवार ॥२॥

सहसौई कला भाळ त्रिमळा विराजे सूर
वळौवळा अणकळा प्रघळा बखाण।
जळाहळा दीपमाळा अप्रला जागै जोत
ऊजळा पखा री बीज माळो भाण ॥३॥

नवे महा सेवा तुझ नवे कुळी सेवै नाग
नवा नाथा सिरै नाथ नवे खडा नाम।
नवे ही पवन्ने खडा नवे नैह आगे नीव
सता नवे निध देवै महेवा रो साम ॥४॥

(२३)
गीत रावळ मल्लीनाथ सलखाऊत रो

पाट महाअेन चौक पूरयौ
माडह मगळाचार।
तेडावौ च्यारे महासतिया
बधाय स्यो काय रावौ ॥

ओ तो जीव अग्यानी अनाडी
दो साचो उपदेस ॥२६॥

मल्लीनाथ सिर दोनों का हस रिया रे
राणी और पूत।
राजा डर करी भागियो
मैं तो हा गयो भूत ॥२७॥

बालीनाथ और कौन दिसा से भागा आयो
इतो कई मन घबडाओ जी।
के कोई भूत पिसाच डरायो
के कोई कस्ट सतायो ॥२८॥

मल्लीनाथ ओ म्हारे घर आज गुरुजी
उगमसीजी पधारिया।
पूजा कीनी पाट पुरायो
गुरुजी रो हुकम उठायो ॥२९॥

बालीनाथजी चाल्या वा सू,
ले राजाने साथ।
पूरण मेहर भई सतगुरु की
सिर पर धरियो हाथ ॥३०॥

गुरु सेवारो नेम झालियो
मालदे रा मल्लीनाथ कैवाय॥
पूजा कीनी पाट पुराया
सुरपुर अंत सिधाया॥ ३१॥

मल्लीनाथ ओ म्हारा सतगुरु दया विचारी
चरण कमळ में राखियो
म्हारो सकट निवारी जी ॥टेर॥

पाप की पोट हुती सिर ऊमर
मरतां भारी जी।
कर क्रपा गुरु दरसन दीन्हा
सिर पर धारी जी ॥३३॥

जो म्हारा अवगुण देखो
तो आवे नहीं पार जी।
जप तप व्रत तीरथ नहीं जाणू
नहीं नेम अचारी जी ॥३४॥

जाऊं म्हारा सतगुरु ने बलिहारी
बधन काट कियाजीव मुकता
सारी विपद निवारी ॥[१]

सौजन्य हनुमानसिंह इदा

(२२)

गीत रावळ मल्लीनाथ सळखाऊत मालाणी रौ

(गीत सपखरौ)

प्रथी देसातरा सुरपरा अवैरा बडेरा पीरा
सूरवीरा सुरा च्यारा पैकम्बरा साथ।
सगरा अम्मरापुरा करा जोड माने सेव
नरा अहीपुरा सुरा दीपै मलीनाथ ॥१॥

रवेस नरेस थाट सुरेसले माने तूझ
महेस दिनेस तू ही देव तू मुरार।
प्रवेस तैंतीस क्रौड असदेव तुहा प्रभु
दसौ देसा तणा जीता माल रै दुवार ॥२॥

सहसोई कळा भाळ त्रिमळा विराजे सूर
मळोवळा अणकळा प्रघळा बखाण।
जळाहळा दीपमाळा अप्रला जागै जोत
ऊजळा पखा री बीज माळो भाण ॥३॥

नवै ग्रहा सेवा तूझ नवै कुळी सेवै नाग
नवा नाथा सिरै नाथ नवे खडा नाम।
नवे ही पवन्ने खडा नवै नैह आगे नीत
सता नवे निघ देवै महेवा रो साम ॥४॥

(२३)

गीत रावळ मल्लीनाथ सलखाऊत रो

थाट महाअेन चौक पूरायौ
माडह मगळाचार।
तेडावौ च्यारे महासतिया
बधाय स्यो काय रावौ ॥

म्हारै आज मिंदर रळियावणौ लागै
धणी म्हारौ आय जुमे बैठो ॥
बाबो आय बैठो हसि बोळै मीठो
जब लग दास तुम्हारों हू।
बाबो दोहडा डोहेला टळिसै
सेव करा पाय लागौ ॥
बाबा रेणायर में रतन नीपजै
बैरागर में हीरा।
खार समद में मीठी बेरी
इहडी सायिब घर लीला ॥
कोप मछर मनडा रा मेलौ
काम करौ घर रूडा।
देख अभ्यागत घर आवै तो
तैनें सीस नाणौ कर जोडा ॥
अेक बिरख नव डालडिया
बाबौ परगटियो पड माहे।
कहै कुतुबदीन सुण रावळ माला
अलख निरजण थाहे ॥

(२४)

गीत राणी रूपादे जी रौ
(गीत वडौ साणौर)

असी न कोई चीतौड सीसोदिया आगणै
जिनका कोरम घरै न कौ जाणी।
आ हुई मालरै महेवै अरधगा
रूपादे राणिया सिरै राणी ॥१ ॥

जाम लाखै तणी जगळ नहीं जिका
मात बाळै तणी जीववा मीढ।
धिनौ सत बदरी सपूतर सगत घरै
अवर पैंतीस बस न आवै ईढ ॥२ ॥

दना परचौ दियौ राह जाणै दुनी
जमै रावळ मरम बात जाणी।

परो ओछाड कर नजर सू पेखता
आपरी कळा तहतीख आणी ॥३ ॥

सळख सुत जाडिया पाण देखत सभा
दियौ सत ग्राहियौ विसौ उपदेस।
तळा लगै राज माला तणै महेवै
सूरचद जिमि जहा लग सपर सेस ॥४ ॥

बडा कमधा घरै रा आगण विराजै
घणा भागा उसर छ खड घण थाय।
इण कळू बिचाळे माल रूपा अचळ
जोत सह देव होवै परस जाय ॥५ ॥

सौजन्य - सोभाग्यसिंह शेखावत, मालानी के गौरव गीत,
राणी भटियाणी ट्रस्ट, जसोल,१९९२ पृ १८ १९

(२५)

दूहौ रावळ मल्लीनाथ रौ

जै थानक लीधौ जलम
माल जसै महवेच।
नर अवतारी नीपजै
खत्रवट भड खेडेच ॥१ ॥

सौजन्य सौभाग्यसिंह शेखावत
मालाणी के गौरव गीत राणी भटियाणी ट्रस्ट जसोल १९९२ पृ २८९

(२६)

श्री मेघ धारूनी वाणी

(श्रीरामदेव पीरना समयमा हरिजन मेघवाळ सत
थया अने मारवाड मा थया हता)

चाव्क आव्या गुरुजीना देसना जो
रूपादे राणी जमले पधारो जी।
केम आवु गुरु मारा अेकली जो रे
सुतो मालजी जागेजी रे ॥१ ॥

निंद्रा मागवु सारा सहेरनी जी
ऊमर अम्मर पछेडो ओढाडी जी रे।
सोडमा सुवाड्‌ वासगी नाग ने रे
खूण खाट ढळावु जी रे॥२ ॥

बाके वाळे मोती परोवीयाजी रे
तीलडी चोढी ललाट रे जी।
थाळ भरियो रे सग मोती अे रे
रमझम करता चालीया रे॥३ ॥

त्याथी रूपादे राणी चालीया रे
आव्या दोडी ने दरवाजे रे।
भाई परोलीया चौरा वीनवु जी रे
तू तो सुतो छो के जागे छे रे॥४ ॥

काक सुतो काक जागया रे
राणी तमे कहडे पधारो जी।
व्रत रहिया अमे अेकादसीना जी रे
ईस्वर पुजवा जावु जी रे॥५ ॥

ताळा जडाव्या सारा सहेरना
कुची मालाने दरबारजी रे।
ऊभी रही सती अे अलखने आराधयो रे
खडग मारी खोली बारी रे॥६ ॥

त्याथी रूपादे राणी चाल्या रे
आव्या धणीना दरबार रे जी।
अलख बधाव्यो साचा मोतीयो जी
सोनैयो आपी पधारव्यो जी॥७ ॥

सऊ गतने हरि हर मारा रे
गुरुजी ने प्रणामा हो जी।
आव्या रूपादे राणीजी र
जळहळ ज्योंतु दर्शाणी जी र॥८ ॥

चद्रावळी ज्ल्या महोले
सुतो मालाजी ने जगाडीयो जी।
ठठो राणा ठठो राजिया रे
राणी अ राज अभडाव्या रे॥९ ॥

झडप दईने मालाजी जागीया रे
सेठमा वासगी नाग घुघवायोरे।
करडयो छता ऊगर्यो रे
चद्रवळी आपणे भागीजे रे ॥१० ॥

खडग खाडु लीधु हाथमा रे
मालदे क्रोध काया हो जी।
जोया मदिर ने जोया माळीया रे
जोया घोडानी घोडसरू रे ॥११ ॥

त्याथी रावळ मालो चालीया रे
आव्या दोढी ने दरवाजे रे।
भाई परोळीया विनवुजी रे
राणी ने जाता ते जाणी रे ॥१२ ॥

काक सुतो काक जागीयो रे
मुझने खबर नथी रे।
कोप करीने माले खाडु फेरव्यु रे
भोळीया ने भोळ उघाडीयु रे ॥१३ ॥

त्याथी रावळ मालो चालीया रे
आव्या रूखी (ब) ने दुवार रे।
पाछली पछीते चडीयो जी रे
नजरे भाली राणीजी ने रे ॥१४ ॥

आपण सहरमा नहीं कोई नुगरो रे
मालदे पधारिया हो जी रे।
बहारेथी मोजडीयु रे उघाडयु रे उपाडयु रे
मालदे त्याथी चाल्या रे ॥१५ ॥

सऊ गततो हरिने समरे रे
मारा गुरूजी ने प्रणाम होजो रे।
गुरु महारा देव देवगी रे
पगनी मोजडी दे राणीजी रे ॥१६ ॥

सहु गततो अलख आराध्यो रे
स्वरगथी मोजडी उतारी जी।
ल्यो रूपादे पेरो मोजडी रे
कई वेण कहेराव्या रे ॥१७ ॥

त्याथी रावळ मालो चाल्यारे
अे तो भ्रोळीयाने मारियो जी रे।
सौखु मागी रूपादे चालीया रे
आव्या दोढीने दरवाजे रे॥१८ ॥

ऊभा रही अलख आराध्यो रे
भ्रोळीयाने सजावन कीधो जी।
साकडी सेरी मा मालदे सामो भळीयो रे
सतिनो छेडलो झाल्यो जी॥१९ ॥

रात अधारे आखो लुबे झुबे झुले जी
राणी तमे कठडे पधारिया जी।
व्रत एकादसीना जी रे
ईश्वर पुजवा गीयाता रे॥२० ॥

आपणा सहेरमा नहीं फुलवाडीमु रे जी
ढोलने ढमके पाणी जी रे।
पहेली वाडी आबु सहेरमा
बीजी गढ गीरनार रे॥२१ ॥

त्रीजी धणीना चोकमारे
चोथी थाळीमा ठेराई रे।
झडप लईने माले छेडला ताणीयो रे
फुलड छाबु मराणा रे॥२२ ॥

जेरे मारगडे तमे गया हता जी रे
त पथ अमुने बतावा रे।
अे पथ मालदे दोहीला रे
खेलवु खाडा केरी धार रे॥२३ ॥

पहेलो मार मोभी डीकरो र
बीजे हसलो घोडा हो जी रे।
त्रीजे मार कनळी केरो वाछडो रे
चोथी चद्रवळी राणी जी रे॥२४।

चार मस्तक लई आवजो रे जी
त्यारे राजा अे पथ बतावु रे।
त्याथो रावळ मालो चालीया रे
आव्या पोताने महेल नी माहो ॥२५ ॥

चार मस्तक वाढिया रे
आव्या रूपादे नी पास रे।
त्याथी रूपादे मालो चालीया रे जी
आव्या धणी तणा दुवार रे॥२६ ॥

गुरु मारा रे देवची रे
मोटो भूप तमे नमाव्यो रे।
सरवे गतने हरोहर जी रे
मालाना काकण भरीया रे॥२७ ॥

पहेलो जीवाडयो मोभी डीकरो रे
बीजे हसलो घोडो हो जी रे।
त्रीजे जीवाडयो कवळी केरा वाछडो रे
अेनी माताने धावे रे॥२८ ॥

चोथी जीवाणी चद्रावळी राणी जी रे
अे तो हरिनी आरती उतारे रे।
चले भल्या गुरु मेघ धारू रे
मुवा सजीवन कीधा रे॥२९ ॥

मुवा सजीवन कीधा रे
गाय सीखे सुणे सामळे रे।
वैकुण्ठमा अेनो वासो रे
मेघ धारू अेम बोलीया रे।
सतोनो वैकुठमा वास होसे जी रे॥३० ॥

श्री राजयोगवाणी, पृ १७८ १८०
सपादक प्रकाशन भगत श्री रामजी हीरसागर
तिलक प्लोट शेरी न २
कृष्ण सोनेमा पाछण राजकोट १
(सौराष्ट्र गुजरात राज्य)

त्यांथी रावळ मालो चाल्यांरे
अे तो प्रोळीयाने मारियो जी रे।
सीखु मागी रूपादे चालीया रे
आव्या दोढीने दरवाजे रे॥१८॥

ऊभा रही अलख आराध्यो रे
प्रोळीयाने सजावन कीधो जी।
साकडी सेरी मा मालदे सामो मळीयो रे
सतिनो छेडलो झाल्यो जी॥१९॥

रात अधारे आखो लुबे झुबे झुले जी
राणी तमे कठडे पधारीया जी।
व्रत एकादसीना जी रे
ईश्वर पुजवा गीयाता रे॥२०॥

आपणा सेहेरमा नहीं फुलवाडीयु रे जो
ढोलन ढमके पाणी जी रे।
पहेली वाडी आबु सहेरमा
बीजी गढ गीरनार रे॥२१॥

त्रीजी धणीना चोकमारे
चोथी थाळीमा ठेराई रे।
झडप लईने माले छेडला ताणीयो रे
फुलडे छाबु भराणी रे॥२२॥

जेरे मारगडे तमे गया हता जी रे
ते पथ अमुने बतावो रे।
अे पथ मालदे दोहीला रे
दोलवु खाडा करी धार रे॥२३॥

पहेलो मार मोभी डीकरो र
बीजे हसलो घोडा हो जी रे।
त्रीजे मार कनळी करो वाछडा रे
चोथी चद्रवळी राणी जी रे॥२४।

चार मस्तक लई आवजो रे जी
त्यारे राजा अे पथ बतावु रे।
त्यांथी रावळ मालो चालीया रे
आव्या पाताने मेरेल नो मारो ॥२५॥

चार मस्तक वाढिया रे
आव्या रूपादे नी पास रे।
त्याथी रूपादे मालो चालीया रे जी
आव्या घणी तणा दुवार रे॥२६ ॥

गुरु मारा रे देवची रे
मोटो भूप तमे नमाव्यो रे।
सरवे गतने हरोहर जी रे
मालाना काकण भरीया रे॥२७ ॥

पहेलो जीवाडयो मोमी डीकरो रे
बीजे हसलो घोडो हो जी रे।
त्रीजे जीवाडयो कवळी केरा वाछडो रे
अेनी माताने धावे रे॥२८ ॥

चोथी जीवाडी चद्रावळी राणी जी रे
अे तो हरिनी आरती उतारे रे।
चले भल्या गुरु मेघ धारू रे
मुवा सजीवन कोधा रे॥२९ ॥

मुवा सजीवन कीधा रे
गाय सीखे सुण साभळे रे।
वैकुण्ठमा अेनो वासो रे
मेघ धारू अेम बोलीया रे।
सतोनो वैकुठमा वास होसे जी रे॥३० ॥

श्री राजयोगवाणी, पृ १७८ १८०
सपादक प्रकाशन भगत श्री रामजी हीरसागर
तिलक प्लोट शेरी न २
कृष्ण सीनेमा पाछण राजकोट १
(सौराष्ट्र गुजरात राज्य)

(२७)

धणिया ग नाव जपा
मालजी धम कर हालो हो जी
जीवड़ा थाहा
म्हारो यो पथ खाडै री धार हो जी॥टेक॥

राणी रूपादे जमलै पधारिया
मालै मारग बाध्या
हाथ खडग दुधारो खाडो
बाण अपूठा साध्या॥१॥

जोर करा म्हारा जोर न चालै
थायर हाथ न आवै।
मालो पूछै राजपदमणी
पथलो काय कुहावै॥२॥

म्हारै गुरा को यो मारगियो
छिप्या रवै ना छानो।
निज पथ बैठया नाव जपागा
पूजा अलख रा बानो॥३॥

राणी रूपादे परचो दीन्यों
परचै राव पतीज्या।
थाळी में अेक बाग लगायो
नैणा फुलडा दीज्या॥४॥

बार सुबरणा मेळा बैठया
जद म्हे नैणा दीठा।
करी रसोई पान मिठाई
जीम्या मेवा मीठा॥५॥

इण पथडै राजा हरिचद सींझ्या
बा रा कोड बुलाया।
जाट रूपसीं भणै अलख नैं
अमीं कटोरा प्याया॥६॥



(२८)
अथ वात राव सलखेजीरी

राव सलखेजीरै पुत्र नही सु एक दिन सिकार पधारिया तद दूर पधारिया अर असवारी हुती सु सर्व वासै रह गई। अर आप सिकारै वास्तै एकल असवार कोस ४ तथा ५ आगै पधारिया। सु तृखा लागी। तद जळरी ठोड जोवण लागा। तद आगै दरखतारो झाडो दीठो तठै पधारिया। तद वळै देखै तो एकै ठोड धुवो नीसरै छे। तठै पधारिया। ठठै देखै तो तपस्वी १ जोगी रावळ बैठो छै। ठठै जाय ऊभा रह्या नै जोगीरै पगै लागा। तद जोगी कह्यो बाबा ! थारी किसी ठोड? तद कह्यो बाबाजी ! हू सिकार आयो थो सु म्हारो साथ वासै रहि गयो। र हू सिकारै वासै लागो थको आगै आय नीसरियो। सु म्हनै तृखा लागी छै सु पाणी पावो। तद जोगी कह्यो इयै कमडळ माहि पाणी छै थे पीवो अर घोडो त्रिसियो हुवै तो घोडानू ही पावो। पछै सलखैजी आप ही पीयो अर घोडैनू ही पायो। पण कमडळ खाली नहीं हुवो तद सलखैजी दीठो जु ओ अतीत सिद्ध। तद आप अरज कीवी। और तो सर्व थोक छै पण म्हारै पुत्र नही छै। तद सिद्ध मेखळी माहै हाथ घातनै गोटो १ बभूतरो सोपारी ४ काढ दीवी। ओ बभूतरो गोटो राणीनू देई तैरै वडो पुत्र हुसी। तैरो नाम मलीनाथ कादे। और च्यार पुत्र बीजा हुसी। वडे बेटेनू टीका देई। तद पाछा घरे पधारने जे भात जोगी कह्यो हतो तै भात राणियानू बभूतरो गोटो सोपारिया विहच दीवी। पछै कितरैके दिने पुत्र हुवो। फेर ४ पुत्र बीजा हुवा। पछै कितरैके दिने वडे बेटेनू टीको दियो। जोगीनू बोलाय जोगीरा आभरण पैहराय रावळ मलीनाथ नाम दियो। पछै सुख सौं राज कियो। तपो बळी हुवो।

॥ वात राव सलखैजी री सपूर्ण ॥



(२९)
कवित्त मालाणी रो

जैसलमेरु सुमेरु बनाय कै दूदा तिलोक मरे रन रत्ता।
सातल सोम सिवाने मरे रिपुसेन पै दै कै कराकर कत्ता॥
वक कहै कबहू नहि जाय चहू जुगलौं थिर नाम की सत्ता।
गौरा औ बादल जूझे चितौर पै ऐसै ही जूझे हैं जैमल पत्ता॥१॥

रावल माल कौ तेज निहार कै मेच्छन के मुष होत हैं पीरे।
होत जगा अति आछे तुरगम हीर की षान में होत ज्यू हीरै॥
लोक मजीठ के रग रगे जित ओढत ग्रीषम में पट सीरे।
लौनी बरैरु लसै थल-तुग महेवे सुधारस होत मतीरे॥२॥

(२७)

धणिया रा नाव जपा
मालजा धम कर हालो हो जी
जीवडा थोडा
म्हारो यो पथ खाडै री धार हो जी ॥टेक॥

राणी रूपादे जमलै पधारिया
मालै मारग बाध्या
हाथ खडग दुधारो खाडो
बाण अपूठा साध्या ॥१ ॥

जोर करा म्हारा जोर न चालै
बायर हाथ न आवै।
मालो पूछै राजपदमणी
पथलो काय कुहावै ॥२ ॥

म्हारे गुरा को यो मारगियो
छिप्यो रवै ना छानो।
निज पथ बैठया नाव जपागा
पूजा अलख रो बानो ॥३ ॥

राणी रूपादे परचो दीन्यों
परचै राव पतीज्या।
थाळी में अेक बाग लगायो
नैणा फुलडा दीख्या ॥४ ॥

बार सुबरणा भेळा बैठया
जद म्हे नैणा दीठा।
करी रसोई पान मिठाई
जीम्या मेवा मीठा ॥५ ॥

इण पथडै राजा हरिचद सीझ्या
बा रा कोड बुलाया।
जाट रूपसीं भणै अलख नैं
अमीं कटोरा प्याया ॥६ ॥



(२८)
अथ वात राव सलखैजीरी

राव सलखैजीरै पुत्र नहीं सु एक दिन सिकार पधारिया तद दूर पधारिया अर असवारी हुती सु सर्व वासै रह गई। अर आप सिकाररै वास्तै एकल असवार कोस ४ तथा ५ आगै पधारिया। सु तृखा लागी। तद जळरी ठोड जोवण लागा। तद आगै दरखतारो झाडो दीठो तठै पधारिया। तद वळै देखै तो एकै ठोड धुवो नीसरै छे। तठै पधारिया। उठै देखै तो तपस्वी १ जोगी रावळ बैठो छै। उठै जाय ऊभा रह्या नै जोगीरै पगै लागा। तद जोगी कह्यो बाबा ! थारी किसी ठोड? तद कह्यो बाबाजी ! हू सिकार आयो थो सु म्हारो साथ वासै रहि गयो। र हू सिकाररै वासै लागो थको आगै आय नीसरियो। सु म्हनै तृखा लागी छै सु पाणी पावो। तद जोगी कह्यो इयै कमडळ माहि पाणी छै थे पीवो अर घोडो तिसियो हुवै तो घोडानू ही पावो। पछै सलखैजी आप ही पीयो अर घोडैनू ही पायो। पण कमडळ खाली नहीं हुवो तद सलखैजी दीठो जु ओ अतीत सिद्ध। तद आप अरज कीवी। और तो सर्व थोक छै पण म्हारै पुत्र नहीं छै। तद सिद्ध मेखळी माहै हाथ घातनै गोटो १ बभूतरो सोपारी ४ काढ दीवी। ओ बभूतरो गोटो राणीनू देई तैरै वडो पुत्र हुसी। तैरो नाम मलीनाथ काढे। और च्यार पुत्र बीजा हुसी। वडै बेटेनू टीको देई। तद पाछा घरे पधारने जे भात जोगी कह्यो हतो ते भात राणियानू बभूतरो गोटो सोपारिया विहच दीवी। पछै कितरैकै दिने पुत्र हुवो। फेर ४ पुत्र बीजा हुवा। पछै कितरैके दिने वडै बेटैनू टीको दियो। जोगीनू बोलाय जोगीरा आभरण पैहराय रावळ मलीनाथ नाम दियो। पछै सुख सौं राज कियो। तपो बळी हुवो।

॥ वात राव सलखैजी री सपूर्ण ॥



(२९)
कवित्त मालाणी रौ

जैसलमेरु सुमेरु बनाय कै दूदा तिलोक मरे रन रत्ता।
सातल सोम सिवाने मरे रिपुसेन पै दै कैं कराकर कत्ता॥
वक्क कहै कबहू नहि जाय चहू जुगलौं थिर नाम की सत्ता।
गौरा औ बादल जूझै चितौर पै ऐसे ही जूझे हैं जैमल पत्ता॥१॥

रावल माल कौ तेज निहार कै मेछन के मुष होत हैं पीरे।
होत जहा अति आछे तुरगम हीरे की षान में होत ज्यू हीरै॥
लोक मजीठ के रग रग जिन ओढत ग्रीषम में पट सीरे।
लौंनी बहेरु लसै थल तुग मरेवे सुधारस होत मतीरे॥२॥

(३०)
कवित्त लूणी नदी रो

निकसी यह पुक्कर तें तट न्हात ही
लोकन को मिट जात बदी।
अति ऊजरौ याकौ प्रवाह चिते
वक लजात है जिस्नुरदी॥
गन भाग मुरध्धर देस बडौ
जित देषियै दूसरी विस्नुपदी।
रतनागर नागर की गज गौंनि है
निकै सुहाग सौं लौंनी नदी॥



परिशिष्ट - ३

गुजरात मे रूपादे और मल्लीनाथ—

बाबा रामदेव के समकालीन जैसल तोरलदे और कतीब शाह से मल्लीनाथ रूपादे के सम्पर्क का आख्यान करने वाली कुछ लोक कथाएँ और भजन आदि गुजरात में उपलब्ध हुए हैं। इनके आधार पर प्रस्तुत पुस्तक के प्रथम खड में दो आख्यानों का सक्षिप्त परिचय दिया गया है। पहले के अनुसार मल्लीनाथ काठियावाड के केसर मोरी की भक्ति निष्ठ कन्या रूपादे से विवाह करते हैं। इस कथा में रूपादे को कृष्णभक्त चित्रित किया गया है। कथा में उगमसी भाटी का कही उल्लेख नहीं है जागरण आदि का आयोजन धारू मेघ ही करते हैं। दूसरा आख्यान जेसल तोरल व रूपादे मल्लीनाथ परस्पर मिलने के लिए महेवा और अजार (कच्छ-भुज) से चल पडते हैं। रास्ते में एक स्थान पर इनका मिलना होता है। परिचय के बाद सतसमागम होकर रात गुजरती है। प्रात जेसल पीपली की टहनी से और मल्लीनाथ जाल की टहनी से दन्त धावन करते है। कुए के खारे पानी को रूपाद मीठा बनाती है और तोलादे वर्षा करवाकर बजर भूमि को सस्यशामला बनाती है। मल्लीनाथ और जेसल जाल और पीपल की टहनी को जमीन में रोप देते हैं। वे वृक्ष बडे होने पर उस स्थान को मालाजाल कहा जाने लगा।

कालान्तर में मल्लीनाथ जेसल तोरल को महेवा आने का निमत्रण देते हैं। जेसल अस्वस्थ थे अकेली तोरल द आयी। जागरण में जेसल के नाम से रखी ज्योति क्षीण होने लगी तब तोरल आशकित हुई और उसने तुरन्त अजार के लिये प्रस्थान किया। जेसल समधिस्थ थे। तोरल के शोक ठिकाना नहीं रहा। तब तक मल्लीनाथ और रूपादे पहुँचे। जेसल ने मल्लीनाथ को सशरीर मिलने का वचन दिया था। मल्लीनाथ ने तारल को उपदेश दिया। उसका शोक कम हुआ। तब समाधिस्थ जेसल मल्लीनाथ से मिलने बाहर आये और बाद में तोरल दे के साथ समाधि ली।

जेसल और तोरलदे के इस आख्यान ने हमें कच्छ-भुज जाने के लिये प्रेरित किया। ट्रस्ट के सौजन्य से श्री बेरीसाल सिंह पूर्व उद्घोषक आकाशवाणी जोधपुर के साथ मैं

पहुँचा। सबसे पहले तोरल जेसल की समाधि के दर्शन किये और वहाँ समाधि के साथ मल्लीनाथ रूपादे और रामदेव की मूर्तियों के दर्शन कर हमें कृतार्थता का अनुभव हुआ। अजार के मामलतदार और भुज के जिलाधीश की स्वीकृति प्राप्त कर मंदिर के कई छायाचित्र लिये। उनमें से कुछ इस पुस्तक में भी दिये है। कुछ समय तक रूपादे के मौखिक रूप में सुरक्षित पदों को गाने वाले व्यक्तियों का खोज में हम लग गये।

मदिर में प्रति दिन सायकाल को भजन गाने वाले श्री महेशजी जोशी पचायत समिति अजार के प्रयत्नों से हम कापडी बाबा सन्तराम दादा मनजी से मिले। ९८ वर्ष की उमर में उन्होंने तोरल जेसल के आख्यान का वह अश ध्वनिमुद्रित करवा दिया जो रूपादे मल्लीनाथ से सम्बद्ध है। इसी प्रकार आकाशवाणी भुज के लोकगायक श्री कान्तिलाल भाई जोशी ने भी हमें रूपादे कुछ पारम्परिक भजन दिये। तोरल जेसल से सम्बद्ध भजनों की उपलब्ध ध्वनिमुद्रिकाए भी हमने हस्तगत की। इस समस्त सामग्री का किसी न किसी रूप में प्रस्तुत पुस्तक में उपयोग हुआ है। इसीलिए हम इन सभी के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं। विशेषकर एक बात उभरकर सामने आयी कि वहा पर भी मौखिक परम्परा के गायकों की दिनों दिन कमी होती जा रही है जो अत्यधिक चिन्तनीय है।

